

MISCELLANEA  
PHILO-THEOLOGIC  
OR,  
GOD, & MAN.

*A Treatise compendiously describing  
the Nature of God in his Attributes and a lively description  
of his wisdom in ordering and disposing of the Celestiall  
and terrestriall Bodies.*

Containing much variety of Matters Theological  
and Philosophicall; wherein many secrets in Scripture, and  
in Nature, are unbowedled, with solid Prooves, and apt Appli-  
cations, singular for brevity and perspicuity.

Hereunto is added a table of those texts of Scriptures  
that are opened and expressed in this Booke.

As also an Alphabetical table of the severall  
subjects herein contained.

By HENRY CHURCH.

---

*Psalm 138.*  
I will praise thee O Lord in all thy works.

*Psalm 138.*  
O Lord, how excellent is thy Name in all the world, who hath  
Glory above the Heavens.  
When I said for the greatness of thy Name, and the strength  
of thy arm.

---

LONDON,  
Printed by A. N. for JOHN ROCHWELL, and are to be sold  
Sunne, in Pauls Church-yard. 1641.



Tand 8657.15.3\*

✓

Harvard College library  
Treat Fund  
April 12, 1939



## To the Reader.

**G**Entle Reader, we are to increate your Pardon and Patience, in setting hereunto these two Tables: the one of the Matter, the other of the Scripture; neither of which were done till now, by reason of the suddenesse of the Authors death; but now loe here they are, both for the honour of the dead, and benefit of the living. Take them in good part, as they are meant, and much good may they doe you. Moreover I pray you to note, that from the 269. page is the end of the book, there are continued the Figures which before began with a new number. Mend it we pray with your penne, And next edition (if God will) wee will mend it in the Presse.

Profit.  
Ro.Lo.

Imprimatur,  
Tho. Weekes.

**The Scriptures that are opened occasi-  
onally in this Treatise, to the number  
of one hundred fortie six.**

| <i>Gen.</i>       |          | <i>Levit.</i>       |        |
|-------------------|----------|---------------------|--------|
| Chap. 1. Vers. 2. | Pag. 41. | c. 7. v. 19. ad 32. | p. 349 |
| 16.               | p. 180.  | c. 11. v. 21. 22.   | p. 357 |
|                   | 190      | v. 43.              | p. 353 |
|                   | 201      | <i>Numb.</i>        |        |
| v. 3. 26.         | p. 293   | c. 5. v. 27.        | p. 356 |
| c. 3. v. 14.      | p. 352   | c. 14. v. 42.       | p. 354 |
| c. 4. v. 11.      | p. 239   | <i>Deut.</i>        |        |
| v. 16.            | p. 32    | c. 28. v. 48.       | p. 338 |
| c. 6. v. 6.       | p. 40    | <i>Judges</i>       |        |
| c. 9. v. 13.      | p. 225   | c. 5. v. 20.        | p. 208 |
| c. 18. v. 21.     | p. 41    | <i>1 Sam.</i>       |        |
| c. 19. v. 24.     | p. 268   | c. 15. v. 11.       | p. 40  |
| c. 24. v. 2.      | p. 355   | c. 24. v. 3.        | p. 359 |
| c. 27. v. 4.      | p. 337   | <i>Ezra.</i>        |        |
| c. 32. v. 31.     | p. 355   | c. 2. v. 63.        | p. 350 |
| c. 49. v. 6.      | p. 327   | <i>Iob.</i>         |        |
| c. 49. v. 25.     | p. 351   | c. 19. v. 27.       | p. 65  |
| <i>Exod.</i>      |          | c. 28. v. 24.       | p. 48  |
| c. 3. v. 5.       | p. 358   | c. 38. v. 26.       | p. 191 |
| c. 9. v. 23.      | p. 236   | c. 38. v. 22.       | p. 74  |
| c. 12. v. 46.     | p. 357   | c. 37. v. 18.       | p. 176 |
| c. 14. v. 20. 21. | p. 254   | c. 42. v. 2.        | p. 48  |
| c. 28. v. 30.     | p. 349   | <i>Psalms.</i>      |        |
| c. 33. v. 11.     | p. 65    | pl. 16. v. 7.       | p. 141 |
| v. 23.            | p. 348.  | v. 11.              | p. 53  |
|                   |          | v. 18.              | p. 353 |
|                   |          | pl. 17.             |        |

# Table.

|         |                  |        |        |                           |        |
|---------|------------------|--------|--------|---------------------------|--------|
| p. 17.  | v. 14.           | p. 313 | c. 32. | <i>Esa.</i>               | p. 319 |
| p. 19.  | v. 1.            | p. 177 | c. 1.  | v. 10.                    | p. 360 |
|         | v. 5.            | p. 181 | c. 3.  | v. 16.                    | p. 341 |
| p. 20.  | v. 13.           | p. 217 | c. 9.  | v. 6.                     | p. 319 |
| p. 31.  | v. 6.            | p. 78  | c. 19. | v. 7.                     | p. 348 |
| p. 37.  | v. 17.           | p. 341 | c. 38. | v. 27.                    | p. 356 |
|         | v. 26.           | p. 85  | c. 49. | v. 1.                     | p. 396 |
| p. 42.  | v. 2.            | p. 114 | c. 48. | v. 4.                     | p. 18  |
|         | v. 25.           | p. 89  | c. 51. | v. 8.                     | p. 12  |
| p. 45.  | v. 4.            | p. 356 |        | <i>Jer.</i>               |        |
| p. 50.  | v. 1.            | p. 15  | c. 9.  | v. 23.                    | p. 146 |
| p. 79.  | v. 5.            | p. 267 | c. 33. | v. 23.                    | p. 303 |
| p. 93.  | v. 1.            | p. 240 | c. 51. | v. 13.                    | p. 176 |
| p. 96.  | v. 10.           | p. 240 |        | <i>Ezechiel.</i>          |        |
| p. 98.  | v. 7.            | p. 240 | c. 36. | v. 5.                     | p. 267 |
| p. 102. | v. 27.           | p. 178 |        | <i>Dan.</i>               |        |
| p. 104. | v. 1.            | p. 145 | c. 2.  | v. 30.                    | p. 353 |
|         | v. 2.            | p. 176 | c. 12. | v. 3.                     | p. 109 |
| p. 115. | v. 2.            | p. 323 |        | <i>Hofea.</i>             |        |
| p. 119. | v. 20.           | p. 177 | c. 7.  | v. 15.                    | p. 54  |
| p. 135. | v. 7.            | p. 220 |        | <i>Micah.</i>             |        |
| p. 141. | v. 3.            | p. 123 | c. 7.  | v. 5.                     | p. 323 |
| p. 148. | v. 3.            | p. 208 |        | v. 19.                    | p. 348 |
|         | <i>Proverbs.</i> |        |        | <i>Obadiah.</i>           |        |
| c. 12.  | v. 10.           | p. 83  |        | v. 4.                     | p. 208 |
| c. 23.  | v. 23.           | p. 79  |        | <i>Zephaniah.</i>         |        |
| c. 25.  | v. 27.           | p. 147 | c. 1.  | v. 13.                    | p. 267 |
| c. 29.  | v. 1.            | p. 338 | c. 3.  | v. 3.                     | p. 89  |
|         | <i>Ecclesi.</i>  |        |        | v. 8.                     | p. 367 |
| c. 4.   | v. 17.           | p. 360 |        | <i>Malachie.</i>          |        |
|         | <i>Cant.</i>     |        | c. 3.  | v. 1.                     | p. 173 |
| c. 4.   | v. 4.            | p. 337 |        | <i>Novum Testamentum.</i> |        |
|         | v. 5.            | p. 311 |        | <i>Matth.</i>             |        |
| c. 5.   | v. 13.           | p. 358 | c. 5.  | v. 8.                     | p. 63  |
|         | v. 16.           | p. 279 |        | A 3                       | c. 5.  |
| c. 7.   | v. 4.            | p. 338 |        |                           |        |

# A Table.

|       |               |         |       |                 |       |
|-------|---------------|---------|-------|-----------------|-------|
| c.5.  | v.48.         | p.58.59 | c.4.  | v.24.           | p.295 |
| c.24. | v.12.         | p.110   | c.6.  | v.14.           | p.330 |
|       | <i>Luc.</i>   |         |       | <i>Philip.</i>  |       |
| c.14. | v.26.         | p.120   | c.3.  | v.9.            | p.353 |
| c.16. | v.24.         | p.330   |       | v.15.           | p.58  |
|       | <i>Ioh.</i>   |         |       | <i>Coloss.</i>  |       |
| c.1.  | v.18.         | p.63    | c.4.  | v.6.            | p.33  |
| c.4.  | v.14.         | p.354   |       | <i>1 Thess.</i> |       |
| c.6.  | v.66.         | p.348   | c.5.  | v.18.           | p.350 |
| c.7.  | v.18.         | p.147   |       | <i>1 Tim.</i>   |       |
| c.14. | v.6.          | p.78    | c.1   | v.17.           | p.63  |
| c.16. | v.13.         | p.78    |       | <i>Titus.</i>   |       |
| c.17. | v.3.          | p.78    | c.2.  | v.2.            | p.119 |
| c.19. | v.22.         | p.357   |       | <i>Heb.</i>     |       |
|       | v.36.         | p.357   | c.6.  | v.1.            | p.58  |
|       | <i>Rom.</i>   |         |       | v.2.            | p.18  |
| c.8.  | v.20.         | p.135   |       | <i>Iam.</i>     |       |
| c.11. | v.10.         | p.348   | c.1.  | v.6.            | p.390 |
| c.13. | v.8.          | p.24    |       | v.7.8.          | p.328 |
| c.15. | v.5.          | p.124   |       | v.17.           | p.40  |
| c.16. | v.20.         | p.359   |       |                 | p.332 |
|       | <i>1 Cor.</i> |         | c.3.  | v.15.           | p.70  |
| c.1.  | v.25.         | p.22    |       | <i>1 John.</i>  |       |
|       | [v.30.]       | p.147   | c.4.  | v.8.            | p.112 |
| c.10. | v.19.         | p.156   |       | v.18.           | p.37  |
| c.15. | v.44.         | p.207   |       | <i>Revel.</i>   |       |
|       | <i>2 Cor.</i> |         | c.1.  | v.18.           | p.28  |
| c.3.  | v.18.         | p.261   | c.2.  | v.4.            | p.120 |
|       | <i>Ephes.</i> |         | c.22. | v.16.           | p.208 |
| c.2.  | v.13.         | p.52    |       |                 |       |

FINIS.

An Alphabetical Table of all the choice  
things collected out of this *Miscellanea* of Henry  
Church, with the Scriptures which are occasional-  
ly expounded therein, to the number of 146.

**A** *Admiration: what* 111.  
112. wherein God is to  
be Admired, 112. 113. how to  
raise our Admiration of  
God, 113. 114.

*Affections: how like the  
Feet,* 360. 361.

*Aire: of its clearenesse,*  
211. Its softnesse and plia-  
blenesse, 212. Its largenesse,  
213. Its usefulnesse, 214.  
Its continuance, 215. Ma-  
ny necessary questions resol-  
ved, 217. 218.

*Angels, their nature,  
number and office,* 168.  
169, &c. the reflections  
hereof, 169. 170. divers  
errors concerning them,  
172. 173. how Christ is  
called an Angel, 173.

*Armes: Gods work in the  
Armes considered,* 339. con-  
clusions applicatorie drawne  
from them, 340. Instructi-

ons in regard of their use-  
fulnesse, 340. vid. *Shoulders*  
341.

**B** *Backe: Its Strength,* 346  
of the ridge-bone therein,  
347, 348. Resolves about  
it, 348. 349.

*Bellie: the Anatomist's re-  
lation of the Bellie,* 351.  
the names given it, 352.  
how the creeping on it was a  
curse to the Serpent, 352.  
how the gluttons belly is  
their God, 353.

*Blessednesse, vid. happi-  
nesse: what,* 101. God is  
most blessed, 102. The bles-  
sednesse of the creature, *ibid.*  
&c. The use of it; how to  
seek this blessednesse in a  
right manner, 104. The  
evidences of our blessednesse  
104. 105.

*Blindnesse, the misery of it,*  
313. *Body,*

# An Alphabetical Table.

Body, whereof tis made, 298  
the excellency of it, 299.  
Conclusions applicative,  
299, 300. of the immorta-  
lity of the soule, 303. the bo-  
dy shall be immortall as the  
Resurrection. 303. conclusi-  
ons therefrom, 303, 304. of  
its severall parts and mem-  
bers, 305, 306. multa pre-  
clara.

Breast, good considerati-  
ons of its scire, or scimation,  
348, 349. what lessons wee  
may learne from it, 349. of  
the breast-plate, 348, &c. why  
faith and hope are so called,  
350. what is meant by the  
blessing of the Breasts, 350  
351.

## C

Change: In God there is  
no Change. 40. objections  
about it answered 40, 41.  
with the Application of it.  
41, 42.

Clouds: Their cause and  
production, 220. Their pro-  
gress, 221. Their succession  
and Renovation, 222, 223.  
their variety, 223. their use,  
225. of the Rainbow in the  
Cloudes, 225. excellent Res-  
olves concerning the Clouds

228, 229, 230.

Concede: how to concede  
of God in prayer 158, 159.  
whether in any Shape 160.  
the Application of it, 161.  
Creation: it is a work of  
the whole Trinity. 162.  
what Reflections this should  
make in us. 163. 164.  
whereof wee were created.  
165. when, ibid. for what.  
166. with reflections there-  
of. 166, 167.

## D

Desertions: how to have  
the sense of Gods grace in  
Deserts. 140.

## E

Ears, vid. Hearing: their  
domination 317. 318.  
their place, 318. their ad-  
mirable workmanship, 318.  
their benefits, 319.

Earth: its divers names,  
238. its situation, 239. its  
fashion, 240. its nature and  
quality, 241. its substance,  
242. 243. greenesse and  
riches, ibid. Resolves about  
it, 244. 246. &c. how de-  
scribed by Geographers, 246.  
&c. lessons from it. 247.  
248. Eclips,



# An Alphabetical Table.

**Eclips:** many pretty observations about the Eclipse of the Sun and Moone. 184. 185.

**Eternity:** what it is, and of Gods Eternity. 25. whether the heavens be Eternall. 26. or Angels. 27. why men are carelesse of their Eternall estate. 27. Arguments to prove Gods Eternity. 28. The uses of it. 29.

**Eyes:** The cause of seeing. 308. the benefite of the Eyes. 310. 311. The misery of blindnesse. 313. of the gracious employment of the eyes. 314. 315. &c.

## F

**Feet:** The mystery of Moses putting off his shooes off his feet. 358. 359. with many other like places of Scripture concerning the feet, expounded. 359. 360. how the affections are like the feet. 360. 361.

**Fingers:** Thumbs: Their number with an application thereof. 346.

**Fire:** Its divers names. 255. it is hidden and secretes. 256. 257. its effects. 260. with many considerations

therefore. 260. 261. 262. of improper and metaphoricall fire. 263. of the fire of hell. 263. 264. divers resolves about it. 264. 265. how wickednesse burnes like fire. 266. how Gods jealousy doth so also. 267. lessons from the fire which fell on Sodom. 268. how Gods Word is like fire. 268.

**Fooles:** concerning defects of understanding in naturall fooles. 58.

**Free-will:** whether it be in mans nature. 134.

**Frosts:** what the hoary frost is. 236. the natural causes of it. 237.

## G

**Glory:** what. 143. of the glory of the creature. *ibid.* &c. of the glory of the Creature. 145. wherein men doe most usually glory. 146. 147. what is to glorie in God. *ibid.* what vaine-glory is. *ibid.* the right way of seeking glory. 148.

**Glorie:** what it is to glorifie God. 11. how to doe it. 15. how wee may know that wee doe glorifie God. 148.

## B

God.

# An Alphabetical Table.

God what he is, 6. 7. what  
he is not. 7. what it is to glo-  
rifie God. 11. and how. 15.  
16. 17. of Gods subsistence.  
what, and its manner, how.  
18. 19. of his simplenesse. 20.  
21. of his Eternity 25. 26.  
ad 31. of his Omnipotence.  
32. what. 33. the witness  
of it. 33. questions about it  
answered. 34. 35. The use  
of it. 37. of his immutability  
39. proved by Scriptures. 40.  
41. the uses of it. 42. 43. of  
Gods infiniteness. 45. no crea-  
ture so. ibid. with the uses of  
it. 46. 47. of his omniscience  
47. 48. arguments proving  
it, with the uses. 48. 49. of  
his omnipresence. 51. objecti-  
ons answered. 52. 53. the use  
of it. 53. of his perfection, in  
like manner handled. 56. 57.  
58. of his invisibility. 62.  
63. how some creatures are  
so. 64. questions of it. 65. 66.  
67. the uses. 68. 69. of his  
wisdom in like manner. 69.  
&c. so of his truth. 77. &c.  
so of his mercy. 83. 84. &c.  
and likewise of his justice. 88.  
89. &c. of his life. 95. &c. of  
his blessednesse. 101. &c. of  
his hatred hating, and being  
hated. 107. of his love. 112.  
&c. of his patience. 122. &c.

his will. 130. 131. of his  
grace. 136. &c. of his glory.  
143. why, and how called the  
Lord of hosts. 148. 149.  
how God is made an Idol.  
153. how he conceive of God  
when we pray. 158. 159. of  
his works. 161. of his worke  
of Creation. 162.

Grace; who gives the life  
of grace. 167. what is meant  
by the grace of God. 136.  
137. how to attaine to the  
sense of Gods grace. 137.  
138. 139. how we have it in  
Martyrdom. 139. in tem-  
ptations. 139. in desortions.  
140. how to know that we  
are in grace. 140. how grace  
is preserved. ibid. how to come  
to a due esteeme of Grace.  
ibid. &c.

H

Hail: the causes of it.  
297. Hands: their nature and im-  
ployments. 342. 343. of hands  
naturall and metaphoricall.  
344. how many waies the  
hand is lifted up. 345. why  
magistrates haue above in  
the hand. ibid. hands how at-  
tributed to God. 345.

Happinesse. vid. blessed-

nes

# An Alphabetical Table.

ness, what, 102. the happiness of the creature, ibid. &c. what it should reach us, 103 how to seeke for happiness in a right manner, 104. the evidences of our happiness, ib. reasons why happiness is not in the creature, 105. why Christians are so uncheerful in their happiness, 105. what our happiness is at death, 106

**Hatred:** what, 107. distinctions of hatred in persons, 107. 108. in things, 108. what, and whom God hates, 109. the use of it, 110 why wicked men hate God, ib. and the godly, ibid. the persons that deserve hatred in this world, 111. we get a hatred against sin, ibid. how far we may hate the wicked, ib.

**Head:** it is obvious, and most sense, 304. it is honorable, 305. how united to the body, 306. it conveys influences to the rest of the body, 307. its sensibility, ibid.

**Heaven:** diversly taken, 174. its cleareness, 175. its height, 176. its largeness, 176. its firmness, 177. its motions and dissolution, 178. 179.

**Hearing:** vid. Ears, 24. good hearing, 320. 321. 322.

paraison thereto, 322. what hearing is most grievous to a gracious man, 322. 323.

**Hoasts:** what is meant by hoasts, 148. 149. why God is called the Lord of hoasts, 149. which are his hoasts, ibid. which is the chiefe hoast of God, 150. the uses of it, 153. the Lord of hoasts distinguished from all other generals, 152. 153.

**Idol, Idolatry,** vid. Images, what an Idol is, 153. how men make God an Idol, 154. their punishment that thus doe, 155. how an Idol is said to be nothing, 156. where Idolatry did first begin, 156. why the Jewes fall to Idolatry, ibid. how to prevent it, ibid. &c.

**Image:** vid. Idol, whether it were not a good hope to our deviation in respect of Gods invisibility, 66. of the Image of God in the Jewe, 292. 293. how Adams mind after Gods Image, 293. whether the Image of God doth still remaine in us, 294. 295. in whom the Image of God is required, 295. 296. resolves application from these heads

## An Alphabetical Table.

293. 294. &c.

**Infinite:** of Gods infinite-  
ness 45. no creature so. ibid.  
the uses of it. 46. 47.

**Injuries:** they are of three  
sorts. 106.

**Invisibilia:** what, 62.  
how God is so. 63. some crea-  
tures so. 64. objections an-  
swered. 65. 66. 67.

**Iustice:** defined. 88. of  
Iustice in men, ibid. in God.  
89. his iustice in punishing to  
be considered five waies, 89.  
motives to labour for Iustice.  
90. excellent lessons to be  
learned from Iustice, past, pre-  
sent, and to come. 91. 92. a  
peece of Tradesmens Iustice.  
93.

K

**Knowledge:** what, 1. Its  
contraries and companions.  
ibid. three differences in know-  
ledge. 2. reasons why heathen  
knowledge is not saving know-  
ledge. 2. 3. nor hypocrites. 3.  
what saving knowledge is. 3.  
saving knowledge how attain-  
ed; with its concomitants.  
4. 5. how preserved. 5. 6.

L

**Legs:** of eers aine myste-

ries in the Scriptures about  
bare legs, and broken legs,  
and legs of Iron and clay.  
357.

**Life:** what. 95. its sorts  
and kinds 96. 97. the life of  
grace is most excellent, ho-  
norable, and comfortable. 98  
99. God is life. 99. the ap-  
plication of it. 99. 100. why  
men doe desire naturall life.  
100. what is the best remedy  
for a livelesse disposition. 100  
how wee may come to live  
better. 101.

**Light:** what, 186. what  
it was before the Sunne was,  
187. the benefits of naturall  
light, 187. 188. christians  
should walke as children of  
the light. 189. and with  
them. ib. and for them. ib. &c.

**Love:** what, 112. and  
Gods love. ibid. &c. of the ob-  
jects liberty, extents, and du-  
ration of Gods love. 113. of  
mans love to God. 114. the  
markes of our love to God.  
ibid. the promises made to  
them that love God. 115. of  
mans love to man. ibid. &c.  
the necessarie excellencie, ex-  
ercise, markes, and preserva-  
tives of this love. 116. 117.  
118. uses of it. 118. how to  
be found in love, and how our  
love

# An Alphabetical Table.

love should be ordered. 119.  
what love we owe to ungodlie  
men. *ibid.* what to our selves,  
*ibid.* &c. what to Gods chil-  
dren. 120. how wee lose our  
first love. *ib.* why love growes  
cold. *ib.* what love we owe our  
preachers. *ib.* of love among  
them that differ in iudgment  
121. how wee may gaine  
more love. 121.

## M

*Man*: how he is a medium  
betweene an Angel and a  
Beast. 363.

*Medium*: prettie expres-  
sions of divers Mediums.  
362. 363.

*Mercy*: what. 82. 83. of  
the mercy of unreasonable  
creatures. 83. of the mercy of  
men. *ibid.* of God. 84. what  
all these should teach us. 84.  
85. how to be qualified so as  
to obtaine mercy. 86. there is  
a forgiving mercy. that must  
be practised. 86. how to ob-  
taine a mercifull heart. 87.  
the benefits thereof. *ibid.*

*Meteors*: their names,  
matter, time, forme, and place  
with the manifold consider-  
ations and uses of the same.  
272. 273. &c.

*Moone*: her brightnesse,

190. 191. &c. of her bor-  
rowed light. 195. her black-  
nesse and blemishes. 196. her  
mutation. 197. her gubernation,  
with good considerations  
of all these. 198. 199.

*Mouth*: its use. 323. it is  
a gate or doore. 323. 324. it  
is the feeder of the body. 325.  
it is the distinguisher, or sen-  
tence-giver. 325. it is the  
interpreter of the heart. 326.

## N

*Necke*: Its place, or situ-  
ation. 335. its composition.  
336. Strength. *ibid.* how ta-  
ken. 337. its motion whence.  
*ibid.* what is to harden the  
necke. 338. other resolves a-  
bout it. *ibid.* &c.

## O

*Omnipotence*: what. 32.  
of Gods omnipotence, with  
the witnesses. 33. questions a-  
bout it answered. 34. 35. the  
uses of it. 37. 38.

*Omniscience*: what. 47.  
no creature so. 48. God so. 48.  
49. proved. 49. the uses of it.  
*ibid.* 101. 102. 103.

*Omnipresence*: what. 51.  
no creature so. *ib.* God so. *ib.*  
proved by reasons and Scrip-  
ture. 52. 53. objections an-  
swered. *ibid.* its application.  
54. 55.

# An Alphabetical Table.

## P

**Patience**: what, 122. of Gods patience, and why hee is so, ib. of the patience of good men, 123. further considerations of patience, 123. 124. how to be followers of God in patience, 124. 125. difference of Stoicall and Christian patience, 126. how farre masters and parents should be patient before they correct, 126. of patience in scandalls how to have our patience enlarged, 129.

**Perfection**: what, 56. God is so, ibid. questions about it answered, 57. 58. 59. how to draw neare to perfection, 60. The use hereof, 61. 62.

**Prayer**: how wee should conceive of God in prayer, 158. 159. whether in any corporall representation, 160. 161.

**Prophets**: what long we owe to them, 120. 121.

## R

**Raine**: its naturall causes, 231. how wisely God disposeth of it, 231. 232. why

is kept from us, 232. ib. meanes to obtaine it, 233. its benefit, ibid. resolves about it, 234. 235. why afflictions are compared to raine, 237. 238.

**Raine-bow**: why made, 225. its matter laid downe in foure considerations, 226. the use of it, ibid. &c. why a signe of the covenant, 227. how Christ and the rain-bow are alike, 227.

**Revenge**: wee must not revenge wrongs, 94.

## S

**Scandalls**: how to be patient in scandalls, 127. 128.

**Shoulders**: how is the government on Christs shoulders, 341.

**Simplenesse**: of Gods simplenes, what, with many questions about it, answered, and applied, 20. 21.

**Snow**: what is its naturall cause is, 237.

**Soule**: what with many necessary questions about it, 283. 284. &c. multa.

**Souldier**: every Christian is a souldier in this warring world, 151.

**Starres**: The time of their



# An Alphabetical Table.

their creation, 201. their exceeding greatness, 202. their multitude, 203. their use and operations, 204. 205. cautions about their use, 204. applications herof, 206. their glory, 207. how they praise God, 208. &c. multa præclara. *ibid.*

**Subsistence** : Gods subsistence, what, and the manner how, with the application thereof, 18. 19. 20.

**Sunna** : how great and large, 180. of its brightness, motion, order, operation, and Eclips. 180. 181. 182. &c.

## T

**Temptation** : how we may know how sathan tempts us, and how temptations differ from our corruptions, 67. how to have the sense of Gods Grace in temptations, 139.

**Thighes** : why Abraham caused his servants to put his hand under his thigh, when he gave him an oath, 355. of Jacobs halving thigh. *ibid.* &c. of Christs girding his sword on his thigh, 356.

**Tongue** : It is the glory of a man, 327. hard to bridle, 328. resolves concerning the

mouth and tongue, 329. 330. how to order it aright, 330. 331. a confute of idle words, 331. 332. their cure, *ibid.* the comfort of them that can bridle their tongue, 332. 333. how to speake religiously, 333. who are enemies to godly conference, 334.

**Truth** : what, 77. of the truth of the creatures and Creatour, 78. the Word is Truth, 79. how to try the truth, *ibid.* we must witness in our profession three things of truth, 80. how we may know truth from error, 81. what be the symptomes of opposers of the truth, 81. how to honor the truth, 82.

## W

**Water** : Its Etymologie and originall effects, 249. its kinds, 250. its usefulness, 250. 251. resolves concerning it, 251. 252.

**Warre** : whether lawfull, 150. how it came first into the world, *ibid.* every Christian is a Souldier in this warring world, 151.

**Will** : vid. Free-will, what it is to will, 130. what Gods will is, and where and how

re.



# An Alphabetical Table.

revealed. 131. of man will  
Corrupted. 132. we should la-  
bour to know Gods will. 132  
133. we should do it. 133.  
with the fruits of so doing.  
ibid. &c. the manner of it.  
134. whether man hath  
free-will. 134. 135. what  
motions are agreeable to the  
will of God. 135.

*Winds*: their generation,  
diversities, use, and strength.  
274. 275. resolves about  
them. 377. 278.

*Wisdom*: what it is. 69  
of the wisdom of the crea-  
tures. 70. of the wisdom of

God. 71. how manifested. 71  
72. 73. what excellent uses  
may be made of his wisdom  
for admiration, demonstrati-  
on, exhortation, and consolati-  
on. 74. objections answered  
about it. 76.

*Word*: Gods word like  
fire. 268. 269.

*Workes of God*: six rea-  
sons why we should meditate  
on the workes of God. 161.

*Worship*: how to give  
God a spirituall worship and  
service. 157.

*Wrongs*: we must not re-  
venge wrongs. 94.

FINIS.

MISCELLANEA  
PHILO-THEOLOGICA,  
OR,  
GOD, & MAN.

*A Treatise compendiously describing  
the Nature of God in his Attributes, with a lively pourtrature  
of his Wisedome in ordering, and disposing of the  
Celestiall, and terrestriall  
Bodies.*

Containing much variety of Matter  
Theologicall, and Philosophicall; wherein many secrets in Scripture,  
and in Nature, are unbowelled, with solid Prooves, and apt  
Applications singular for brevity, and perspicuity.

By HENRY CHURCH.

---

Joel 1. 18.

*I will pour out of my Spirit on all flesh.*

Psal. 8. 1, 3, 4.

*O Lord, our Lord, how excellent is thy Name in all the world, who  
hast set thy Glorie above the Heavens, &c.*

*When I consider the Heavens, the Worke of thy Fingers, the  
Moone, and the Stars, &c.  
What is man, &c.*

---

LONDON,

Printed for JOHN ROTHWELL, and are to be sold at  
the Sunne, in Pauls Church-yard.

M. DC. XXXVII.

MISCELLANEA  
PHILOSOPHICAL

OF THE  
HUMAN MIND  
IN ITS  
VARIETY OF  
FUNCTIONS  
AND  
CAPACITIES  
BY  
J. G. MILLER  
M.D.

CONTAINING  
THE  
RESULTS  
OF  
RESEARCHES  
INTO  
THE  
NATURE  
AND  
EXTENT  
OF  
THE  
HUMAN  
MIND  
IN  
ITS  
VARIETY  
OF  
FUNCTIONS  
AND  
CAPACITIES  
BY  
J. G. MILLER  
M.D.

LONDON:  
PUBLISHED BY  
J. G. MILLER  
M.D.  
1840.

THE  
HUMAN  
MIND  
IN  
ITS  
VARIETY  
OF  
FUNCTIONS  
AND  
CAPACITIES  
BY  
J. G. MILLER  
M.D.



TO THE LEARNED  
READER.

**I** Humbly desire your  
Charitable Construc-  
tion of my poore en-  
deavours: being willing to be  
convinced, and reformed. I  
confesse my impotencie, and  
desire my errours may be  
purged, and all truths allow-  
ed.

HENRY CHURCH.

HENRY CHURCH.

A 2

THOMAS WELLES.

To

## The Epistle.

TO ALL

whomsoever.

**I** Confesse my spare time hath beene this way employed in methodicall Meditations, the Reason why I so much exercised my penne, was, because a drowsinesse fell on mee, when I did reade: and wrighting kept me awake: if any be offended, I writ not to offend them: if any be in the least measure edified, for their sakes I have taken this paines, and thinke my labour well bestowed.

HENRY CHURCH.

Imprimatur,  
THOMAS WEBBES.

AN



## An Advertisement to the Christian Reader, concerning the scope of the Booke, with some passages of the Life of the Authour.

**I**RVE, and solid knowledge layes its foundation in God; he that will know himselfe, and the sublunary Creatures, as they are, must first see, and know him (by faith) that is invisible: The studie of the knowledge of God in his Attributes gives a man a possession of heaven, on earth, Its life eternall to know thee, &c. This knowledge is the basis, and foundation of that precious Faith the Apostle speakes of: They that know thee, trust in thee: So that before a man can with the wise Builder, build on the Rock, he must beleeve that God is. This godly Man M<sup>r</sup>. HENRY CHURCH began here; his maine studie was this saving Knowledge: and this he did not by starts, and fits; but daily (as his calling did permit him.) Great was his wisdom, and his industrie in the husbanding of his time, for as he chose Maries Part; so hee was carefull of Martha's; a good Christian, and a provident Husband. Those that knew his Employments, many, urgent in the world, and wondered, how he could spare time, or find time for these Contemplations. I may answer for him, he loved much, and therefore with Marie was resolved to doe much. Hee denied himselfe in his pleasures, in his diet, and in his sleepe, hee bare the yoke of the Lord in his youth, I have

## An Advertisement

\* *Iunius*  
Whet them, or  
print them in  
m: morie.

heard, that when hee had libertie to sport himselfe, as others, his pleasure, his delight was, in his Closet, with the Law of GOD, hee prevented the dawning of the day, and with DAVID meditated of GOD in the night-watches, hee could not intend to be idle, hee had learned of his Master CHRIST, who went about doing good, hee filled-up his vacant houres either with doing, or receiving good; as if hee had exactly learned that charge of the Lord by Moses, These words which I command thee, thou shalt \* rehearse them continually to thy Children, and thou shalt talke of them, when thou tardest in thy house, and as thou walkest by the way, and when thou liest downe, and when thou risest up. Hee knew not onely for himselfe, but for others; his light was on a candle-stick, not under a bushell, hee did not with the Idle Servant, hide his Talent, but improved it to a good increase. Hee was greedy of all advantages to glorifie God: if hee was covetous, this was his covetousnesse, hee coveted the best things. He was of a compassionate spirit, ready to doe good both to the Soules, and Bodies of others. Hee lived as lent to himselfe; and given to others. How sedulous he was to instruct the Ignorant, to reclaim the wandring, to relieve those that were in want, to settle the unstable soule; those that knew him, can judge. He withstood errors; hee was an Enemy to error, for hee received the truth in the love of it. Hee was a Friend to truth. Hee endeavoured to comfort afflicted Consciences, for by observing his owne heart, and Conference with such, he attained a singular dexteritie this way. In his Booke you may heare him yet speake, that is now dead. His Religion lay not in Tongue, but in his Heart; not in a forme of godlinesse, but in power; as if he had learned to doe what once Minutius said, Non multa loqui, sed vivere. The scope, and end of this good Mans studies (I suppose) in this Booke was chiefly for himselfe, and his Familie  
that



## to the Reader.

that it might like a fruitfull Spring, supplie himselfe, and them.

Againe, his friends knowing his desire hee had to the publicke good, as also the favourable acceptance of his two former Bookes in the hearts of good men, already printed, gives us good encouragement to adventure againe on a publicke Censure.

Read it through before you judge, I hope you shall find it profitable, and abounding with much varietie; under briefe Heads drawing on the Reader to delight to studie God in his Attributes, and to enlarge them in thine owne Meditation: as also hee represents God to thee in the glasse of the Creature, and among the rest, Man the Epitome of all; that while thou art poring after curious speculations, and secrets of Nature, hee endeavours wisely to divert thy thoughts, by apt application heaven-ward. To satisfie the Indicious.

If thou shalt except against anything, consider its a Posthumus issue, then I hope you will pardon both the Author, and the Printer.

For Censorious Criticks I care not to satisfie.  
The Blessing of the Almighty be with it.

viz. The Good  
mans treasury  
Divine letters.





# A TABLE

## OF THE SEVERALL

*Heads , contained in this  
ensuing Treatise.*

|        |                              |        |
|--------|------------------------------|--------|
| I.     | <b>O</b> F Saving Knowledge, | page 1 |
| II.    | What GOD is,                 | P. 6   |
| III.   | What it is to glorifie God,  | P. 11  |
| III.   | Of Admiration,               | P. 12  |
| V.     | Of Praising God,             | P. 15  |
| VI.    | Of Gods Subsistence,         | P. 18  |
| VII.   | Simplenesse,                 | P. 20  |
| VIII.  | Eternitie,                   | P. 25  |
| IX.    | Omnipotencie,                | P. 32  |
| X.     | Immutabilitie,               | P. 39  |
| XI.    | Infinitenesse,               | P. 45  |
| XII.   | Omniscience,                 | P. 47  |
| XIII.  | Omnipresence,                | P. 51  |
| XIV.   | Perfection,                  | P. 56  |
| XV.    | Invisibilitie,               | P. 62  |
| XVI.   | Wisedome,                    | P. 69  |
| XVII.  | Truth,                       | P. 77  |
| XVIII. | Mercie,                      | P. 82  |
| XIX.   | Iustice,                     | P. 88. |
| XX.    | Life,                        | P. 95  |
| XXI.   | Blessednesse,                | P. 101 |
|        |                              | XXII.  |

# The Table.

|  |        |
|--|--------|
| XXII. Hatred,                          | p. 107 |
| XXIII. Love,                           | p. 112 |
| XXIV. Patience,                        | p. 122 |
| XXV. Will,                             | p. 130 |
| XXVI. Grace,                           | p. 136 |
| XXVII. Glorie,                         | p. 143 |
| XXVIII. Of the Lord of Hosts,          | p. 148 |
| XXIX. How God is made an Idoll,        | p. 153 |
| XXX. Fow to conceive of God in Prayer, | p. 158 |
| XXXI. Of the Workes of God,            | p. 161 |
| XXXII. Of Angels,                      | p. 168 |
| XXXIII. Of the Heavens,                | p. 174 |
| XXXIV. Of the Sunne,                   | p. 180 |
| XXXV. Of the Light,                    | p. 186 |
| XXXVI. Of the Moone,                   | p. 190 |
| XXXVII. Of the Stars,                  | p. 201 |
| XXXVIII. Of the Aire,                  | p. 211 |
| XXXIX. Of the Clouds,                  | p. 220 |
| XL. Of the Raine-bow,                  | p. 225 |
| XLI. Of the Raine,                     | p. 231 |
| XLII. Of the Earth,                    | p. 238 |
| XLIII. Of the Water,                   | p. 249 |
| XLIV. Of the Fire,                     | p. 251 |
| XLV. Of Meteors,                       | p. 270 |
| XLVI. Of the Winds,                    | p. 274 |
| XLVII. Of Man,                         | p. 1   |
| XLVIII. Of the Soule,                  | p. 3   |
| XLIX. Of the Soules Immortalitie,      | p. 5   |
| L. Of the life of the Soule,           | p. 6   |
| LI. Of the death of the Soule,         | p. 6   |
| LII. Of Gods Image on the Soule,       | p. 12  |
| LIII. Of the Bodie,                    | p. 18  |
| LIIII. Of the Mortalitie of the Bodie, | p. 20  |
| LV. Of the Immortalitie of the Bodie,  | p. 22  |
| LVI. Of the Head,                      | p. 24  |
| LVII. Of the Eyes,                     | p. 28  |
|  | LVIII  |

## The Table.

|   |       |
|---|-------|
| <i>LVIII. Of the Eares,</i>                   | p. 37 |
| <i>LIX. Of the Mouth,</i>                     | p. 43 |
| <i>LX. Of the Neck,</i>                       | p. 55 |
| <i>LXI. Of Armes, and Shoulders,</i>          | p. 59 |
| <i>LXII. Of the Hands,</i>                    | p. 62 |
| <i>LXIII. Of the Fingers, and Thumb,</i>      | p. 65 |
| <i>LXIV. Of the Back,</i>                     | p. 66 |
| <i>LXV. Of the Breast,</i>                    | p. 68 |
| <i>LXVI. Of the Bellie,</i>                   | p. 71 |
| <i>LXVII. Of the Thighes, Legs, and Feet,</i> | p. 74 |
| <i>LXVIII. Of Meduims,</i>                    | p. 81 |

FINIS.

The Table

Wm Chapman  
His Book

p. 37  
p. 43  
p. 47  
p. 53  
p. 59  
p. 65  
p. 71  
p. 77  
p. 83  
p. 89

21 30 12

# Of saving Knowledge.

1. *What Knowledge is.*
2. *There is a Knowledge saves not.*
3. *What saving Knowledge is.*

## 1. *What Knowledge is.*



**K**now, is to understand, to perceive; to discern, to comprehend: Knowledge is the eye of the Soule, we shall the better perceive what Knowledge is, by the contrary to it, and by comparisons. The contrary to Knowledge and Understanding is Ignorance.

*Sect. 1.  
Nescire,  
Intelligere.  
Peripere.*

*Contraries to  
Knowledge.*

*Jer. 4. 22. Luke 19. 41.* The Comparisons may be to compare it with Prudence and Discretion. Knowledge is to perceive, to discern: Prudence is to dispose of things knowne; both we doe read of, *Colos. 1. 9.* Understanding to conceive, wisdom to order, to act, to put in execution; discretion is to moderate, circumscribed in measure, and time; Discretion, it mitigates, and qualifies, and observes circumstances about the execution of things.

So then, Knowledge is a discerning, a receiving, a knowing.



*Self. 2.*  
Difference of  
Knowledge.

seeing, a taking notice; 'tis to perceive, and to understand.

*Difference of knowledge.*

**T**HERE is Knowledge that saves not: as first, the Knowledge of Devils. Secondly, the knowledge of Heathens. Thirdly, the knowledge of Hypocrites. First, of Devils, they must be knowing creatures, having so much means, as all humane learning; and having so great experience for above 5000. yeeres; yet their knowledge is not saving.

1.

First, they have no application: Secondly, they have no comfort: Thirdly, they have no change; so they know, but not for their good.

2.

Secondly, there is the knowledge of Heathens: First, that there is a God; they found by searching *Causam causarum*: There must be a cause of causes, which must be God. Secondly, they know this God must be worshipped: Thirdly, they know the creatures, being good Astronomers, Geographers; they know the immortality of the Soule, and could anatomize the body of man. Their knowledge was not saving:

Reasons why  
heathenish  
knowledge is  
not saving.

1. Because though they knew God, yet they know him not in Christ; so came short of saving knowledge, *Iohn 17. 3. Acts 4. 12.*

2. They knew God was to be worshipped, but knew not how, for a right manner.

3. They knew the creatures to their conviction, *Rom. 1. 20.* but not to their salvation.

4. They knew man in the faculties and members, and so did magnifie man; and exalt him: Whereas saving knowledge doth abase man, being both a guilty, and a filthy creature.

Thirdly, there is the knowledge of Hypocrites; who doe know there is a God, and can distinguish the persons in the Trinity; they know the two natures of Christ, Law, and Gospell; the differences in Religion; they are able to teach others; their knowledge is not saving.

1. Be

## Of saving Knowledge.

3

1. Because it is attained by art, industry, reading, but not from the regenerating Spirit.

Reasons why Hypocrites knowledge is not saving.

2. It sinks not in their hearts, to humble and reforme them; but rests in their braines, to puffe them up. *Heb. 6*

4. *1. Cor. 8. 1.*

3. They hunger not, thirst not for knowledge, because they thinke they are rich, and have enough: or if they doe, it is for base and carnall ends; as first, to please themselves with their speculations, and to satise their curiosity. Secondly, to be able to discourse, and so get applause at feasts, and other meetings. Thirdly, to handle disputes and controversies, so to get them a name. Fourthly, to censure the Preachers, to contradict their Sermons; to cavill, and picke faults, that so they might be esteemed men of Judgement. Fifthly, to gather Sects, and to make schismes, that they might be in some more esteeme, or get some contributions, and make a gainc of those silly ones they have deluded.

3. What saving knowledge is.

Sect. 3.

**S**AVING Knowledge is a worke of Gods Spirit on the faithfull, opening their eyes to know God, and themselves.

1. It is a worke of Gods Spirit, *He is the Spirit of Revelation, Ephes. 1. 17. By this Spirit we know the things of God. 1. Cor. 2. 12.*

2. On the Elect, or faithfull; for 'tis the saved ones prove knowing once, *1. Tim. 2. 4.* Others have not that light as they live. *Mat. 13. 13.*

John 5. 15.

3. Their eyes are opened by the preaching of the Gospel, *Mat. 26. 18.* As the Manna fell downe in the dew, so the Spirit is conveyed by the Word. *Isai. 35. 5. By the preaching of the Gospel, the eyes of the blinde shall be enlightened.*

4. They are brought to know God; in ignorance and

. B 2

darknesse

THE NEW  
OF THE  
OF THE  
OF THE

darknesse we did not know God. 1. *Sam.* 2. 12. *Ephes* 5. 18. but being wrought upon by the Word, and Spirit of God; then they knew him savingly, as that God will be mercifull to their sins. *Ier.* 31. 34. *Heb.* 8. 11.

5. They know themselves savingly; first, in their guiltinesse. *Rom.* 5. 12. Secondly, in their corruption of nature. *Iob* 14. 4. *Psal.* 51. 5. Thirdly, in their actuall sinnes. *Psal.* 40. 12. Fourthly, in this estate they know themselves lost. *Luk.* 19. 10. Fifthly, they know the onely remedy is by *Iesus Christ*.

*This knowledge is in the Eleff.*

The Concomi-  
tants with sa-  
ving know-  
ledge.

1. With application. 2. *Tim.* 1. 12. 2. With renovation and change. 2. *Cor.* 3. 18. 3. With great humility. *Iob* 42. 5, 6. 4. With charity. 1. *Cor.* 13. 2. 5. With practice. *Iohn* 13. 17. 6. With consolation. *Ier.* 9. 24. 7. With contempt of the world, *Pbil.* 3. 8. 8. With satisfaction, 1. *Cor.* 2. 2. It satisfies as much, yea, more than all Arts and Mysteries, or secrets.

*Quest.*

*Answ.*

How saving  
knowledge is  
attained.

How is this saving knowledge attained?

For answer, consider three things,

1. We have it not by Nature. 2. We are attainers, and receivers. 3. The answer how we doe attaine it.

First, we have it not by Nature: for the image of God consisting in Knowledge, *Col.* 3. 10. we have lost by *Adams* fall; and though the Oxe knowes his owner, and the Ass his Masters crib, yet those naturall men that have most meanes of knowledge living in the visible Church, are ignorant of God, *Isa.* 53. *Ier.* 4. 21. As for Pagans, they are more remote from saving knowledge, and are said to be darknesse, *Ephes.* 5. 8. full of darknesse, *Rom.* 1. 21, and to be without the Knowledge of God, 1 *Thes.* 4. 5.

Secondly, we are receivers of saving knowledge, being destitute of it in our selves: It is given us from him, who both gives every good giving, and every perfect gift.

*James*

# Of saving Knowledge.

50

*James 1. 17.* It is the Lord opens our eyes, *Acts 26. 18.* and gives us the spirit of Revelation : *Ephes. 1. 17.* It is God shines into our hearts, to give us the light of saving knowledge : *1 Cor. 4. 6.*

## 3. How we attaine saving knowledge.

1. We attaine it freely ; without merit ; Gods Will is the cause wee know him ; and partake of mercy, *Jer. 31 33. 34.*

2. We obtaine saving knowledge ; by vertue of the new Covenant, God hath promised this blessing to his people, *Heb. 8. 11.*

3. Wee obtaine it by the Word published and preached : *Jer. 31 33.* We are fed with knowledge, but starved with ignorance.

4. By our union with Christ, in him are all the Treasures of knowledge, and wee are enriched by our union, and conformable to our Head in knowledge, *Col. 2. 3.*

By the collaboration of the Spirit, hee brings saving light with him : 1. *John 2. 20.* As the Spirit is an uncti- on for our honour, and life, and quickning ; so he is a Teacher, to give light and direction.

How is saving knowledge preserved ?

1. By the meanes that doe beget it : the Word begets knowledge ; so the Word preserves it.

2. It is preserved by exercise ; exercising our understanding to know : studying heavenly things ; keeps knowledge from decay, and adds to it.

3. By committing our knowledge, and our soules, and all, to keep to him, is able to preserve us ; where we make a surrender, there God is a Preserver.

4. We tie things that we feare to lose ; tie the know- ledge to the Rule, and let the Knowledge and the Word be united, as the Cause, and the Effect.

5. Fasten something to knowledge that it may abide.

B 5

fasten

Question.

Answer.

How is it pre- served.

fasten to it Humility, Love, and Practice, then it will remaine.

6. Conferre with others, communicate what you know, partake of others knowledge; mutuall exchange makes a combination, so we are more firme.

7. Esteeme of knowledge, as of your greatest treasure, then your care will be to keepe your Jewell, lock it up in a good conscience, and it will bee safe and sure.

8. Delight in knowledge, and take pleasure in understanding, then no price can buy it, and wee shall still be content with it, and never let it depart from us.

Question.

What is God?

This is one of the deepest questions in Religion: It is reported of the heathen he required three dayes to answer, then three dayes more, still three more, for the more he studied, he found his weaknesse to answer.

We soone may erre in our definition of God, our errors herein are most dangerous if they be defended damnable. Yet it is necessary to give an answer as we are able.

Answer

1. Because some will question, *Where is your God?* Psal. 42. 10.

2. To stay our owne thoughts which are restless; till we can conclude something concerning God; our satisfaction is the more to know a glimpse of God, and to perceive him, wee may have this knowledge increased a little here, and much hereafter.

3. In respect of the worship of God, *We must worship what we know*, John 4. 22. tis reproved to worship an unknowne God, Act 17. 23.

1. To speake what God is, the safer way is to declare negatively what he is not: He is not Mortall, Corporall, Corruptible: thus we ascribe to him all excellency.

2. To know what God is, let us search the Scriptures for his word: *can best describe of him*, Psalme 138. 2. John 5. 39.

3. Wee

# What God is.

7

1. We must conclude, all we can know of God is but in part here in this life: *We know him but a little portion*, Job 26. 14. *We know in part, and see but darkly, as through a perspective glass*, 1 Cor. 13. 12.

4. The end of our study to know God, should bee for to glorifie him, by our acknowledgement of him to bee the onely and absolute Lord and possessor of his excellency, praising of him in our speeches, actions, sufferings, of which we shall consider in the next place.

It will the better be answered if we consider.

1. What he is not.

2. What he is.

First, God is not.

1. Created.

2. Visible.

3. Comprehended.

1. God is not created but the Creator, Gen. 1. 1. All we can conceive of a number, is comprehended under two heads, the Creator, and the Creatures. God is the Creator, all besides himselfe are Creatures, both the Angels, the heavens, the earth, and all things in them whatsoever.

2. God is not visible, our bodies cannot see a spirit, God is a most pure and spirituall Essence, therefore cannot be seene.

3. God is not comprehended, our capacity is too shallow to conceive of him: he is invisible to our bodies, and incomprehensible to our soules.

Quest. What means god by Incomprehensible?

Ans. The word Incomprehensible, signifies that which cannot be found out or numbered. *Trenthius* and *Junius* use a word in Psalme 145. 3. *Pervestigatio mentis*, which is finding out: To shew the meaning of Gods incomprehensibleness, he saith, *Magnitudo ejus non est pervestigatioem*, his greatness is incomprehensible, that is, cannot be found out. *Wilson* ex-

1. What God is not.

1. not created.

2. Not visible.

3. Not comprehended.

1. What God is not.

1. not created.

2. Not visible.

3. Not comprehended.

1. What God is not.

1. not created.

2. Not visible.

3. Not comprehended.

1. What God is not.

1. not created.

2. Not visible.

3. Not comprehended.

1. What God is not.

1. not created.

2. Not visible.

3. Not comprehended.

1. What God is not.

1. not created.

2. Not visible.

3. Not comprehended.

1. What God is not.

1. not created.

2. Not visible.

3. Not comprehended.

1. What God is not.

1. not created.

2. Not visible.

3. Not comprehended.

1. What God is not.

1. not created.

2. Not visible.

3. Not comprehended.

1. What God is not.

1. not created.

2. Not visible.

3. Not comprehended.



pounding) *Incomprehensible*, laith, *in* that the World cannot containe, nor mans wit comprehend.

2. What God is.

1. He is a Creator.

What it is to create.

*Secondly, what God is.*  
1. He is the Creator of all things.  
2. He is invisible to the eye.  
3. He is incomprehensible to the minde.  
First, he is a Creator of all things; therefore is to be separated from the creatures in our distinctions; and is above the creatures in priority of dignity and time.

To create, is to worke without instruments, or materials.

*Application.*

1. To conceive of God as a Creator, above all created Natures whatsoever. *Rom. 11. 36. Of him, through him, and for him are all things.* Of him, as the first Cause; by him, as the Father, for him, as their End; wherefore they were made. Of him, without any mover, by him, without a helper, for him, and none other cause.  
2. Not to contend without our Creator about his Decrees, or proceedings; this is to bring a woe upon our selves, to strive with our Maker. *Isai. 45. 9.*

3. To praise and glorifie him for this, because he created all things. *Thou art worthy to receive glory, and honour, and power; for thou hast created all things.*

Secondly, God is invisible to the eye: *John 1. 18. No man hath seene God at any time.*

The persons, *No man.*  
The time, *at any time.*

Never man at any time have God; wee cannot see a Spirit; but God is a most pure Spirit, excelling the Angels. First, the Angels have many perfections, but God hath all perfection. Secondly, the Angels receive all from him, he hath all from himselfe. Thirdly, they are finite, and limited; but God is infinite.

Thirdly.

Lev. 23. 24.  
John 1.  
Hebrews 1. 1.

Rom. 9. 20.

Isai. 45. 9.

Revel. 4. 11.

2. He is invisible.

Dignity.



God is Incomprehensible to the minde, as well as invisible to the eye, no created Nature can comprehend him in his Essence nor his Attributes; whatsoever wee conceive it is but in part, there is much more we perceive not, nor can comprehend.

In respect of his Eternity, our capacity is like the Sunne, which shewes things under it, but darkens all about it; wee can looke backe to the beginning; if wee looke forward, wee cannot conceive after time shall bee no more.

Eternity.

Concerning Gods being before time, or after time, we have but a glimpse, a generall notion; we can conceive but little, our comprehension failes us.

Revel. 10.6.

Who can behold the Sunne in his glorious shining? much lesse can we comprehend the glorious Majesty of God: who hath beheld it, that he may demonstrate it? not the Angels, for they are faine to cover their faces, *Isai. 6.2.* much lesse we that dwell in houses of clay, who have that ignorance and guiltinesse, that those glorious Zetaphims are freed from.

Glory.

Nor can we comprehend his greatnesse; *Isai. 145.3.* no not by all our induttry and searching, *Ioh. 1.17.* The heaven of heavens cannot containe him, *1 King. 8.27.* Wee are capable but to see his backe parts in this life, so much of God, as can be perceived in his word and workes: his greatnesse is such, that the Nations are as the drop of the Bucket, and the Islands as a little dust; Lebanon hath not wood enough for fire, nor the beasts enough for a sacrifice for him. *Haiah 40.15, 16.*

Greatnesse.

Exod. 33.23.

Also his wisdom is unsearchable, as deepe we cannot fathom, *Rom. 11.33.* the foolishnesse of God is wiser than man, *1 Cor. 1.25.* It is only the Spirit of God that searcheth in the deepe things of God, *1 Cor. 2.10.* and although vaine men would boast, *Iob. 41.12.* yet hee is but a beast by his owne knowledge, *Jeremiah 16.14.*

Wisdom.

and we must bee constrained to confesse our darknesse,

Iob. 37. 39.

*Applications.*

1. Is God invisible to the eye, and incomprehensible to the minde? let us then lay by our sense and reason, and labour for faith, though wee cannot apprehend nor demonstrate what God is; yet we are to believe that He is: *Hob. 11. 6. Hee that commeth to God must believe.*

Note three things.

1. Our felicity is to come to God.

2. The means is, by believing.

3. God is, that we must believe, which we cannot see nor comprehend.

2. By this 'tis easie to distinguish the Eternall Iehovah from all false Gods, being some of them visible; all comprehensible, those that adore them are more honourable than they worship, those Gods were but titular gods, no Creators, but created lifelessein being, and penishing in conclusion.

Jer. 10. 11.

3. No man was ever a perfect Artist in the contemplation of God: *How little a portion doe they haue of him? Iob. 26. 14. long in studying but little in fruition: deepe conceits, but shallow conclusions: Haec solus scio, me nihil scire: This onely I doe know, that I know nothing.*

Psalm. 139.

4. Yet are we to be diligent to study the knowledge of God, and although we cannot finde him out in his perfection, yet we must learn to know him to our salvation, *Iohn 17. 3. and to encrease in the knowledge of God. Col. 1. 10. though wee cannot see his face he reveales his backe parts to us: Exod. 33. 23. we are to know him by his workes: Rom. 1. 20. in his Sonne. 2 Cor. 4. 6. tis a shame living under the preaching of the Word to be ignorant of God. 1 Cor. 13. 34. and we are to foole before the Lord, 1 Cor. 14. 20. Therefore let us cry for*

wisdom.

# What it is to glorifie God.

11

wisdom, and call for understanding, search for it as silver, and digge for it as for gold; then shall we finde the knowledge of God. *Prov. 2. 1. 4. 5.*

**Quest. What it is to glorifie God?**

**Ans.** To glorifie God, is not to add any thing to him to make him glorious, but to acknowledge and demonstrate that glory is in him already; God glorifies us by putting glory on us; adding that unto us we are destitute of. We doe glorifie him, by taking notice, admiring, and praising of him, setting forth his glory.

**That is done by Acknowledgement.**

**Either** **To himselfe,** as **To men**

**To him.** **Admiration** **Selfe by Praises,** **Speeches,**

**To others by** **Actions,** **Sufferings,**

First, we glorifie God by acknowledgement, which is more than knowledge, *Rom. 1. 21.*

The Wise Heathens that knew God did not acknowledge him nor demonstrate him accordingly. They knew God, *verf. 21.* but regarded not to acknowledge him, *verf. 28.* then to our knowledge of God, we must joyn an acknowledgement, whereby we shall glorifie him.

This acknowledgement must be free, else we differ not from the devill; which acknowledges God upon constraint; so wicked men may acknowledge God by constraint.

The truth of this free acknowledgement will appear by our Admiration and Praises.

**Qu. What is Admiration?**

**Ans.** To Admire, is to wonder, to marvill.

*Mark 1. 24.*  
*Judges 1. 7.*

**Question.**  
**Answer.**

*Consider,* 1. The Subject is the Admirour.

2. The Object admired.

3. Then how to attaine admiration of God.

1. First, the Subject that admires, is the reasonable creature: for the unreasonable creature is not capable of actual Admiratiō: the unreasonable creatures may be frighted, or amazed, as Horses, and any other beasts, and also Birds, and Fishes: But Admiratiō requires Reason, Deliberation, and Consultation. Then 'tis plaine, Angels, and Men only are the Subjects of Admiratiō.

2. Secondly, the objects of Admiratiō are either Supreme, or Inferiour: the Supreme is God, the Inferiour, are the creatures of God. We must not admire Positives, nor Comparatives, but Superlatives; things most excellent, things excellēg. We admire things beyond our capacity, when our Reason can stretch it selfe no further: As we see, little children seeing curious workmanship, the poore children are amazed, and admire how 'tis done, they much honour, and reverence the Artist that made the worke.

3.  
*Question.*  
*Answer.* 1.

Thirdly, how to attaine Admiratiō of God is showne. We must pray for the Spirit of illumination, to see excellency in God. Ephes. 1. 17. That the Spirit of wisdom and knowledge may enlighten the eyes of our hearts, that we may know what is the glory of his inheritance in the Church.

We must be governed to divine Meditations, as David in the 8. Psalm. He saith to Meditation, then to Admiratiō. So in Psalm 104. His Meditation, concludes in Admiratiō. Oh Lord, how wonderfull are thy worke.

Psalm 104. 1. 24.

Oh Lord, how wonderfull are thy worke.

We must learne to silence our Reason; we must admire where we cannot comprehend; as Rom. 11. 33. Oh the deepnesse of the riches both of the Wisdom and Knowledge of God.

*Quest.*  
*Answer.*

Wherein is God to be admired?

1. In his Essence: secondly, in his Attributes: thirdly, in his Workes.

1. In his Essence, having his being of himselfe; absolute.

lute.

lute, independant, blessed, immutable.

2. Also, that there are in the Divine Essence a Trinity of Persons.

How shall I raise my admiration to the highest pitch? To meditate of his Wisedome, and Knowledge.

First, admire the largeness of it; for hee knows all.

Prov. 15. 11.

2. The perfection of his knowledge; hee knows the Causes, Concomitants, Fruits, and Effects; insides; he knows the motions and inclinations of all men, of all things. *Acts 15. 18.*

3. Admire the manner of his Knowledge; not by Doctrine, Relation, Experience, but without means.

4. Admire the celerity and swiftnesse of his Knowledge at once, in a moment: Hee knowes things past, present, and to come.

5. The certainty of his Knowledge; he cannot be deceived; he foresees all inconveniences, he knowes things and persons as they are: no apparitions, nor pretences, nor fainings, nor dissemblings can delude him.

6. Admire the Eternity of his Knowledge, before all time; before there was a World: Hee knew himselfe to be most perfectly happy, and blessed; and knew that he would make a world, and knew all that man should act on the stage of this world; and as he did purpose, so all things must come to passe, according to his foreknowledge and Decree.

*Acts 4. 28.*

*Ephes. 1. 11.*

7. Admire the Efficacy of the Knowledge and Wisedome of God: From his Knowledge he decreed, then did worke: so the Heavens, Earth, Seas, and all their ornaments were created, are preserved: the variety of his creatures, argues his unsearchable Wisedome; and their order, uses, and ends appointed them, calls for our Admiration.

By this we may see, what cause wee have to admire God, and if one of his Attributes doe cause such Admi-

ration, what would it worke on us, to meditate on the rest; as his Power, Glory, Holinesse, Justice, Invisibilty, immutability; this requires a large Volume, but I intend brevity.

How may I further admire God?

Quest.  
Answ.

I will give one straine more to winde up the heart; that is, to admire *Christ* incarnate, how hee is, the begotten Sonne of God. *Psal. 2. 7.*

1. Admire it in this; hee was begotten of the Father, yet is not after the Father in time: Men beget those that come after them, but here 'tis not so; therefore to bee admired.

2. Men beget children, which may be divided from them; but *Christ* is so begotten, that he is undividdall; *He and the Father are one. John 10. 30.*

Acts 4. 27.

3. Men so beget, that there is a diminution of their substance, and a conveighing of the corrupt Nature: But *Christ* is begotten without diminution of the substance of the Father, and free from all corruption: *Hee is the holy Sonne of God.*

Equall in Eternity.

4. Men beget children, which are their inferiors: but *Christ* is begotten, yet equall with the Father. *Phil. 2. 6.*

Glory.

1. *The Father is eternal: Psal. 90. 2. So is the Sonne eternal. Isai. 9. 6.*

Power.

2. *The Father is glorious: Acts 7. 2. So the Sonne is glorious. Iames 2. 1.*

Adoration.

3. *The Father did create: Gen. 1. 1. So the Sonne created. Col. 1. 16.*

4. *Angels doe honour the Father: Isai. 6. 3. So Angels doe honour the Sonne. Heb. 1. 6.*

5. A Father begets a Sonne, but yet communicates not his whole Essence to him: but *Christ* is begotten, yet partakes of the whole Essence of his Father, therefore admirable.

6. A Father begets one that is another person, another thing



thing distinct from him selfe: But the Lord Christ is begotten, another person, yet not another thing; he may be distinguished, but not divided: Thus wee acknowledge God by Admiration.

Secondly, we acknowledge him to him selfe, and so doe glorifie him by our praises. *Psal. 50*, last verse.

Here consider,

1. Who they be doe praise him.
2. How they praise him.
3. For what they praise him.

First, who praise him:

\*Tis the Saints praise him. *Psal. 145. 10.*

1. 'Tis they have the most cause.
2. And the best abilities.
3. And the onely acceptance.

Secondly, how they praise him:

1. They praise him freely, and cheerefully. *Psal. 63. 5.*
2. Vprightly, and sincerely. *Psal. 119. 7.* Hence 'tis, they praise God with their Soules, *Ps. 103. 1* with their Hearts. *Psal. 9. 1.*

3. They praise God frequently, on all occasions. *Ps. 71. 6. Psal. 119. 164.*

4. They praise him constantly. *Psal. 145. 2.* Hence 'tis, when they lose their comforts, yet God loses not his praises. *Iob 1. 21.*

Thirdly, for what they praise him.

1. For his owne Excellency.
2. For his glorious workes.
3. For his mercies.

First, for his owne excellency.

1. He is the soveraigne Lord God over all, *Rom. 9. 5.*

the



the ruler of the world, *Zach. 4. 14.* Hence it is, that Greatnesse, and Glory, and Power, and Victory, and Praises, is attributed to him who is head over all, *1 Chro. 29. 11.* He is to be praised as the onely potentate, *1 Tim. 6. 15.* He is to be praised that is high and excellent, *Isai. 57. 15.* He it is, is glorious in Holinesse, *Exod. 15. 11.* and worthy to receive Honour, and Glory, and Power, and Praise, *Revel. 4. 11. Revel. 5. 13.* All his glorious Attributes, both Communicable, and Incommunicable, calls for our frequent praises.

*Secondly, he is to be praised for his workes.*

For they demonstrate his eternall Power and Godhead. *Rom. 1. 20.* Hence it is, that he is praised for creating all things, *Rev. 4. 11.* His workes both of Creation and Providence, do shew his Wisedome, Power, Goodnesse, &c.

*Psal. 136. 14.  
Psalme 136.  
Psalme 194.*

The workes of God stirred up *David* to praise God, both for the making of himselfe, and for the making of other creatures, and for the government of the World.

*Thirdly, God is to be praised for his mercies,*

*Psalme. 100. 4. Psalme 136. 1.*

*To quicken us to this duty, consider :*

1. The freenesse of his mercies, they are bestowed without our deserts : his will is the cause of his mercy. *Rom. 9. 18.*

2. The multitudes of mercies, of all sorts, temporall & spirituall, on every faculty of soule, and member of our bodies, mercies on our names, estates, families, friends, those neare and deare to us.

3. The constancy of his mercies, they are renewed every morning, *Lament. 3. 23. We are laden daily with benefits, Psal. 68. 19.*

4. Consider mercies comparatively : we are in health

# Of Glorifying God.

17

health; others are sicke, yet we have sight; others are blinde: we have the Gospell; others sit in darknesse, &c.

Thus we see God is glorified by Admiration, 'by Praises.

Lastly, he is glorified by thanksgiving; *Memor.*

In our Speeches.

In our Actions.

In our Sufferings.

First, in our Speeches to men.

1. By declaring his workes, *Psalm 105. 1.*

2. To instruct our Children that they may praise God, *Psalm 78. 4.*

3. To make publicke confession of our finnes, if they have caused publicke scandall, *Isaiah 7. 19.*

4. To make publicke confession of Religion, being called, *Psalm 119. 46. 2.* Read the marginal Note.

1. *Pet. 3. 15.* *And ever ready to give an answer to every man that shall demand of you the reason of the hope that is in you.*

Secondly, we must glorify men before God.

God is our Father.

1. By our godly conversation; let us go well to do good works before them; to urge them to glorify God, *Matthew 5. 16.* to cause men to say, This

a good God, a good word preached, a good Religion professed; because they doe see good works expressed.

2. In particular, to honour God with our riches, *Prov. 3. 9.* to maintaine Gods Worship. *Exod. 25. 20.* Also

to do good to his ministers; *2. King. 4. 10.* that they may be encouraged in the Law of the Lord. *2. Cor. 3. 1. 4.* to

to do good to many poore, *Exod. 22. 21.* what thanks may be rendered by many, and God may be praised and

glorified; *2. Cor. 9. 12, 13.*

D

Third-



He can put an end to the Creatures, and give them subsistence againe: so then he subsists of himselfe, and all Creatures doe subsist by his will and power, and no otherwise.

3. The manner of subsisting. The Father subsists first, not in time, but in order.

In the manner of working, the Father works from himselfe, the Sonne from the Father, the Holy Ghost from them both. They differ in their Personall proprieties: The Father subsists unbegotten, the Sonne begotten, the Holy Ghost proceeding.

Time.

Manner.

Proprieties.

The Uses are these.

1. To show us the difference of Gods Subsistence, and ours: He subsists of himselfe, we by him: He is before time, we in time: He subsists independent, we depend from him: He subsists without composition, and is immutable; we are compounded of the foure Elements, in regard of our bodies; of body and soule, in regard of our persons: He subsists without means, we by means, and his blessing on means: He is alwaies the same subsisting, we must be dissolved, buried, raised, glorified, and subsist eternally by him.

2. Use. This shewes the impotency of Gods servants; he ever doth subsist, he direct them, to protect them, to enrich them, and to reward them. Great men on earth doe not subsist alwaies, sometimes their wealth decays, sometimes their health decays; they betraying themselves, their followers cannot honourably subsist: But it is not so with the Lord, he cannot decay in riches, nor time; he subsists alwaies, he is ever the same.

3. Use. In our decays let us have recourse to God, he alwaies subsists, and beares up the whole World: we need prayer more than shifting; and using unlawful means in our decays; God can make us subsist in life, *Psalm 66.* *glad in grace, Psalm 47.* 12. Let us there;

for in our dayes have recourse to him, that wee may  
submit.

## Of the Simplenesse of God

**H**ere are properties attributed to God for two causes: one to make himselfe the better knowne to us; the other to distinguish him from other titular gods, and from all other things.

Simple itself is one of the incommunicable properties of Great Firm Technological word, used for demonstration or distinction.

What is meant by Simplicity?  
 1. The Gage of a Simple man  
 2. Conclusions drawn from  
 3. Facts  
 4. For Education

Set. I.

**T**he simple among men is a want of wit & capacity and want of discretion. Prov 14 To give to the simple sharpness is wit: *Here we reads it a child: In this reads a fool, because both Children and Fools are simple of such, 'tis spoken Prov 9:16. He is simple that is simple of him come hither. The simple does as both unskillful hand easily provided.*

2. Simple, is to be plaine hearted, voyde of wicked plots and devices: *This Lord preferres the simple ones,* Psalm. 116. 6. *These are simple concerning euill,* Rom. 16. 19. *These art, as if they knew not how to deceiue* this is a commendable simplicity. Thus we see that simplicitie is to be voyd of parts, or to be voyd of the abuse

# Of the Simplicnesse of God.

21

of those parts of Wit and Knowledge that is bestowed on us.

3. Simplicnesse is a singlenesse without composition, or mixture, opposed to that is double, or of severall kinds, or sorts. Water is a Simple, but put into it Salt, or Wine, 'tis a Compound; because there are more kinds than one. To be a Simple, wee take it to bee without guile, fraud, or deceit. 3. Sam. 15. 11. *There were mischief in his heart, he was not upright in his words.*

Secondly, That God is of a simple Nature.

GOD is of a simple Nature; Hee is a pure Essence, called *I am, that I am.* Exodus 3. 14. *Light and is without all darkness.* 1. Joh. 1. 5. There is in God no mixture, or composition in the least degree: Hee is one God, Light without darknesse, strong without weakness, wise without folly, pure without the least spot, upright without guile, &c.

Thirdly, Conclusions drawne from Gods Simplicnesse.

1. **W**E gather hence, that there is perfection in him; He is simple of himselfe, without any addition.

2. Being a pure simple Essence, hee must needs be invisible: Our eyes are not able to behold a Spirit that is created, much lesse him that is a most pure Spirit, excelling them all in the simplicnesse and purity of his Nature.

3. He must be eternall, and everlasting, 'tis Compositions doe bring a dissolution. God is simple without composition, therefore uncreated, and incapable of dissolution.

4. Hence wee may gather, that God is immutable. That which changes, is by adding to it, or taking from it.



is; but God is a ſimple Eſſence, ſo pure, and perfect, that nothing can be added to him, nor taken from him.

Sect. 4.

Queſt.

**T**O be ſimple, is to bee of ſingleneſſe of one ſort: How is God ſo, ſeeing there are three perſons in the God-head?

Anſw.

If there were a Triplcity in the God-head, there would be ſorts of perſons: but 'tis a Trinity of one intire ſimple Eſſence. 1. *Iohn* 5. 7. *Theſe three are one*: one in Nature, Time, Operation; diſtinguiſhed, not divided.

Object. 2.

You ſaid, God is wiſe, without folly; ſtrong, without weakneſſe: but *St. Paul* ſaith, *The fooliſhneſſe of God is wiſer than men, and the weakneſſe of God is ſtronger than men.* 1. *Cor.* 1. 25.

Anſw.

It is an Ironical ſpeech, by way of ſuppoſition. The learned Philoſophers accounted the preaching of the Goeple fooliſhneſſe, and but weakneſſe: But *St. Paul* ſhews, 'tis Gods Wiſedome, and Gods Power: Let them in their madneſſe account it fooliſhneſſe, yet the fooliſhneſſe of God is wiſer than men: let them account it weakneſſe, yet they ſhall finde Gods weakneſſe ſtronger than men. All their Philoſophy in their Wiſedome and ſtrength of Arguments, cannot open mens eyes, and convert mens ſoules, and bring them to Salvation, which the Goeple can doe. *Acts* 26. 18. *Iames* 1. 18. *Rom.* 1. 15.

Queſt. 3.

If God be a ſimple, and individuall Eſſence, how could the Sonne take fleſh of the Virgin, without being divided, and ſeparated from the Father, and Holy Ghoſt; ſo there is mutation and alteration in the Trinity?

Anſw.

This is a Myſtery, rather to be beleaved, than diſputed. 1. *Tim.* 3. 16. *Great is the myſtery of godlineſſe, God manifeſted in the fleſh.* After *Chriſt* became man, hee loſt not his God-head: For hee knew mens thoughts, wrought miracles; had Divine Adoration given to him.

He



# Of the Simpliciteſſe of God.

123

He was ſaid John 3:13. to be in Heaven, and to be equal with God. *Phil. 2:6.* and in ſtr. 46 he ſaith; *How and like of Father was one.* So ſtill the ſimple individuall Eſſentia mania intine, and immutable; though by the purpoſe and conſent of the Trinity, the ſecond perſon became incarnate.

Are not Angels ſimple Eſſences, being without mixture, or compoſition, and pure Spirit?

Queſt. 4.

They are ſimple Eſſences, and pure Spirit, nearer to Gods Nature of all other creatures; yet come ſhort of God by farre: For they have their ſubſtances, and their faculties, and qualities created, and mutable in their Nature: For Angels have falſe, though now the elect Angels are confirmed by Grace. God excels them: He is a ſimple Eſſence, without quality, or properties; only theſe are attributed to him for our capacity.

Anſw.

But the Scriptures uſe not the word *ſimpliciteſſe*; nor *ſimplicity*, nor *Trinity*; why then doth the Church make uſe of them?

Obiect. 5.

Words are notes, and marks of things ſaith the Hea-then. And another ſaith, *whofoever is ſeruant of letters, ſhall never judge well of things.* If in the Scrip- ture we finde not words, nor ſences, wee are not to uſe them.

Anſw.

Ariſtole.

1. They are uſed for Expoſition, Explanation, In- terpretation, to make hid things more obvious; and darke things more perſpicuous.

2. They are uſed for Confirmation, that the truth may be cleared, and errors confuted. If that Heretics did aſſert the Truth, they would imbrace the phrases of the Church, and Theological Terms, which doe unfold, and demonſtrate the Truth.

3. Finally, *Uſe for ſtyle.*

Sect. 5.

1. Seeing in the Definition there is a good Simplicity, ſand a bad, let us labour for that ſimplicity God

Rom. 12. 8.

approves to be simple. Concerning evil, the less we contrive evil, and the more untoward we are to suffer, the better Proficients we shall prove. And as we should be simple in committing evil, so should we be simple in doing good; and as among other good Duties, so in our Almshouses, to give with simplicity; that is,

1. Faithfully, if we be trusted.

2. Humbly, without vaine glory.

3. Gently, giving good language.

4. Impartially, where needs are equall.

5. Approving our selves to God.

6. Remembering God's service.

Learn to study the excellency of God in his simple pure Nature, that we may the more admire him, and give him the glory.

Use 2.

Let us reflect on our selves, and be humbled, who are compounded of the four Elements in our bodies, and of body and soule in our persons, so we are alwayes subject to mutation, and dissolution.

Use 3.

Use 4.

Let us labour for sincerity, that is, our best simpleness; to be sincere, without mixture; upright, without hypocrisie and dissimulation so much as we can, so shall we the more resemble the Lord.

Quest.

Answ.

How may we attaine this sincerity?

1. Get assurance of justification; for there is guile in the heart, if the party be not justified. *Psal. 32. 1, 2.*

2. Get the strongest persuasions we can of Gods presence; this will make us upright, without doubling, and dissimbling. *Gen. 17. 1.*

Gen. 17. 1.

3. Look to all God's Precepts, commands of Piety, Mercy, and Sobriety: look to both Tables, to all duties: Not to pick and chuse, and take liberty where we may gain praise, or pleasure, or profit. *Psal. 119. 6.*

4. Examine often the temper of the inner man, observing our aymes and intents, and our manner of performance of duties.

3. Pra



There his Eternity is set downe to our capacity : Hee is said *To be from everlasting*. Psal. 90. 2. *The God of antiquity*, or *the eternall God*. Deut. 33. 27. *A King of old*. Psal. 74. 12.

In respect of his eternity after Time, he is called *The everlasting God*. Rom. 16. 26. *An everlasting King*. 1. Tim. 1. 17. *To live for evermore*. Revel. 10. 6.

### Thirdly, Questions answered.

Self. 3.

Quest. 1.

Ans.

There was a beginning.

Object.

Ans.

Psalme 33. 9.

Quest. 2.

Ans.

Psal. 2. 4.  
1. Kings 8. 27.

John 7. 5.

**W** As not the World eternall, as some Philosophers have held in opinion?

No; it was made in the beginning of Time : When there was no Time, there was no World. Gen. 1. 1. *In the beginning God made the Heavens, and the Earth : Before that time nothing did appeare*. Heb. 11. 3.

They say, *Of nothing comes nothing* : therefore the World was eternall.

Of nothing comes nothing in Mans works, because he cannot worke without materials. Of nothing comes all things in Gods worke, because he is a Creator, and his Word gives a being to that which had no being : and his command produces substances, and reall things : as they appeare, and are in being, though they were form'd of nothing.

Were not the highest Heavens eternall, and the dwelling place of the Lord?

The maker thereof is God. Heb. 11. 3. *It was made without hands*. 1. Cor. 5. 17. *Heaven is a glorious and excellent place, yet a created place* : 'Tis called *Gods dwelling*, because he is manifested there in glory : For *the Heaven of Heavens, the most excellent Heaven cannot containe him*. He had glory & excellency before Heaven or the World had a being : himselfe is eternall, who had no beginning. The Heavens are not eternall, which had a beginning.

Are not the Angels eternall, of whose Creation 'tis not spoken of in *Genesse*?

Quest. 3.

'Tis spoken of inclusively, though not so plainly: *Gen. 2.1. The Heavens and Earth were finished, with all their Hoasts.* In the Hoast of Heaven the Angels are not excluded: for elsewhere they are called the *Lords Hoast*, *Gen. 32.2. So Ps. 103.20, 21. Praise the Lord yeo his Angels, praise the Lord yeo his Hoasts.* And that the Angels were created, read *Psal. 148. 2. Praise the Lord yeo his Angels* : vers. 5. *For he comanded, and they were created.* *Col. 1. 16. By him were all things made, things visible, and invisible; whether Thrones, or Dominions, Principalities, or Powers.* Angels are not eternall, but were created, and had a beginning.

Ans.

Saint *Iude* speaks of eternall Fire; *Iude* vers. 7. Had that Fire no beginning, as it shall have no ending?

Quest. 4.

It had a beginning; that which Saint *Iude* calls eternall, Christ calls *Everlasting fire*. *Math. 25. 41.* 'Tis eternall in a future relation; it is prepared saith Christ, for the Divell, and his Angels: being prepared, fitted, and made ready, proves it had a beginning. Note, that *Eternall*, and *Everlasting*, one word is used for both.

Ans.

Math. 25. 41.

Iude 7. verse.

What is the reason, that men knowing, that on this moment of time depends their eternall estate, yet are carelesse for Eternity, and mende so much the present time?

Quest. 5.

The Reason is, from the great subtilty of Satan, that separates betweene end and meanes: If wee thinke of eternall fire, hee will labour to sate these thoughts out of our mindes; yet provoke us to sinne, which is the meanes, hiding the end. In good things hee will keepe us from the meanes, as Repentance, Prayer, Holinesse; yet gull us with a fooles hope, we shall have the end as well as those that are most painefull, and vertuous.

Ans.

2. Temporall things are next us, and wee are too much led by Sense and Appetite; like *Esaie*, wee will

3.

Quest. 6.

Answ.

have the present portage, with losse of the future blessing

By what Arguments can you prove Gods Eternity?

1. That which is the first Cause of all Causes, must be eternall, which is God: He that gives the being to all creatures, must be an eternall being.

2. He that had glory before there was a World, and decreed, and purposed before the foundations of the World were laid, must be eternall: But God had glory before the world; *Iohn 17.5.* 2. *Tim. 1.9.* and purposes, and decrees before the world; *Ephes. 1.4.* and therefore is eternall.

3. He that can give eternall rewards, must be eternall; But he can give eternall rewards: *Rom. 8. last vers.* therefore is eternall.

4. To be eternall, is to have no beginning, no mutation, no end. God had no beginning, with him is no shadow of change, nor possibility of end.

How is Christ the eternall Sonne of God?

In respect of his God-head, *Hee was before the world*: (*a Synecdoche*) a part for the whole; *Mount* raines put for the *World*. *Prov. 8. 25.* And for the future, *None can declare his age*: *Esay 53. 8.* *For hee liveth for ever.* *Rev. 1. 18.* The Heavens have a duration without life: The devils have an everlasting being without joy: The Angels have an everlasting joyfull being, but their being is dependant, and by participation; and their joy successive. The Saints in Heaven have a blessed everlasting being, but not perfect till the Day of Judgement: But Christ is eternall, and hath with his eternity and everlastingnesse life, joy, perfection, fulnesse at once; so that he is eternall as God.

Quest. 8.

Answ.

Shall Judgement be eternall in pronouncing, with the great Sessions last for ever? 'Tis *Heb. 6. 2.* called *Eternall Judgement.*

Eternity follows the Sentence; an eternall God judges, and he gives an everlasting Sentence; pronouncing



to the Elect eternall life, and to the reprobate eternall destruction.

2. 'Tis Eternall judgement, in opposition to temporall judgements here; then time is out, and we have nothing to doe with it: all wee have to doe, is about Eternity.

3. As a Malefactor, when he goes to the barre, wee say he hath received his death; notwithstanding the execution followes after: so then men receive their eternall sentence: 'tis eternall judgement.

Fourthly, *Uses to Edifice.*

1. **T**His shewes us the difference of Eternity in Time. First, Time had a beginning, and shall have ending: Eternity hath neither beginning nor end.

2. Time is measured by ages, yeares, moneths, dayes, houres, minutes: Eternity hath no measure, nor portions, nor limits; it passes and out-strips the bounds of our thoughts; nor can our reason gage it, nor our understanding fathom it.

3. Time is alwaies in motion, as the spring of a Watch, never stands still till it be consumed, and brought to an end: Eternity hath no motion, it ever stands still, its alwaies the same.

Secondly, here we may gaine a glimpse of Gods excellency; he is Eternall, without beginning or end: Angels had a beginning, so had men, and the world; Angels and men shall have an everlasting being, after once they have begun to be from him that never began to be: who is the Eternall God.

Therefore, when we thinke or speake of Gods Eternity, we should conclude as St. Paul. *To the King Everlasting, Immortall, &c. to him be glory for ever, Amen.*

Thirdly, we may in Gods feare learne two profitable

Sol. 4.  
Use 1.

Use 2.

3. d. 1.  
4. d. 2.

Use 3.



lessons; considering we have time, and are swiftly passing to Eternity.

1. Consider the brevity of Time.

2. Take the opportunity of time.

1. The brevity; Time is short; whilst I am in thinking, some of it is gon: mans whole life is numbred by dayes, compared to a spanne, a bubble, *is a wind that passeth away*. If we could seriously alter our thoughts, to thinke more of the shortnesse of Time, it would alter our mindes to doe the second thing: which is,

2. To take the opportunity of time: Men may have time, yet want the opportunity: as sicke men, and old men: but we that have the opportunity of the Gospell, and of health, and Christian society, and other sweete and seasonable opportunities to have communion with God, to exercise mercy, to further others in godlinesse; Oh let us be wise for Eternity and make an holy advantage of the opportunities of Time as much as we can, and more than we have done.

This should forcibly urge us to labour for humility; because he that dwels in the Eternity, dwels also with the humble. *Isai. 57. 15.* And that we may be humble indeed and enjoy his presence;

1. Let us draw neare to him with our understanding, striving for clearer apprehension of him: This made *Isai. ah* humbly to cry out, *wa is me, I am undone, I am a man, of polluted lips*: and *Iob* to abhorre himselfe; the sight of God made both of them humble.

2. In all the good we enjoy, of graces or naturall abilities or riches, to looke on both ends as well as on the middle; we are receivers, and must be accomptants; and great receipts must have great accompts: this well thoughts on will humble us.

3. Keepe a constant confession of sinnes daily, and often judge ourselves, for our sinnes worthy to bee stripped of all our excellences, and to be cut off with infamy.

4. Carry

Use 4.

Isaiah 6.  
Iob. 24.

Ezek. 26. 31.

*Of Gods Eternity.*

51

4. Carry about us in our mindes two, or three, or foure of the great M<sup>r</sup>s sinners that are yett in the world; looke on them with their circumstances, & it will be a powerfull meanes to humble vs.

5. Compare our selves with them which are more found in judgement, soft in heart, poore in spirit; which are more spirituall in prayer; more heavenly in disposition, more zealous and diligent, and fruitfull in good workes. The Cloth that is fine compared with haire-cloth, or sack-cloth is but coarse if ye compare it with Cambricke or Lawne.

Lastly, let us direct our course with care and wisdom, the most compendious way to Eternity.

1. To encrease as much as we can in laiving knowledge: for those that God brings to eternall life, he illuminates with his Spirit: so that those which were dead, becometh that life which endureth eternally: for he concludes, and is perfected in eternitie.

2. **Get the birth of God's elect, 6. to lay hold on**  
**Christ, and rest upon him, thereby believing we may**  
**come to eternal life, John 3:16.**

By patience to continue in wellholing, I came patient-  
ly to forbear finfull pleasures and profits, and patient-  
ly heare oppositions, inconviniences, and crosses; and  
doe well; looking as the wife, the mother, and the  
maimes; joyne to all constancy, they shall live longer  
in grace, and in the love of God.

it can do all; secondly, it can have no less; thirdly, it  
above all; fourthly, it is common to all; fifthly, it is  
itself freely.

Nothing can resist him, his power being  
and where can he will, that is  
He is able to do what he will, that is  
Secondly, God is Omnipotent.

## Of Gods Omnipotency.

1. *What Omnipotency is.*
2. *God is Omnipotent.*
3. *The witnesses of his Omnipotency.*
4. *Questions answered.*
5. *Applications to edifice.*

ScB. I.

### First, What Omnipotency is.

**T**O be Omnipotent, is to have all power, to have all might and strength. There is Power, and Omnipotency; Power can doe much, but Omnipotency can doe all: Power may be suppressed by a greater power; Omnipotency is above all, and all subject to it: Power is communicable; Omnipotency is incommunicable. To have Omnipotency, is to have all power, all strength, all might, all sufficiency; to doe what is willed, to preserve what is done; to produce out of nothing. Omnipotency hath no difficulties, no lets, or oppositions; it workes freely, and perfectly, without co-workers, or materials: If that any time it uses any, yet 'tis most certaine it needs no helpe. So then Omnipotency, first, it can doe all: secondly, it can have no let: thirdly, 'tis above all: fourthly, 'tis incommunicable: fifthly, it worketh freely.

ScE. 2.

**Secondly, God is Omnipotent.**

1. **H**E is able to doe whatſoever he will, *Pſal. 115. 3.*  
and more than he will. *Matth. 23. 9.*

3. Nothing can resist him, his power being supreme.

# Of Gods Omnipotency.

33

*Iob 9. 4. Who hath beene fierce against him \*, or hardened his minde against him †, or struggled with him ||, and prospered?*

\* G. B.  
† Trem.  
|| Hier.

3. His power is above all the Angels which excell in strength. *Pfal. 103. 20. They are at his command, Psal. 104. 4. and are subject to him. 1. Pet. 3. 22. The devils apprehend this power of God: Doe tremble. James 2. 19. Men have their power given them from him. Iohn 19. 11 Rom. 13. 1. For other creatures, He saith to the deepe, be dry. Isai. 44. 27. He commands the Earth, and it opens her mouth. Numb. 16. 30, 31, &c.*

4. His Omnipotency is incommunicable: the creature may doe much by permission, or commission; but Gods power is his strength and honour. *He is the strong God \*, Gen. 33. last verl. Or the most strong God †: the mighty God ||: His strength being his glory, hee will not give it to another: Isai. 42. 8. Therefore is incommunicable.*

\* Trem.  
† Hier.  
|| G. B.

5. He being Omnipotent, workes freely, without compulsion, without assistants, without materials.

|| Without compulsion; *His owne Will was the cause that he made all things. Rev 4. 11.*

|| Without Assistants; *He alone spread out the Heavens, Iob 9. 8. And alone stretched out the Earth by himselfe. Isai. 44. 24.*

|| Without materials; *Hee formed all things out of nothing. Heb. 11. 3.*

6. He workes perfectly; *Deut. 32. 4. Perfect is the worke of the Lord. So that Hee made the Heavens, and the Earth, there is the worke; and finished them with all their Hoasts, there is the perfection. Gen. 2. 1. Called All their Ornaments in the Prayer of Manasse.*

Thirdly, *The witnesses of Gods Omnipotency.*

1. **W**E have his owne Testimony: *Gen. 1. 1. I am God Almighty.*

Self. 3.

F

3. Testi-

2. Testimony of Angels; *Revel. 4. 8. Holy, holy, holy Lord God Almighty*, thus they cry.

3. The Testimony of men: *Iob 25. 2. Power and feare is with him. 1. Chron. 29. 11. Thine O Lord, is greatnesse and power.*

4. The frame of Heaven and Earth: *Rom. 1. 20. The Creation doth wisse his eternall power.*

Self. 4.

Fourthly, *Questions answered.*

Quest. 1.

1. IF God have all power, then how can the creature have any; if the creature have any, how then hath God all?

Ans.

God hath all power of himselfe; the Creature hath power from him by participation. The Fountaine hath all the water, and the streames receive from the Fountaine: The Sun is the fountaine of light, yet communicates of that light to the Moone and Starres.

Quest. 2.

How can God doe all when tis said, *He cannot lye?* Titus 1. 3. *He cannot deny himselfe. 2. Tim. 2. 13.*

Ans.

That is, because he is Omnipotent: if hee could deny himselfe, or not be, he were impotent and weak. The Sunne cannot (as it is) be darke; God is unchangeable, powerfull, Almighty; alwayes the same; and cannot cease to be, nor can he doe unlike himselfe; hee cannot doe any thing that derogates from his glory, because he is Omnipotent.

† God cannot disabie himselfe.

Quest. 3.

Why was God sixe dayes in the making of the world: He being Omnipotent, could have made it in an houre, or a moment?

Ans.

1. It was his pleasure to be sixe dayes; that is a sufficient answer.

2. God gives us example, to goe about our worke with deliberation.

3. He affords us matter of Meditation by severall daies workes.

4. He

He gives us an example to keepe the Sabbath, in resting the seventh day.

Did not God being Omnipotent make more worlds: tis said *Heb. 1. 10* by whom he made the Worlds?

Quest. 4

Tis plurall, because there is the Celestiall world, and terrestriall world, this present world; and heaven called the world to come: no question but in God was the Idea of more worlds.

Answer.

Why did not God, having all power, and all creatures at his command use the ministry of Angels to gather, and convert, and save his elect by preaching?

Quest. 5

The Angels are too terrible to us: *1. Chron. 21. 20.* therefore they have wings to cover their faces, to signify we cannot behold them, *Isaiah 6. 3.*

Answer.

2. God tries our subjection: whether we will submit to his ordinances. Peter must teach *Cornelius*; not an Angel: *Philip* must instruct the *Eunuch*; not an Angel: *Paul* must instruct the *Philippians*; not an Angel.

Ans. 10.

Ans. 2.

3. The weakness of the instruments is the glory of the worker. God exercises his power in those earthen vessels, that his strength might be magnified in their weakness; though the vessels be earth, yet the treasure they bring us is heavenly. *2. Cor. 4. 7.* Though Ministers be weak instruments, yet they are Gods Embassadors, and the glory of Christ, *2. Cor. 8. 23.* which he hath chosen to set forth his glory in the world.

Why doth God suffer his Church to lye so long in affliction, seeing he is omnipotent, and able to deliver speedily?

Quest. 6

1. Because his people before conversion did not speedily hear him, and turne, and obey him.

Answer.

2. Because they must by long afflictions; be soundly humbled, and fitted for deliverance.

3. To exercise their faith, hope, patience, prayer, and subjection.

4. To shew his power in supporting them in long afflictions.

5. To



Quest. 7.

5. To make deliverances the more sweete and welcome.

Why doth God suffer sinne to be in his children after conversion, he having power wholly to subdue it in them here in this world?

Ans.

1. Because hee hath reserved perfection for another world.

2. Because it is his pleasure we should be humble here all our dayes.

3. Because we prize the Lord Jesus highly, our sins tells us we neede a Saviour.

4. Because our corruptions are for our exercise, as the *Canaanites* to *Israel*: we must be in waite, here, for we have an enemy within us.

5. Though sinne remaine within us, yet by the power of Gods grace it doth not raigne in us: though sinne be in us as a scullion for a base use, tis but as the *Sibranites* exercised about hewing wood, and drawing waters: we are dayly mortifying, yet not as the command of it.

Quest. 8.

Why doth God suffer his children to dye, seeing hee is Almighty, and could translate them hence, from Temporall life, to Eternall?

Ans.

1. Because hee hath decreed and ordeined, all must die, *Hebrewes 9. 27.* and his electes must stand, *Psal. 33. 11.*

2. God deales favourably with us, though we dye temporally, because he frees us from eternall death.

3. The curse of death is taken away by Christ: *1. Thim. 3. 16.*

4. That we might all learne to hate sin, that brought death into the world.

5. Christ dyed, and entred into Glory: he is the Captaine, should follow our Captaine.

6. Though we dye, yet God he loves us, *Rom. 8. 38, 39.* and shewes us the greatest love, presently after



he hath taken away our lives, for then he receives us in to joy.

Fifthly, the uses to edifie.

Self. 5.

**T**O praise the Lord with all our strength, for his Almighty power: *Revel. 4. 11. Worship art thou O Lord to receive honour and glory, and power: Not that God receives from us the thing, but the praise, honour, and acknowledgement. 1. Chron. 29. 11. Thine, O Lord, is greatnesse, and glory, and power.*

Use 1.

To speake of his Power, and to make it knowne, that is the property of the Saints, *Psal. 145. 10. 11. What others doe extraordinarily on a suddaine motion, being amazed, as Nebuchadnezzar, Dan. 2. 33. & Darius, Dan. 6. 27. Let us doe constantly; that is, to make Gods power knowne.*

Use 2.

To worke our hearts to feare the Lord, because of his power: else we are very loose, and without understanding. *Job. 5. 21, 22. God calls us to feare him; because by his power he keepes the Sea within his bounds: when Job considered it, he saith, The Pillars of heaven quake at his reprove. Job. 26. 10, 11. and verse 14. Who can stand before his power? Math. 10. 28. He can shake them that can cast both body and soule into hell.*

Use 3.

Perfect love casts out feare. *1. John. 4. 18.*  
1. No man hath such perfection of love, but he hath some remainder of feare.  
2. St. Iohn speakes of the judgement day, then our love shall be perfect, and we shall have boldnes without feare.

Object.  
Answ.

3. Love casts out tormenting feare and perplexitie.

4. The perfect love of God, apprehended by us, casts out feare, and quiets our minde in the place.

Carwin Comment.  
on Epistle Iohn,  
page 231.

To learne to depend on the Almighty for preservation, who can preserve without meanes: as *Elias* forty dayes; by small meanes, as the widowes little oyle and flower in her cruse: Against meanes, as *Daniel* in the Denne: And for ordinary meanes let us desire his powerfull blessing on the meanes; *else we shall eate and not be satisfied. Hag. 1.*

Use 5.

This is terrible to wicked men, to have the Almighty against them: His power and wrath is against them that doe evill. *Eccle. 8. 22.* The consideration thereof is terrible to the very Devils. *7. am. 2. 19.*

Use 6.

Here is matter of Comfort.

1. In regard of our Prayers: we call on him that is able to doe abundantly above that we aske or thinke. *Ephes. 3. 20.* He that we pray unto, can quicken the soules of our wives, and children, and servants, *Iohn. 5. 21. Hee quickeneth whom he will. Ephes. 3. 1.*

2. Comfort in regard of perseverance: our strength shall be renewed, we shall runne, and not be weary; we shall walke, and not faint. *I. Iohn. 4. 31.* because God upholds us in our iniquity, *Psal. 41. 10.* the Garrison that keepes us is the power of God. *1. Pet. 1. 5.* and none can take us out of his hand, that is himselfe greater than all. *Iohn. 10. 29.*

3. Comfort in temptations: our strength is in the Lord, and in the power of his might: *Ephes. 6. 10.* 'tis he doth strengthen us in the inner man, *Ephes. 3. 16.* and when God helpe us with a little helpe. *Dan. 11. 34.* then our strongest temptations shall not prevale, but we shall be more than Conquerors: *Rom. 8. 37.* a vehement speech.

4. Comfort in afflictions: he that is almighty orders them for the kinde, whether on our soules or bodies, names or estates. *Amos. 3. 6.* *For there evil in the City, and the Lord hath not done it.*

2. For

## Of Gods Omnipotency.

39

2. For the measure, he orders them to be great, or small. *Ysa. 30. 11. I will correct their measure.*

† Moderately, or sparingly.

3. He orders the time: sometimes hee will have it but an Evening. *Psal. 30. 5. Sometimes 10. Dayes. Revel. 2. 10. Sometimes our sorrows shall be for Yeeres. Psal. 90. 15.*

4. He orders the deliverance: There was appointed time. *Psal. 105. 19. The prisoners shall be loosed out of their miserie.* Zach. 9. 10. And though our troubles be many and great, yet at last comes the Lord in his strength, and delivers us out of them all. *Psal. 34. 19.*

5. Hee is consolation in respect of Death, our bodies shall not a wayer, and consume; we must awake, and sing, though we dwell in the dust. *1. Cor. 15. 52. And our vile bodies shall be changed, and made like to the glorious body of Christ by this mighty power, which is both an absolute power, and an actual power. Phil. 3. 21.*

Luke 11. 37.  
Psal. 115. 3.

Let us abase our selves that are poore weaklings, and admire Gods power, which is

Use I. med

1. Proper. *Ephel. 6. 10.*
2. Exceeding. *Ephel. 1. 19.*
3. All power derived from him. *1. Chron. 29. 12.*
4. All power is subordinate to him. *2. Chron. 14. 11.*



## Of Immutability.

1. What Immutability is.
2. That God is immutable.
3. Proofs by Scriptures, and answers.
4. Applications to edifice.

First, what Immutability is.

Self. 1.

The word signifies a Constancy, it is to be without change, or alteration: where Immutability is in perfecti-

perfection, there must be no beginning. Beginning argues mutation from a not being to a being. Secondly, there must be no dissolution. Thirdly, no addition nor diminution. Fourthly, no weakness. Fifthly, no dependancy on another. Sixthly, there must be Omnipotency to overcome all impediments that may hinder, and Omniscience, to foresee all inconveniences, to prevent all errors that may cause a mutation.

Sect. 2.

Secondly, *God is immutable.*

**I**N his Essence *He is Jehovah, and changeth not. Mal. 3. 6.* He is eternall in being, nothing can be added to him, nor taken from him: He is independant, omnipotent, and omniscient; his Decrees stand. *Psal. 33. 11* and his purposes and actions have a constant course, and have not any possibility of change or alteration.

Sect. 3.

Thirdly, *To prove Gods Immutability.*

**I**T may further be proved by Scriptures, and Answers to Objections: By Scriptures, *James 1. 17. With him is no variableness, nor shadow of change.* So in *Numb. 23. God is not as man, that hee should change.* God is both infinite, and perfect.

Object. 1.

God is said to repent. *Gen. 6. 6. 1. Sam. 15. 11.*

Answ.

'Tis spoken for our capacity: The Scripture gives to God the properties of the creatures for our learning: Therefore God is said to have a Soule, *Isai. 1. 14. a Heart, 1. Sam. 13. 14. An Ear, Psal. 34. 15. An Hand. Isai. 59. 1.*

2. When men doe repent, they change their actions: God threatned *Niniveh*, and tells *Hezekiah*, hee shall dye; there was included, *Except Niniveh doe repent, I will destroy it.* *Hezekiah pray.* God wills a change, he changes not his Will. *Phineas* had a Covenant of the Priesthood.

*Ely's* sonnes by sin cut it off. God would establish *Da-uid's* Throne; yet for sin ten Tribes fell to *Yeroboam*, from *Reboham*, *Solomon's* Sonne, *Dauid's* Grand-child. In promises and threatnings which are temporall, we are to looke to something included, as well as expressed: So then the mutation is in us, not in God; as to those in a Ship near the Shore, the houses seeme to move, and the trees; but they stand firme, and the motion is in the Ship. *The Spirit of God moved on the waters. Gen. 1.* Is there not mutation whereas motion?

The Spirit of God sustained, and nourishd, and brought things to perfection in a constant motion, without mutation: There is motion in the Creature still in possibility of let, or change; but God doth honourably proceed in his purpose, and works without shadow of change. So then God is not a dead God, without all motion, but a living infinite God, constant and immutable in his motion.

God is said to be the *ancient of days. Dan. 7.* Was he once young, and is changed to be ancient?

With the Creatures time is as we are first young, and then by nourishment we doe grow, and Time brings us to be ancient: But God was ever ancient, yet ever flourishing in his vigour and strength. He is not capable of more perfection, he is the Lord of Time, and called ancient in regard of his Eternity.

God came downe to *Sodom* to see if their cry were true; that is, the cry of their sinnes. Did not he change his place to come downe?

1. It is a figurative speech: God filleth all places, he doth not goe, nor come; he knowes all things, he needs no inquisition to informe him.

2. God teaches us by this manner of speech not to believe too hastily the reports of grosse sinnes: Wee too often, and too lightly presume to give credit, and passe censure without probation.

Object. 2.

Answ.

Object. 3.

Answ.

Object. 4.  
Gen. 18. 21.

Answ.





Here is comfort unto us in respect of:

1. The God we serve is immutable.

2. The duties and services we do performe.

3. In respect of his love and mercy.

1. The God we serve is immutable: but false Gods are subject to mutation, and perishing: our God is the same: *Psal. 103. 27.* good, wise, holy, constant in his promises: *Heb. 6. 17.* his should aide to our consolation.

2. Here is comfort in regard of our duties which we doe performe: we have the immutable God to assist us, to accept us, to reward us: He that had respect to *Abel*, hath respect to us, comming in faith as he did: he is the same to us, as to *Moses, David, Herakibite*, our exceeding comfort.

3. In respect of his love and mercy, he is immutable: his love is an everlasting love: *Jer. 31. 3.* His mercy is an everlasting mercy: *Isa. 54. 8.* He may for a moment hide his face, and for our sinnes correct us with the rod: *open Psal. 89. 33.* but his loving kindness hee will never take from us: this is our comfort. his love is immutable: *John 13. 1. Rom. 8. 37. 38. 39.*

Let us labour our poore scabbling to be unchangeable in goodness, both in resolutions and actions this way.

Let us be soundly humbled, and broken in our hearts for our sinnes: sinne building have good foundations.

2. Let all our resolutions be conditionall, if the Lord assist me, if the Lord be present with me, by his grace, I will forsake such a thing, performe such a duty, beare such a crosse patiently: *Peter* hath failed, and so fell.

3. We must be well established and soundly grounded in the principles of Religion: For the unestablished professors prove unstable, and as empty houses, are tossed about with every waide of doctrine: *Ephes. 4. 14.*

4. We must be practicke Christians, to doe what wee heare;



heare, then shall we be stable, as those that build on a Rocke. *Matth. 7. 24.*

5. Our constancy is much furthered, by looking to the recompence of reward; this doth encourage us in our Race, to looke to the joy before us; this keepes us from perturbations within, and makes us overcome impediments without. *Heb. 11. 26. Heb. 12. 2. 2. Cor. 4. 17.*

6. We must delight in goodnesse: we are constant in that we delight in; men come to outward performances without inward delight, so the duties prove tedious, and they give over: therefore we must pray for a free spirit, that we may come with willingness. *Psal. 51. 12. Psal. 110. 3. Psal. 131. 1.*

7. Take heede of foure maine impediments to constancy.

1. Take heede of infidelity, for we live by faith, and walke by faith: Infidelity makes men to withdraw themselves. *Heb. 10. 38. and so depart from God: Heb. 3. 12.* This route hath two abominable branches; the one to say, *I shall one day perish: 1. Sam. 27. 1.* the other to say, *'tis in vaine to serve God. Malak. 3. 14.* When men beleeve not Gods assistance, acceptance, nor reward, how can they be comfortable or constant.

2. Take heede of ill company: *Peter* changing his company, lost his constancy: those that hold dangerous errors in judgement, or else live in grosse errors in practice, their selected society will either hinder us in our way, or turne us out of it.

3. Take heede of over-affecting the praises of men; for then we shall over-affect the reproaches of men, and so we may be brought to cease from those godly courses that God and our owne consciences doe call for, through base and cowardly feare of reproaches.

4. Take heede of omitting good duties: as to neglect Preaching, Prayers, Sacraments, Conference, Meditation, Humiliation, Thanksgiving: we rise by the use of means,

and



for man, he is finite; 'tis quickly resolved what are his compounds: For the gifts of his minde, or abilities of body, he hath his measure and limits; his body is anatomised, his soule defined in essence and qualities; and confined in his earthly prison, his dayes numbered; there is no resemblance of Infinitenesse in man, unlesse it be in his desires.

Seet. 3.

Thirdly, *God is infinite in his Essence and Properties.*

**H**ee hath an Infinite being independant, incomprehensible: the Heaven of Heavens cannot comprehend him; the Angels admire him: when we do think of his Infinitenesse, our apprehensions prove too weak, our capacity failes us, our thoughts returne as dazeled: *Finite* cannot comprehend *Infinite*: our meditation turnes to admiration: he is infinite in time, being eternall: infinite in place, filling heaven and earth: infinite in power, he can doe all that stands with the honor of power to doe: he is infinite in wisdom, knowing with one view all things past, present, and to come, most clearely, and fully, and perfectly, with their originals, natures, uses, and concomitants, issues, and conclusions.

Seet. 4.

Use 1.

Fourthly, *Wise to admire.*  
**H**ere see the excellency of God: We may say with the *Psalmist*, *Lord there is none like thee*, *Psalm 86.8*. There is no comparison betweene finite and infinite, *Matth. 19. 17*, *There is none good but God*: In comparison of the infinite goodnesse of God, none is good; yet simple men are said to be good: *Matth. 12. 35*. *Alth. 11. 24*. So in regard of Gods infinite purity; the statues are impure, *Job, 25. 5*. in comparison of his infinite greatnesse, the Nations are as nothing. *Isaiah 40. 17*.

Use 2.

This shewes us whither to goe for satisfaction: it is not finite things doe satisfie our infinite desires; we doe spend our thoughts and labours to get satisfaction in the creatures,

creatures, and all is in vaine. *Iſai. 55. 2.* There is an emptinesse in the creature; which made wise Solomon after all his search to conclude, *All is vanity. Eccles. 1. 1* The Bee flies from one flower to another, because shee seekes satisfaction: So vaine man hath many inventions; but still is unsatisfied. 'Tis this infinite God that gives it, his mercy can satisfie us betimes. *Psalm. 90. 14.* himselfe fills our hearts. The World is a Globe, our hearts a Triangle; there are still three empty corners for the Trinity to fill: Our infinite desires are plenarily satisfied with him alone that is infinite. Hence it was, that *Paul* and *Silas* having God; did sing in the Dungeon; when *Belshazzar* wanting him, did tremble at his Feast. Seeing infinitenesse hath relation to Gods Essence, and properties, we should be sparing in considering it singly, or simply; rather to meditate of it Relatively, as infinite Essence, infinite Wisdome, infinite power; which attributes may be considered in several places; in the best way is Brevity to avoyde *Barrology.*

## Of Omniscience.

1. What Omniscience is.
2. No Creature is Omniscient.
3. God is Omniscient.
4. Prooves by Scriptures and Reasons.
5. Applications to edification.

First, What Omniscience is.

It is gathered from a compound word, *all* and *know*. *Pluries*: To know all requires infinitenesse; all must be included, nothing must be excluded.

Secondly.

Sect. 2.

Secondly, *No Creature is Omniscient.*

\* 1. Kings 8.

**N**O Creature made all, no Creature is *Omnipresent*, to know what is done in all places: No creature knows all thoughts\*, no creature knows Gods Essence, no creature knows the Day of Judgement, no creature knows the certaine events of things, nor the certaine causes of all things: Therefore no Creature is *Omniscient*.

Sect. 3.

God knows things past *Ps.* 90. 8.Present, *Psalm* 139. 2.

To come:

1. Sam. 23.

God knows all things in Heaven, earth, and hell. *Pr.* 15. 11.

\* Without the least sinfull motion.

Sect. 4.

1. Positive, *Acts* 15. 18.

Jer. 17. 10.

*Psal.* 94. 11.

2. Negative.

3. Metaphorically.

*Reasons.*

1. He made all,

2. Else he were not perfect.

3. Hee must judge all: *Ergo*

knows all things.

Thirdly, *God is Omniscient.*

**G**OD is *Omniscient*, knowing himselfe, and all creatures: He being infinite, knows himselfe to be an infinite Essence. He knows the Creatures in their being potentiall, in their production, existence; He knows their motions, inclinations, intents, actions, progresse, declensions, ends, and conclusions: Hee sees all with one view, without experience, or disputes, or events, or Reasons, or Similitudes; He sees them distinctly, unchangeably, \*sacredly, eternally, and perfectly.

Fourthly, *Reasons, Arguments, and Probations.*

**F**irst from Scripture; the Scriptures prove it 3. wayes, first, Positive: secondly, Negative: thirdly, Metaphorically. *Job* 28. 24. *For hee beholds the ends of the world, and seeth all that is under Heaven.* *Heb.* 4. 13. *All things are anatomized before him.*

*Iob* 42. 2. *There is no thought hid from thee.*God is said to have eyes. *Prov.* 15. 3. *To be light.*

1. *Iohn* 1. God is light; to see, is to know; we borrow from the Minde, and give to the Eyes: As I see your purpose, I see your love; that is Metaphorically, I know, perceive, or discern it. When wee say God hath eyes,

we

we meane, he knows, discernes, understandy. So God is light; ye know, 'tis light makes all manifest, it discovers, and makes things obvious.

## Fifthly, Uses to edifie.

Self. 5.

1. **T**His confutes two sorts of men, the Hereticks and the profane. First, those Hereticks which hold, that God sees no sinne in the justified, are ignorant of God in his Omniscience; plaine Texts are against them, *Psal. 90. 8. Thou hast set our iniquities before thee; and our secret finnes in the sight of thy countenance.* So *Heb. 4. 13. All things are anatomized before him.* We have sinne, we see sinne, and our neighbour sees our sinne: God corrects us for sinne, his Spirit is grieved by sinne: therefore God sees sinne. God saw sinne in *David*, in *Peter*, in the Churches in the *Revelation*: He sees our finnes more perfectly than our selves, and convinces us for them, and causes us to bewayle them, confesse them, and loath our selves for them.

2. This confutes Atheists, and profane men, which goe about to hide their counsell from the Lord: *Isai. 29. 15. And judge carnally of God, Job 22. 13. as if hee beeing in Heaven, had eyes as a man, and could not see through the darke cloud.*

Here is direction, to take heed of secret finnes; Secondly. God knows them, and sees them with all their circumstances; *Job 42. 1. No thought is hid from him.*

2. Take heed of false pretences, as *Isabels Fast*, *Atholons Vow*, and *Judas Kisse*. God sees the intent, though man sees onely the pretence.

3. This shews, that it is not in vaine to lift up our hearts: *The Lord knows our desires, Psal. 10. 17. and the meaning of our spirits.* He knows a priory from the first rise; therefore ejaculations are with him reall prayers. *Nehemiah 2. 4.*

H

Here



Thirdly.

Here is matter of consolation :

1. In regard of our frailty; *The Lord knowes, wherof we are made, hee remembers wee are but dust; so that from this his knowledge wee may expect his compassion.* Psal. 103. 14.

2. In respect of our troubles, wee know not which way our deliverance shall come; *But the Lord knowes how to deliver the godly.* 1 Pet. 2. 9. Let us labour to be godly; when God knowes us to be so, he knowes then how to end our miseries, and to give us deliverance.

A fourth Vse may be, to aggravate the misery of the impenitent: They sinne before a God that sees all things: their enmity against him, their hatred of his children, their despising his Ordinances, and taking their fill of sinne, is all knowne to him that shall judge them at the last day.

Vse 5. To admire the knowledge of God, and to abase our selves, and confesse our ignorance as *The wise man*, Prov. 30. *Surely I am more foolish than any man. And Psalm 73. So foolish was I, and ignorant, and as a beast before thee.*

Vse 6. To beleeve, and acknowledge that there shall be a righteous judgement at the Great day; because the Judge cannot be deceived: He knowes all mens causes, and will separate mens persons; hee knowes his Sheepe from Goates, and will reward every one according to that he knowes they have done in the body: He needs no informations, but will judge according to perfect knowledge.

Of



## Of Omnipresence.

1. What Omnipresence is.
2. No Creature is Omnipresent.
3. God is Omnipresent.
4. Reasons and Scriptures to prove it.
5. Objections and Questions answered.
6. Applications to edifice.

## First, what Omnipresence is.

Sect. 1.

**I**T is a word from a compound of two words, all and present; expressed in another phrase, called *Ubiquity*, a being every where at once.

## Secondly, no Creature is Omnipresent.

Sect. 2.

**T**He Creatures are limited and bounded; Angels are not in heaven and earth at once: man hath his being in a little roome, and is present but in one place at once: the Sea hath her bounds, the aire hath his Region, and every Creature hath his appointed place.

## Thirdly, God is Omnipresent.

Sect. 3.

**I**N heaven is his glorious presence: hee is in earth by his providence, in hell by his judgements; though no place can contain him, yet no place can exclude him.

H 2

Fourthly,

Self. 4.

Fourthly, *Reasons and Scriptures to prove it.*

Reason 1.

2.

1. **H**E is an infinite Essence, therefore omnipresent. Secondly; because God requires we should walke before him. *Gen. 17. 1.*

3.

How is it possible for all his servants at once to walke before him, were he not omnipresent? Thirdly, God doth excell all creatures how excellent soever: the aire is every where, but onely in his owne Region; the waters of the Sea every where, but within their banks: but God at once is in all places, being omnipresent.

The Scriptures prove it clearely. *Gen. 10. 9.* Nimrod a mighty hunter before the Lord in Gods presence, *Psal. 139. 7.* Whither shal I fly from thy presence? *Ier. 23. 24.* Doe I not fill heaven and earth, saith the Lord.

Self. 5.

Fifthly, *Objections.*

Object. 1.

**C**aine went out from the presence of God. *Gen. 4. 16.*

Answ.

1. Gods presence is either generall or speciall. Caine went not from Gods presence, as he is universally present with his creatures, but he went from the presence of his grace and favour. *1 Chron. 16. 29.* To come before God, is expounded, *Psalme 96. 8.* to come into his Courts. Caine went from the presence of God, from his Church and family in Adams house, who taught his children religion, and to offer sacrifice: hee went from that sweete communion that Gods children have with him in his worship and service.

Object. 2.

Answ.

In *Ephes. 2. 12.* the Gentiles were without God in the World: how was he then present?

1. They were without Christ who was God.
2. They were without the knowledge of God.
3. They had no interest in God as his people.

4. They

4. They did not enjoy God as his people doe, to fly to him in all neede, to worship him, to be conversant with him.

In *Psalm* 16. 11. 'tis said, in his presence is fulnesse of joy, and his presence is every where; how is this joy then wanting in earth and in hell?

His presence and favour causes joy in his kingdom of glory: but in earth his presence is troublesome to the prophane, because his Nature and theirs doe quite differ; and he is a Judge whom they feare and hate.

In hell his presence is terrible to the damned, because his presence and wrath there goeth together. A Kings presence is joyous to those that shall be pardoned, enriched and honoured; but terrible to Traitors that are condemned and to be executed.

If people be taught this, it will dash all mirth and sport, and make them very demure and sober, to think they be alwayes in the presence of God.

It is the way to make them truly joyfull when they are upright: the Angels are full of joy, yet stand in his presence; it will dash carnall sport, and bring spirituall joy; we shall not lose, but gaine by it; wee shall lose that would defile us, and gaine that would beautifie us.

There is much wickednesse done every day; God being present, tis a marvill he suffers it.

1. He shewes his infinite patience and long suffering; *Rem* 9. 22.

2. He lets wicked men alone till their sinnes be full. *Gen* 15. 16.

3. Hee keepes sometimes a little Sessions here, and executes vengeance, to shew there is a God.

4. Hee hath a great day to reckon with them for all.

God is said to bee in heaven, *Psalm* 2. 4. *Psalm* 113. 1. Our God is in heaven.

There he is in his Majesty and Glory, yee he is in earth

Object. 3.

Ans.

Object. 4.

Ans.

Object. 5.

Ans.

Object. 6.

Ans.

Object. 7.

Answ.

by his providence and omnipresence. *Ier. 23. 24.*

Hee is not with the wicked, *Numb. 14. 42.* he withdraws himselfe from them. *Hos. 5. 15.*

He is not with them to protect them, to blesse them, to direct, prosper, and reward them; yet he is with them, to punish them; *Gen. 10. 7.* to reſtraine them: he is ſo neere them, as he puts his booke in their Noſtrils, *Iſaiah 37. 39.* He is not with them in grace and favour; yet hee is with them by a generall providence, to over-look them, and curbe them, and diſappoint them, as the places before quoted doe ſhew.

Sect. 6.

Sixthly. Applications to diſpoſe.

**T**His ſhewes them to be very ſot that goe about to doe their wickedneſſe in ſecret; they are notably blinded and ſeduced; for ſinne where they can, they ſinne in Gods preſence: as *Nimrod* was a mighty hunter before the Lord: ſo it may be ſaid, men are great ſinners before the Lord, great ſweaters, great lyers, grievous drunkards, notorious thieves before the Lord, though they thinke God is in the Circle of heaven, *Iob 22. 14.* and ſay who ſeech us? *Ezek. 9. 9.* There is a God ſees, and is preſent, who is the witneſſe, and will be the judge.

2. This may teach the godly.

1. To be ſincere, becauſe they walke before God.

*Gen. 17. 1.*

2. To feare and reverence Gods preſence. *Ierem. 5. 22.*

3. To be comforted: he is preſent in our troubles. *Pſal.*

*91. 15.*

4. To come prepared to holy duties: God is preſent. *Pſal. 26. 6.*

5. To approve our ſelves to him whom we are before. How ſhall we approve our ſelves to the Lord?

By following theſe directions.

1. We muſt approve of the things that are excellent, eſteeme,

Queſt. 7.

Answ.

esteem, and minde the persons and things that GOD doth affect.

2. We must approve our selves to God by avoiding secret finnes as *Ioseph*. Gen. 39.

3. By making conscience to performe private duties, *Math. 6.* approving our selves to our Father that seeth in secret.

4. Wee must make conscience of those finnes which the world accounts small finnes, as petty oathes, idle talke, following the fashions, gaming, wantonnesse, &c.

5. We must approve our selves to God in holy courses of life and conversation, though the world scoffe at us, as they doe at those that runne not with them to the same excessse as they doe.

6. By doing Gods worke after his owne minde, looking to our preparations, temper of heart, our reverence, simplicity, aimes, &c. that wee may mainly strive for Gods approbation in all our performances.

To shew us the excellency of God in his Omnipresence: Hee is present every where, because infinite; alwayes, because eternall.

1. He is present without locall mutation, or succession: He is not included by any place, nor excluded from any place.

2. He is a most fit Iudge to Iudge the world, because he needs no Iury, nor Evidence: He is a witnesse himselfe, and so will give a righteous Sentence, and will bring to light the secrets of the just done before him, to their everlasting honour; and the secret finnes of the wicked, to their everlasting shame.

We should be stirred up by all meanes, to desire Gods gracious presence, where our joyes shall be full, and our pleasures everlasting. *Psalm 16. 11.*

Fourthly,

Of



## Of Perfection.

1. *What Perfection is.*
2. *That God is perfect.*
3. *Questions about perfection.*
4. *Applications to edifice.*

*Self. 1.  
Perfection.*

*First, What Perfection is.*

**T**O be perfect, is to lack nothing, to be absolute, and intire; to be all, whole, full, without the least defect: to have all excellency in the superlative degree in every good, to the utmost, so that there can be no want, nor addition: This is Perfection.

*Self. 2.*

*Secondly, God is perfect.*

**G**OD is perfect in the superlative degree, to the utmost; to whom can be no addition, hee is so completely perfect in his Essence, Attributes, and all his Workes.

1. In his Essence, having a perfect, blessed, absolute, and independant being; richly, gloriously, joyfully, immutably.

2. His Attributes which demonstrate him, are all perfect: He is perfectly eternall, without beginning, or end: perfectly Almighty, working without materials; perfectly wise, knowing all secrets; perfectly mercifull, in forgiving fully, giving freely, liberally, abundantly, &c.

3. Perfect



3. Perfect in his workes: Perfection is to accomplish and finish, so is he perfect: He finisheth the worke of Creation. *Gen. 2.1. Has then beheld his worke as compleate and perfect.* He finisheth, that is, he perfecteth; *Ans-worth on Genesis.* So *Moses* saith, *Perfect is the worke of the Lord, Deut. 32.4.* That is, without blame, or blemish.

*Willet on Gen. 2.1. page 25. Ans-worth.*

Thirdly, *Questions and Answers.*

*Sett. 3.*

**W**hy did God make the World, having all perfection in himselfe before?

*Quest. 1.*

1. To manifest his glory to the Creatures: We onely acknowledge that that is in him, which we cannot adde to him.

*Ans-w.*

2. For his Wills sake all was created: It was his pleasure, that is answer sufficient. *Rev. 4.11.*

How is *Christ* perfect, seeing many of his mysticall body are not yet gathered to him, and many are unborn?

*Quest. 2.*

1. He hath a Divine perfection being God.

*Ans-w.*

2. He is perfect in his Humane Nature in glory.

3. He is perfect relatively, as hee is a Head, having perfect Wisedome, Glory, and Holinesse; so that of his fulnesse we receive our measure: *Iohn. 1.16.* from him which hath not the Spirit of measure. *Iohn. 3.24.*

4. Hee is perfect in his body in regard of Decree, growth, certaintie, and the accomplishment: dayly drawes on. *Tis decreed, growing dayly, and increasing, certaine, as good as done.* God calls things that are not, as though they were, &c.

How are Gods workes all perfect, when some are borne blinde, or lame, or naturall fooles?

*Quest. 3.*

1. God in the beginning made all his workes good and perfect.

*Ans-w.*

2. All imperfections in Nature are from sinne and punishments.

I

3. There



3. There may be a perfect worke in the wombe, yet some secondary cause may hinder perfection in the birth.

4. Wee are to conclude, that the workes of God are perfect; though we cannot finde out a Reason of his doings: He is not to accompt to us.

*Concerning defects of understanding in naturall foules.*

1. The Creator may give wisdom, and deprive of knowledge as he pleases, and measure to every one after his owne Will.

2. It is just that we should be all borne fooles, having lost our wisdom by Adams fall.

3. The Parents may be punisht with foolish children for divers Causes.

1. Having over-eagerly desired children, they may have a child, but a foole.

2. For neglect of God and his service, and the rising up of wealth as the chief good, they may be punisht with a foole for the Merit.

3. Some children are fooles, to teach us wisdom, that as we mistake their naturall folly, so we should detect our owne spirituall folly; and so teach us thankfulness by seeing his Judgement on others, and well to use our Wit and Reason which he hath given us, and exercise our mercy as to help of them that are defective.

Are we the regenerate perfect in this life?

Ans. No; for grace and peace must be multiplied to them: Gods grace towards them, and his peace in them is capable of augmentation; and they are to increase more and more. 1. 7. *1st* 4. 1. And the best had need to grow in grace. 2. *Per* 3. 18.

Why then is perfection named in the Scripture? *Mat* 5. 48. *Philip* 3. 15. *Heb* 6. 1.

1. Precepts shew not what we are, but what wee should be.

2. There

*Quest. 4.*

*Ans.*

† Grace in their apprehension

*Quest. 5.*

*Ans.*

2. These precepts should put us in minde of our originall perfection, and humble us: God calls for what he gave us, but we have lost it.

3. These precepts are for excitation, to stirre us up to be better, and to presse forward.

May we not strive to be like God in perfection? *Mat.*

5. 48. We are bid to be perfect as God is.

We are to be like him in resemblance, not equality: There is (as he is) in equality that which is impossible; there is (as he is) in resemblance: so the drop resembles the vaste Ocean.

What is the Christians perfection?

1. To bewaile his imperfection from the heart.

2. There is perfection of parts, and perfection of degrees: A child hath perfection of parts, a man of growth.

3. His perfection is in desire and endeavour: a man may aime at the Sunne, though his Arrow ascend but forty Ells upwards.

4. He is perfect comparatively, as *Nash* was a perfect man in his generation. *Gen.* 6. 9.

5. He is perfect in Gods account being justified, and Christs perfection imputed.

Who are the most perfect men on earth?

Those that come the nearest to the rule of perfection: such are they.

1. Which have sound experimentall knowledge.

2. That with most freedome of Spirit, and the least distractions doe performe holy duties.

3. That are most conversant with God in their inner man, and are most heavenly minded.

4. That are most patient, and ready to forgive an acknowledgement of a wrong, yet without acknowledgement, and pray for persecutors, and are sorry when a vill befalls their particular enemies, and are ready to helpe them.

Quest. 6.

Ans.

Quest. 7.

Ans.

In his body.

Quest. 8.

Ans.

James 1. 4.

5. That are most in charity, doing the workes of their callings, with love to others, that are least censorious, because of the largenesse and soundnesse of their charity.

*Object. 2.*

*Ans.*

*James 5.*

We must not call evill good. *Isai. 5.*  
Then we must not call their rashnes wisdom, nor their prejudice zeale; nor are they to be justified that speake so much of others errors, that they are in danger to forget their owne: their perfection is more devotion in the closet, lesse talke at the table: the want of perfections in the world, begets great imperfections in them, and they are delivered without a midwife: it were good if they did herein miscarry.

*Quest. 9.*

*Ans.*

*Justification.*

Are not those most perfect that are united to Christ? They are, and doe draw vertue from him, whereby they shine in the aforesaid, and in other vertues to the example of others.

*Quest. 10.*

*Ans.*

What course may wee take to draw nearer to perfection?

1. We must set before us the best patterne.
2. Keepe close to the rule of the word.
3. Minde our particular duties in our places, as soldiers in the army keepe ranke, and letters in the line are of an evennesse.
4. Forget that's behinde, endeavour to goe forward against corruptions, temptations, persecutions.
5. Use the holy measures with holy preparations and affections.
6. To doe all good better than before, with more heedfulnesse, reverence, and better aimes.
7. Examine daily the temper of the heart, and be ever wedding that garden.
8. The more we bridle our tongues, the more wee grow towards perfection. *James 3. 2.* Therefore we are to have a speciall care that our words,

1. Be fewer for number of them.

2. Better

2. Better for the nature of them.
1. That we speake of God with more reverence;
2. Of men with more charity; of our selves with modesty;
3. Of the World for necessity;
4. Of Religion with alacritie: Wee must labour for more sale of grace to season our words; and for more Rules of Wisdome to order them; then joy shall come to us from our Answers; and piety and sanctified reason will issue out of our mouths, and it will appear we are proficient in the schools of Perfection.

Fourthly, Applications to edification.

Sect. 4

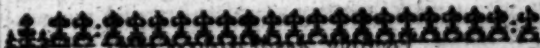
1. **I**T is an approved way to humble our selves to looke on Gods Perfections, and our owne manifold imperfections: God is light, we darkness; he is Almighty, we impotent; he is eternall, we but a moment, in the condition of mortall life; he is good, we evil; he is holy, we are polluted; he is most wise, we are foolish and ignorant, and as beasts before him, he hath all perfection, we have all imperfection.

2. To serve God who is perfect, and all sufficient; he hath sufficiency, selfe-sufficiency, sufficiency for beliers, and sufficiency for all things; he can enrich his servants; he is a perfect and all sufficient God.

To admire and wonder at the perfection of the Lord, who is perfect without comparison in the superlative degree; none is like to him.

2. He is without imperfection: light without darkness, strength without weakness, wisdom without ignorance. God cannot lose his perfection, nor in the least degree.

4. He is a perfect Essence, not having best and worst, he cannot have addition. *God is above all*  
 5. *He has nothing to keep him as he is, or to augment his perfection: but our perfection admits of comparison, it is accompanied with imperfection, we are capable of eclipse, desire addition, and means to support us: therefore admire Gods Perfection, that is farre above all us, and desire nothing of him, but to be like him.*  
 6. *Desire and long for that place where all imperfections shall be abolished, and such perfection as we are capable of shall be obtained.*



## Of Invisibilty.

1. *What Invisibilty is.*
2. *How God is said to be Invisibile.*
3. *How creatures are invisibile.*
4. *Questions answered.*
5. *Applications to edification.*

Sec. 1.

**First, what Invisibilty is.**

**T**He word signifie that which cannot be seen. A thing may be invisible two ways; the one when something is between the eye and the object, or the object is too near, or too farre off. The other, because the object is so pure, cleare, and spirittuall, that no secondary helpe can make it obvious.  
 We see not when a Captaine is draine, or if a thing be behinde a wall or a mountaine; the object may be visible in it selfe, but occasionally, by reason of some medium, is hid from us.





Sec. 3.

Thirdly, *The Creatures are invisible.*

1. The glorious Heavens are invisible; if the Elements were drawn away and Curtains, the impassible Heavens are of so exceeding brightness, that the glory of them cannot be discerned but by a glorified eye. In his light we shall see light hereafter, not onely of knowledge, joy, and comfort, but the light of vision: *Psalm 36.9.* But while we be here it is invisible.

2. The Angels are Spirits, *Heb. 1.7.* of a pure substance, not compounded of the foure Elements: so are invisible.

3. The Wind is invisible, the same word that signifies a Spirit, signifies the Wind: so that we may hear the sound, but cannot see it. *Iohn 3. 8.*

4. The Soule of man is invisible both in conveyance, in being, and in departure. In conveyance; some thinke wee have our Soules conveyed to us by participation, as one Candle lights another: some thinke that our Soules come by propagation, as a man to beget a man: body and soule: some thinke that the soule comes by infusion; when the body is formed, then God infuses the soule; and so the child is alive. But w<sup>th</sup> all indisputable, little is concluded: it is an invisible worke, and hid from us: *Ecclesi. 1. 5.* *Thou knowest not the way of the Spirit.*

2. The Soule is invisible in being, and continuance in the body; men heare it speake by the tongue, and worke by the hand, and see by the feet, as in a Watch; the spring within moves the wheelles, and wee doe see the point of the Diall: so it is with the Soule; wee see it is, but how it is we know not. *It is a Spirit, Psalm 31. 6.* *Heb. 12. 23.* and therefore invisible.

3. The Soule is invisible at the departure: No dying mans soule was ever seene when it went away, because it is a spirit.

Fourthly,



Fourthly, *Questions answered.*

Self. 4.

**H**ow is God invisible? *Moses saw him face to face.*  
Exod. 33. 11.

Quest. 1.

It is spoken by way of comparison; God spake with *Moses* more familiarly than with the people; to whom he spake from the Mount: *Exod. 20.* yet *Moses stood between God and the people.* Deut. 5. 5. God spake to him without a mid-man. *Numb. 12. 8.* As for his sight of God, it was but of his back-parts. *Exod. 33. 23.* Hee saw so much as hee was capable to conceive. The Prophets had visions, *Isai. 6. Ezek. 1. Dan. 7.* not of Gods Essence; that the *Seraphims* cannot behold. *Isai. 6. 2.* but such apparitions and similitudes as they were able to behold; and capable to conceive.

Answ.

By what Reasons can you prove God to be invisible?

Quest. 2.

1. The blessed Angels cannot behold him, much lesse can man with his bodily eyes.

Answ.

2. God is a Spirit, *Iohn 4. 24.* therefore invisible.

Isai. 6. 2.

3. If God were visible, wee should see nothing but God; for he fills Heaven and Earth.

Shall not our eyes see God in the life to come? *Iob saith, With these eyes I shall see him: And Christ saith, The pure in heart shall see God.* Math. 5.

Quest. 3.

*Iob* in Heaven with a glorified eye shall see Christ in his Humanity, and the pure in heart shall see God with the eye of the body to satisfaction, but with the eye of the minde more clearely; in neither they shall comprehend his Essence, in both they shall have a fulnesse of vision, farre beyond that we can conceive in this life. He that goes to the Sea may fill his vessell, yet leave the Ocean behinde him. We shall see so much, as wee shall say we have enough; our vision shall be so great, that it is called the beatificall vision.

Answ.

How is Christ married to his Church, and yet

Quest. 4.

they never saw each other on both sides?

*Ans.*

There is a consent of both parties; Christ gives himselfe to be a Husband; the Church gives her selfe to be his Spouse; there is the Fathers consent, and his gift of her, *Iohn* 17. 24. on the Sonnes demand. *Psal.* 138. There is the pledge of our faith at Baptisme, and the Lords Supper; and he promises in the Covenant of Grace to be our God, there are reciprocal Affections; and the conjunction is reall, yet spirituall. As for sight, hee sees us with his all-seeing view; wee see him with the eye of faith, *Heb.* 11. 27. which sight of faith makes us to rejoyce, *1. Pet.* 1. 8. Our joy proceeds from our Union, without the which we had no found consolation.

*Quest.* 5.

Were it not a great helpe to our devotion, to have some Image before us, because God is invisible?

*Ans.*

To have an Image of God to helpe our devotion, is forbidden. *Deut.* 4. 23.

2. It is unprofitable. *Isai.* 44. 10.

3. The Image drawes the minde downe; for the minde doth much follow the eye.

4. It is against Gods nature who is a Spirit.

5. It is not possible to make an Image of God.

*Object.*

God made man in his image.

*Ans.*

The Image was Knowledge, *Colos.* 3. 10. and Holinesse, and Righteousnesse. *Ephes.* 4. 24. That was the Image, not the Substance of the Soule; for that is not lost, but Gods Image was lost. The soules of the wicked are without Gods Image till they be renewed. So then the Image are divine qualities, which Painters and Carvers know not how to cut out, or draw.

*Quest.* 6.

Doe devils see each other, and doe Angels see them?

*Ans.*

It is likely that they doe: it is naturall for each spirit to know his like; and Angels have combats with them. *Revel* 12. therefore see each other.

*Quest.* 7.

Can the Soule see an Angell, or devill?

*Ans.*

Not in their owne Nature, but in some similitude;

for their substance is spirituall, and not obvious to the bodily eye.

How may we know when Sathan tempts us, because we cannot see him: how differ his tentations from our owne corruptions?

Quest. 8.

1. His temptations of that kinde, are against the light of nature: as that there is no God, or that he is not gracious, just and mercifull, &c.

Ans.

2. His temptations are to the ruine of nature, as for a man to kill himselfe causelessly.

3. The temptations come rushing suddenly, our corruptions entice by degrees, by mentall contemplation, or outward objects.

4. He tempts holly duties, by injecting false reasonings in the minde, that God is dreadfull, we sinfull, unworthy, and shall have no assistance nor acceptance.

5. He workes discomforts in the heart, by hiding the consolations, presenting iudgements to the minde, and shrewtings, to make us give over a godly course, or walke heavily.

Cannot Sathan appeare visible?

Quest. 9.

Ans.

No not in his owne nature, but he may by permission use some of the creatures, as a Serpent to *Eve*; or may use the foure Elements to forme and apparition, as in the body of *Samuel*, or rather the likeness of *Samuel*: or he can delude the senses, as the Serpent cast downe before *Pharaoh*; *Moses* Serpent was true, the Magicians was but a delusion; a deceiving of the senses.

May not the Heathen object against us, *Where is your God*, seeing he is invisible, and cannot shew wee him?

Quest. 7.

We can answer them thus.

Ans.

1. Their question comes from grosse ignorance.

2. We can tell them where our God is, *He is in heaven*. *Psalm 113. 3.*

3. We retort to them; where is your God? if they can

can shew him to the eye, he is no true God, because he is visible, and shall be perishing. *Ier. 10.*

Sec. 5.

Fifthly, *Applications to edifice.*

1. **T**O praise God, as for other excellencies, 'so for his invisibilty. *1. Tim. 1. 17.*

2. To learne to walke by faith as if wee saw him, who is invisible. *Heb. 11. 27.*

3. To remember him, though we see him not; to remember him with affection; to love him, though wee have not seene him, and to rejoyce in him as we are beleevvers. *1. Pet. 1. 8.*

4. Would we see the Invisible God? then let us behold his invisible power, and God-head in his workes. *Rom. 1. 20.* Would we see him hereafter? then let us labour for pure hearts, that we may be rewarded with the vision of God. *Matth. 5. 8.*

5. Here is comfort against invisible enemies; we have the invisible God, and invisible Angels to helpe us; wee have promises of invisible things to encourage us, we shall have invisible rewards to recompence us.

6. Let us munde more invisible things; desire more invisible favours: send vp invisible desires; let the glory of all visible excellency be blasted, and let us raise our mindes to things more excellent and invisible.

7. Observe Gods workes they are invisible in operation, but visible in manifestation: they are hid and unscene in operation, both the workes of nature. *Eccle. 1. 5.* thou knowst not the way of the spirit, nor how the bones are fashioned in the wombe, and the workes of grace. *Iohn 3. 3.* These workes done secretly are manifested in mans birth and regeneration.

If we will follow God, let us strive to get the inward worke of grace to be wrought in the secret parts of our hearts and soules: to bee inwardly adorned with humi-

humility and wisdome, and heavenly mindednesse, with love, zeale, patience, and contentment. Then outwardly to manifest the same, by gracious speeches and good workes, that the invisible graces of God may have a visible declaration among men; thus shall wee resemble the invisible God, as the drop doth the Ocean.



## Of Wisedome.

1. *What Wisedome is.*
2. *Of the wisdome of creatures.*
3. *Of the wisdome of God.*
4. *Applications to edification.*
5. *Questions answered.*

### First, *What Wisedome is.*

Sol. 1

**I**T is the better perceived, by comparing it with those virtues which are neare to it, and like it; as Knowledge, Prudence, and discretion.

Knowledge is to perceive, to comprehend, or see; it is gained by the eye, or eare, or taste, or smell, or touch, and ordinarily, gained by experience.

Scientia.

Prudence is to eschew things hurtfull, and is exercised in safe guarding and defending our selves and ours: as a maine impliment of it is in government.

Prudentia.

Discretion is exercised in separating, and chusing, in pondering, measuring, and dividing.

Discretio.

Wisdome is exercised in all these, it doth comprehend and see; it eschewes things that are hurtfull: it provides, for present and future safety; it distinguishes, and measures, and divides, and chuses; and applies home things

Prudentia.

things convenient and profitable.

Sect. 2.

Secondly, *Of the wisdom of creatures.*

**W**isedome in the unreasonable creature is their nature, in mans quality: the Serpents wisdom is his nature, by which hee saves his head if you strike him, and stoppes his eares if he be charmed and if yce wound him, he seekes medicinable hearbes, and heales himselfe: to the Bee, if the windes doe blow, poyses himselfe with a stone, which hee carryes home to make his flight steddly and ponderous: The Weasell rouses her selfe in Bettony, or haire of grasse, that the snake may not abide the scent of her: the Grasshoppers goe forth by bands: the Cranes keepe centinell; and the Wild-geese flyyng over where Eagles are, carry a Peeble stone in their mouthes, that they make no noyse, nor be discryed: how curiously doth the Spider weave and expresse great art, and the Pie and Wren doe build, as if they had bene constructed in Architecture.

But among the creatures, men and Angels are inricht with wisdom: Man in his first creation was very wise, & could give all the creatures furable names: but by sinne we lost our wisdom, and have in stead thereof, a guile or wilihessie, and our wisdom is from beneath: *1. earthly, sensuall, diuelliſh.*

1. Earthly, when it is exercised primarily about earthly things: this is called *our Wisdome*: Prov. 23. 4. as if we accounted it our Wisdome to get wealth: this wisdom prizes earth as the maine, it pleades for security, it admires the rich, it abhorres poverty as the greatest evil: this wisdom labours to get, to encrease, to keepe riches: 'tis earthly wisdom, 'tis wise for earth.

2. 'Tis a sensuall wisdom, it makes a man accurate and industrious to please his senses: In eating and drinking



drinking, this wisdome can invent meanes to force appetite; this wisdome invents sawces, and compounds; this wisdome invents shewes to please the eyes, and is studious to satisfie the lusts: it is sensuall wisdome that is employed to satisfie the senses.

3. It is a divellish wisdome; Sathan workes on the minde, as in magicall studies, or arguments for Atheisme, or to cause divisions. This wisdome invents abominable things to be acted by Players, or sung by Ballad-men, or printed in bookes: This wisdome sets nick-names on good men, and sets false glosses on vices; as to call pride handsomnesse, drunkennesse good fellowship, covetousnesse good husbandry: This wisdome causeth Schismes, brings in heresies, burnes the Martyrs, uphold profanenesse and impiety; this divellish wisdome is employed for the divell, and it makes men like the divell, in straining their wits, and acting their parts in that which is in opposition to all good, and in supportation of that which is naught and wicked.

Thirdly, *Of the Wisdome of God.*

Secl. 3.

**H**is Wisdome is essentiall; whatsoever is in God, is God: He is Wisdome it selfe, he is uncreate Wisdome; he is the fountaine of Wisdome, hee is unlimited in his Wisdome; his Wisdome is infinite. *Psal. 136. 5.*

Gods Wisdome is manifested,

1. In the worke of Creation.

2. In the worke of Redemption.

3. In his preservation.

First, in the worke of Creation: *In Wisdome he made the Heavens, Psal. 136. 5. In wisdome he laid the foundations of the Earth, Prov. 3. 19. In wisdome he made all his works, Psal. 104. 24.*

His

His Wisedome appeared

1. In the beauty of the Creatures.
2. In the order of them.
3. In their variety.
4. In the making of contraries, to joyne and unite one to another.

The beauty of a picture, or building, doth argue the wisdome of the Workman: the order of things argues wisdome, when things keepe their stations, ranks, and places. The Sunne, Moone, and Starres keepe their owne Sphaeres and seasons; the Sea keepe within his bankes; the beasts and fishes their places appointed.

The variety argues wisdome, as if a Painter made a costly frame, and within it painted variety of objects; here is a pleasant meadow, and beasts feeding; there a Mountaine, with a flocke of sheepe, with a Shepheard, and his dogge at the bottome; heere a christall streame gliding, and a flocke of Swannes swimming; here a man at plough, there a man a fishing; heere a chimney smoaking, there two Armies fighting; here a footman running, there a Table furnished, and men and women feasting; here a child sucking the breast, there a man lopping a Tree; here a Ship with full sailes, there a Church with a Steeple, and birds flying about it: All these being artificially performed, and set out in lively colours, would both delight the spectator, and commend the Actor. Even so the most wise God, having in such variety made his workes, doth demonstrate his abundant wisdome.

Some creatures have matter and forme, and are generated and corrupted, as mens bodies: some creatures have matter and forme, but are not generated, as the Sunne and Moone; their matter and forme is peculiar.

Some creatures are bodies without spirits, as beasts; some creatures are spirits without bodies, as Angels; some creatures are bodies and spirits united, as men; some creatures

creatures are vegetive, as roots: some have motion, as trees and hearbes; some are sensitive, as beasts fowles, and fishes; some are rationally as men.

The vegetative creatures doe serve the sensitive: the sensitive doe serve the reasonable: the variety of the creatures with their imployments, uses, and operations, doe declare openly to all the unfearchable wiselome of God.

Secondly, his wiselome appears in the worke of Redemption, in devising a way to redeeme us, that men and Angels could never have thought upon; in accomplishing it by his owne way and meanes, in glorifying his attributes in that worke; his goodnesse sent Christ, his power supported him; way was made for his mercy, satisfaction was given to his justice; his love was manifested, his truth was sealed, his immutablenesse was proved, his holinesse proclaimed, his excellencies were made knowne to us in his sonne: he that could in one worke accomplish this, must needs be wise, yea, wiselome in himselfe.

Thirdly, his wiselome appears in the worke of preservation. First, in preserving all creatures: Secondly, in giving each creature his nourishment: Thirdly, in making of contraries to uphold the whole.

In preserving all the creatures, tis great wiselome to preserve a few; but such great variety of creatures as God preserves in heaven, earth, and Sea, argues infinite wiselome.

He gives to each creature his nourishment: he nourisheth and preserves the earth with raine, and the Sunne: he preserveth sheep with grasse, men with bread, babes with milke.

3. He makes contraries to preserve the whole: thunder and tempests doe cleare the aire: the selling of Joseph preserved the Church: the crucifying of Christ saves our soules. Our bodies are compounded of

four contrary elements, yet all doe concur for our being, and well-being: the good and bad are mixed together: the badd doe exercise the good: the good converts the bad, both are usefull one to the other: these contraries God makes to concur together, so the world is preserved.

Here is matter for admiration, demonstration, exhortation, consolation.

1.

First, here is matter for admiration: *Of the deepesse and riches of the wisdom of God* Rom. 11.33. His wisdom is uncreate and perfect, not attained by relation, observation, or experience, or events; but it is eternall, infallible, and effectual, and worthy of our admiration; especially wee should admire the worke of our Redemption, accomplished by Christ, (the wisdom of the father) which the Angels desire to behold.

This Wisdom appointed such a Redeemer, as was begotten of the father, yet not after the father, begotten yet not like him.

2.

Secondly, this demonstrates their wretchedness, that are enemies to the Church and people of God, though they are very wise, and take crafty counsell together, yet they shall fall, for they have the most wise God against them, who will catch them in their own craftynesse, 1. Cor. 3.19. and turne their counsell to foolishnesse.

1. Sam. 15.31. Also this demonstrates the happiness of the godly, they have the most wise teacher, Job 36.22. no teacher is like to him.

1. He not onely teacheth and gives rates, but also gives power and ability to keepe them.

2. He never doth erre in teaching.

3. He rewards his schollers with eternall rewards.

4. None of his schollers can ever extoll him.

5. He ever lives to teach one generation after another. No teacher is like him.

3.

Thirdly, here is matter of exhortation, to goe to God

for

for wisdom he is he that gives it: *Iames 1. 5.* and because it is the diligence which prevail with him the most; therefore wee should cry for wisdom and call for understanding, and take great paines for it, as men doe, that dig and search in the bowels of the earth for silver and gold. *Prov. 2. 2, 3, 4.*

Fourthly, here is abundance of consolation for them that are in favour with God; his wisdom is for them, to direct them in afflictions, temptations, and prosperity.

1. In affliction his wisdom teacheth them to looke to his hand and providence, to submit, to repent, to pray, to be more humble.

2. In temptation his wisdom teaches them to discern a temptation, to struggle, and to cry to him for helpe, to take the sword of the spirit, which is, the word of God; to forbear something, to deny themselves, to resist, to looke to the reward promised to those which conquer.

3. In prosperity his wisdom keeps them from being hurt deadly, though they are corrupted dangerously: his wisdom tempers their prosperity with some losses, or sicknesses, or outward molestations, or else their indisposedness to grow crooked, or such an it lea loope to buffet them; or God affects them, and makes them sensible of other calamities; to sympathize, and console with them; or God gives them abundance of graces and heavenly sweetness, that so their prosperity may not be to their ruine, nor they clogged with earthly mindedness.

Furthermore, his wisdom is so profound, that hee can turne payson into physicks, and our maladies into medicines; he can turne our sinnes and corruptions to an advantage, of chastning he can make soyle, to cause us to be more fertile; our very sinnes, when wee are instructed by the Lord, doe make us the more humble

and broken in heart, and poore in spirit: we doe see our neede of Christ to save us, and to prize him above 10000 worlds: we do pray more earnestly, and watch, and strive, and long for heaven, and beare with others the more, knowing our owne guiltinesse, and feeling our owne infirmities.

S. ell.

Fifthly, *Questions answered.*

Quest. 1.

Ans.

Quest. 2.

Ans.

Quest. 3.

Ans.

Quest. 4.

Ans.

**W**Hat are the parts of true wisdome?  
Deliberation, and determination.

Do they well that are very studious for humane wisdome, and neglect the Scriptures.

No, for if they reject the word of the Lord, there is no wisdome in them. *Ier. 8. 9.* Men may study Philosophy, so as they may be spoyled by Philosophy, when men use it as a mistresse, not a hand-maid; when nothing is received, but must come to Philosophy as the rule; when things are embraced contrary to the Scripture; as that of nothing comes nothing. *Colos. 2. 8.*

Is it best to be accounted very wise?

It is better to be under-valued, than over-valued and esteemed; for others will the more artificially carry themselves towards us, which are beneath us; and others will be the more jealous of our company that are above us, and feare wee will espy something by them, that they would have concealed and keep secret. Hee that is under-valued gets honour when hee is tried: hee that is over-valued, hath but shame when he comes short of what was expected: the one is more honoured, the other more quiet: the esteemed wise man is more noted, the other more safe.

Who have gained the best wisdome?  
Those whom God hath taught to feare him: for the beginning of wisdome is the feare of the Lord. *Prov. 1. 7.* this feare is to stand in awe of God, as a childe of a loving father.

2. Feare



2. Feare makes men bestirre themselves, and seeke their owne safety: those that doe seeke for favour and safety by faith in the Lord Iesus, these are wise to salvation.

1 Tim. 3. 15.

3. Those are wise that lay aside their owne wisdome and carnall reason; They become fooles that they may be wise. 1. Cor. 3. 18.

4. The wise doe take the opportunities of saving grace, they take opportunities to get joye in their Lampes; they get grace in their hearts, and are ready for Christs coming. Math. 25. 4.

5. They are obediently wise, and practise what they heare taught them in the Ministry of the Word: so they are as wise builders, that doe build on the Rocke. Math. 7.

6. The wise doe minde their mortality, and thinke of their end: They number their dayes, and so apply their hearts to wisdome. Psal. 90. 12.



Of Truth.

1. What Truth is.

2. Of the Truth of creatures.

3. Of the Truth of God.

4. Application of truth.

5. Questions answered.

First, What Truth is.

Self. I.

**T**Ruth is that which hath reality and substance, contrary to shadowes and lyes: There is Truth, and Trueneesse; an Harlot is a true woman, but wants the

trueneſſe of a woman. A copper ſhilling ſilvered over  
may have a true ſtampe, yet want trueneſſe of the me-  
tall. *Why* Rod was turned into a true Serpent, yet the  
Magicians rods were ſeeming Serpents; Truth deceives  
not, nor diſſembles; it is that it appears to be.

Self. 2.

Secondly, *Of the Truth of Creatures.*

**T**H E Angels are true Subſtances, not motions, or  
imaginations; as ſome doe thinke. The Sunne is a  
true light, and the Moone a true Subſtance, though  
mutable: Man was made with true ſequels of the  
ſoule, and true members of the body, and true com-  
ſortunity in both taſte. Will that God, Man fall by falſe-  
hood, but is redeemed in Truth, and renewed again in  
Truth. *Ephes. 4. 22.* The earth is real earth, the wa-  
ter is true water; all Gods workes are done in Truth.

Self. 3.

Thirdly, *Of the Truth of God.*

**H**E is the eſſentiall Truth, Truth flows from him;  
*He is the owely true God, John 17. 3. Hee is a God*  
*of Truth, Pſal. 31. 6. The Father is Truth, ſo is the*  
*Sonne\*, So is the Holy Ghoſt†.* God is a true Eſſence,  
true in his Attributes; he is truly Eternal, truly Om-  
nipotent, truly inviſible, and incomprehenſible; *\* His*  
*Scriptures are the Scriptures of Truth, being true in the*  
*precepts, promiſes, and threatenings, not a jot ſhall faile.*  
Here is the heavenly verity, above nature, ſenſe, and rea-  
ſon; Nature and Senſe are Reaſons ſervants, and Rea-  
ſon muſt ſtoope to Truth, and Truth muſt be beleaved  
by Faith beyond Nature, Senſe, and Reaſon: for as the  
light avails not, unleſſe we have eyes to ſee: ſo God and  
his Word are not rightly diſcerned but by faith, without  
which a man ſhall be ignorant, and demands with *Pillars*  
what is Truth.

\* John 14. 6.

† John 16. 13.

Daniel 10. 21.

John 17. 17.

2 Cor. 1. 20.

Math. 5.

John 18.

Fourth

## Fourthly, Applications to edifie, distributive.

Sec. 4.

**F**irst, this distinguishes the true God from false Gods, as Idols, which are not true Gods, for they are not Gods. Ier. 2. 11. *Our God is the living and true God.* 1. Thes. 1. 9. *And the only God.* Iohn 17. 30. *As for Angels, or Magistrates that are called gods, because the Magistrates execute the Judgements of God, as Chrys. 19. 6. And God but in vision shows his Word, Iohn 1. 34. 35. And Angels are Princes, Dan 10. 13. 20. 21. Angels are messengers, Heb. 1. last, And Magistrates are mayors, Plak. 82. 6. The eternall Jehovah is the true God, and others are his servants, Job 1. 1. W*

In respect of God.

Psal. 8. and  
Psal. 82.

Secondly, is the Word the Truth? then we shall

In respect of the Word.

1. Buy it. Prov. 23. 23. *old version*2. Keep it. Mat. 23. 23. *old version*

In buying are three things: first, we see our need: secondly, we goe where the commodity is to be had: thirdly, we give something for it by way of thankings.

Thus we must buy the Truth.

1. We must see our need: without the Truth we are in bondage, and in bondage, and in the shadow of death, and miserable. The Truth will make us free, set us at liberty, give us light and life: it will instruct us and enrich us; these considerations should drive us to prize it, because it is of worth, and we need it.

2. We must goe where it is to be had; not to the Levites, Priests, or Scribes, nor to the Papists, Lawyers, or to the God who gives it, who is the Author of Truth; goe to the holy Bible, where it is printed; to the congregation, where it is preached, unfolded, and applied; goe to the society of the godly, where it is professed, and the power of it is expressed; read Commentaries and Expositions, debates, and discourses; digge, and search; be studious, and industrious; let spare

houres

houres here be spent, and vacant time be this way im-  
ployed.

3. We must part with something for the Truth; wee  
must part with some sleepe, with some pleasure, with  
some gaine; nay, if we part with all that we have for the  
Truth, we shall be wise buyers, and great gainers;  
we shall be wise Merchants, and obtaine the best bar-  
gaine.

Secondly, as the Truth is to be bought, so it is to be  
kept, with *Many*; to lay it up in our hearts. *John 2. 51.*  
*Plal. 119. 100.* The Word is kept by witnessing to it,  
*John 18. 37.* and by professing it: for by professing it the  
Truth is knowne, and spread abroad in the world.

We should witnesse in our profession three things of  
the Truth:

1. That it is able to worke a through change\*, and  
to bring a man to a holy frame of heart and life†, that  
the Word hath a regenerating power to make us new  
men.

2. That the Truth hath a power to governe and guide  
a man in his place, to make him a good Father, or ma-  
ster; a good servant, a loyall subject, a loving Hus-  
band, a kinde neighbour, a faithfull friend, a mercifull  
Christian, a just dealer, &c.

3. That the Truth is able to support him in reproa-  
ches, under crosses, and troubles; that there are consolations  
to be had in the Scriptures for every condition, in all  
changes, and alterations.

This shall we shew our selves children of the Truth  
begotten by the Truth; *James 1. 38.* Nourished by the  
Truth; *1. Pet. 2. 1, 2.* And those that have the Truth  
dwelling in them\*, whereby they are enriched, guided,  
quicken'd, embolden'd, strengthen'd, and joyced.

Fifthly, *Quaestio de veritate.*  
**W**Hat duties doe we owe to the God of Truth?  
1. To labour to know him: *John 17. 3.*

2. To

So David saith

\* *James 1. 18.*

† *John 17. 17.*

\* *2. Joh. 2. vers.*

See. 5.

Quest. 1.

Ans.

To give him a true worship *John 14. 24.* To commend our souls continually into his hands. *Psalm 31. 6.*

When doe we know the true God with a true knowledge?

First, when we know him in Christ *John 17. 3.* Secondly, when we know him our God that doth rule Thirdly, when we do know him, that we doe flye to him in all our needs and troubles. Fourthly, when the knowledge increases more and more.

How may we know the Truth from Error? The Truth makes God the highest, and man the lowest. The Truth brings peace with it to the soules which embrace it. The Truth maketh the most sound professors, and substantiall Christians. It seeks not violent means to uphold it; nor, baits, shames and shifts, as Hereticks and Tyrants do. And profiteth the Truth, and sider with it in all our most difficult Judgements on the opposers and gaine-sayers of the Truth.

May a Christian know that he is in the Truth?

He may on sound grounds: David knew that hee had chosen the way of Truth. *Psalm 119. 10.* And St. John saith, Wee know that we are of God. The high-way is light, the by-ways are darke and doubtfull.

What be the symptomes of an upstart Hereticke that opposeth the Truth?

1. He preaches ambiguously, in darke phrases, that so he may win disciples to his lodging. 2. He delivers some Doctrine against the fundamentall points of Religion. 3. He opposeth the faithfull preachers, as *Iannes* and *Iambres* withstood *Moses*. 4. They are not in the same tale in their chambers, and in the Pulpit, to their followers, and to others. 5. They boast of illuminations and revelations. 6. They challenge Disputes, in which they falsifie the Scriptures, and learned Authors,

M

preten-

Quest. 2.

Answ.

\* Psalm 9. 11.

Quest. 3.

Answ.

Quest. 4.

Answ.

1. John 5.

Quest. 5.

Answ.

pretending they are on their side. Their followers  
betray them, the hollow hypocrites; the idle, that live  
without a Calling, or negligent in a Calling; the un-  
stable, and giddy-headed; they make a troop on a sud-  
den to follow them, especially women, and youth.  
They are most bitter against them that oppose  
them. They often make a game of the holy ones,  
which they scorn to be. Observe them, as they  
come to disgrace and deny what they held, or else cast it  
in a new mould, and mint it; and alter it; and tell us  
they were not rightly understood; when the Truth  
meets with them, glad they are to their shifts, and  
silently they deny, or excuse, or beat it. How

Quest. 6.

Ans.

How may a Christian honour the Truth?  
By embracing it in love; professing it in sincerity;  
shunning Heresies, Schisms, Hypocrites, profanities,  
Aposthes; walking in holiness, humility, meekness;  
night and day withal, and patience; and being  
ready to suffer for it. And thus shall we honour the  
Truth, and shall be able to say, as the apostle saith,  
We have not loved in vain the Truth which we have  
received.

## Of Mercy

What Mercy is.  
1. The mercy of the unreasonable creatures.  
2. The mercy of man, both bad and good men.  
3. The mercy of God.  
4. Application to each.  
5. Questions related.

Quest. 1.

First, what Mercy is. Mercy is a pitying of them that are in misery.  
Mercy and Misery are Relatives; were there no  
want,



wrath, nor trespass, there needed no mercy: mercy is in the affection, or expression; in the affection it is warmed bowels of mercy, in the expression, *works of mercy*.

Secondly, *of the mercy of the unreasonable Creatures.*

See. 2.

**T**hey have a kinde of mercy in their nature to their owne kind, or to other kinds. First, to their owne kind, to every Creature with a tenderesse nourishes their young: the Dragons nourish their young, and the Beares lick their whelps to their owne shape, and suckle them. The turtles shew mercy to other kinds: Some say, the Lyons prey not to loone, or not at all on the yeelding creatures: the Thunder passes over the yeelding Reed, and rends the sturdy Oak. The Hawke resting all night by the Lake, flies another way in the morning: being graciously mercifull to the little bird. Those that read in naturall Historie can say much of this.

D. Bara.

Thirdly, *the mercy of men.*

See. 3.

**N**aturally we being children of wrath, have lost the disposition to mercy: wicked men are Cruell, not mercifull. *Prov. 12. 10.* One man is a Wolfe to another, unlesse God restraines us. Cain and Absolon did kill their owne brothers, *Hazael* and *Revillack* their Kings; *Judas* betrayes his Lord and Master, *Saul* kills all the Priests, &c. Some are restrained for the good of humane society, but all the mercy of a naturall man is for bad ends, or constrained.

Revillack killed Henry the fourth.

The truly mercifull man is the regenerate man; these have found mercy from God, and are mercifull to others; these by meditation or visitation are moved to mercy, and exercise it by counselling the ignorant, com-

forting the dejected soules, relieving the needy, and  
sometimes their mercy is exercised in forgiving, as well  
as giving.

Sett. 4.

Fourthly, of the mercy of God.

**M**ercy is essentiall in God; Hee is the fountaine of  
mercy, the Father of mercies. Here we may see  
method consider.

1. The cause of Gods mercy: no cause in us, no cause  
out of his selfe; he hath mercy on whom he will. *Rom.*

9. 18. His owne good pleasure is the cause.

2. The kinde of mercies: his mercies are generall to  
all, or speciall to his elect. *Math.* 5. 45. *Tim.* 1. 2.

3. The effects of his mercy: it is all the good that the  
Creature doth enjoy, all is of mercy, not merit.

4. The largesse of his mercy: *He is great in mercy.*  
*Ps.* 136. 1. *Rich in mercy.* *Eph.* 2. 4.

5. The seasonableness of his mercy: *He bestows mercy*  
*in due time.* *Ps.* 9. *In the Moons he will be seene.* *Gen.* 22.

14. *When our feet slip, his mercy will helpe us.* *Ps.* 94. 18.

6. The variety of his mercies on every faculty of our  
soules, and member of our bodies: His mercies are mul-

titudo. *Ps.* 136. 1. *He hath multiplied his mercies.*

7. The constancy of his mercy: it is for ever. *Ps.* 136. 1.

1. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

2. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

3. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

4. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

5. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

6. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

7. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

8. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

9. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

10. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

11. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

12. *His mercy shall be for ever.* *Ps.* 136. 1.

Sett. 5.

From the un-  
reasonable  
creatures.

\* The young  
Hart carries  
water in the  
mouth to give  
the old one,  
D. B. 1. 1. 1.  
faith.

Ps. 136. 1.

Ps. 136. 1.

Dammes.

Dammes and Sires, condemning churlish children, which are cruell to their old Parents.

From the wicked.

2. If the mercies of the wicked be cruell, then never trust to their mercy, for there is no assurance thereof: pray to God that we fall not into their hands. *Zedekia's eyes were pulled out, so were Samsons: they rip up women with child, they burne and destroy where they get the upper hand.*

3. We may ghesse at a sound professor by his mercy; many have great blazes, but no mercies: pride, and pompe, and belly-cheere, and vanity takes up their hearts and purses: they are much for curiosity, but little for mercy: but a good man is mercifull. *Psalm 137.*

1. He considers the poore and needy: he judges wisely of their estates. *Psalm 41. 1. 3.*

2. He hath thoughts to doe them good, he devises how to be liberrall. *Isaiah 32. 13.*

3. He considers his owne ability. *Math. 11. 20.*

4. He considers his brothers necessity. *Rom. 12.*

5. Hee lookes to his relation; beginning at his center, and working toward his circumference: as first, the household of faith. *Gal. 6. 10.* Secondly, our families.

1. *Tim. 5. 8.* Thirdly, our Country-men. *Psalm 122. 8.*

Fourthly, the stranger: we must do good to all, using discretion in our doing good. *Psalm 112.*

Fifthly, is God mercifull? this should teach us:

1. To praise God for his mercy. *Psalm 136. 1.*

2. Above all mercies for our redemption: this mercy was

promised. *Luke 1. 77.* and in tender mercy performed.

*Luke 1. 78.* By this mercy we that were blinde and igno-

rant are holpen by Christ who is our wiseleme: we that

were guilty are justified by him, he is our righteousle:

we that were polluted, have him for our holiness: we

that were captives have him for redemption. *1 Cor. 1. 14.*

3. We should imitate God by being mercifull. *Luke*

6:36. the more mercy, the more like God.

3. We are to be humble, because we need mercy; for we are poore, and neede mercy. *Rev. 3. 17.* we are transgressors and neede mercy. *Isaiah 48. 8.*

4. We should labour for those qualifications, that we may be under the promises of mercy, and be assured of mercy. As this following:

1. To confesse our finnes, and forsake them. *Prov. 28. 13.*

2. To feare God: his mercy is on them that feare him. *Luke 1. 50.*

3. To love God: he shewes mercy to them that love him. *Exod. 34. 6.*

4. To trust in God: then mercy shall compass us. *Psal. 33. 18.*

5. To thinke on good things, then wee shall have mercy. *Prov. 24. 21.*

6. To be mercifull, then we shall obtaine mercy. *Matth. 7.*

7. To keepe close to the rule of Gods word. *Galat. 6. 16.*

*Sell. 6.*

Sixthly, *Questions resolved.*

*Quest. 1.*

**H**ow must I shew mercy to them that offend mee?

*Answ.*

There is forgiving mercy that must be practised.

1. To have a disposition to forgive without acknowledgement.

2. To forgive willingly upon acknowledgement.

3. To pray for the offender.

4. To be grieved if any crosse befall him.

5. To doe him good cheerefully if we can.

*Quest. 2.*

What mercy is to be shewed to beggers at the doore?

*Answ.*

Some hold they are not to be releaved: but we have a rule

a rule to doe good to all: *Gal. 6. 9.* and God causes his Sonne to shine on the evil and good: *Matth. 5. 45.* They must be weaklings, not sturdy rogues; such as are ready to perish, though they be evil; their persons must be nourished, not their evils maintained: 'tis mercy to instruct them with our reliefe.

How shall a man obtaine a mercifull heart? 1

1. He must see his need of Gods mercy, and humble himselfe till he feeles Gods mercy towards him;

2. He must looke on miseries: the heart is much affected by the eye.

3. He must put himselfe in the condition of the sicke, the prisoner, the captive, the oppressed, the hungry, the troubled in minde.

4. He must be often in the acts of mercy, that by degrees there may be obtained the greater disposition.

5. He must be on the example of the mercifull, see how mercy doth beautifie them, and make them amiable.

6. Lay Gods commands to heart: *Luke 2. 36.*

7. Consider the effect of the unmercifull: they shall have judgement mercilesse.

8. Lastly, pray to God to encline the heart to mercy and compassion: *Aske, and ye shall have, Matth. 7.*

What are the benefits of a mercifull heart?

1. Mercy makes a man like God: *Luke 6. 36.*

2. The mercifull hath many prayers for them: and they can be God to be comforted by many.

3. The mercifull are under the promise: *Matth. 5. 7.*

When the broken heart seeketh, the mercifull heart findes a remedy: that is mercy.

The mercifull heart hath a mercifull hand: for he sowes seed, and hereafter shall have a joyfull harvest.

4. Whensoever he goes to prayer, he shall be heard: *Isa. 58. 7, 8.*

Quest. 3.  
Answ.

Quest. 4.  
Answ.

Of

## Of Justice.

1. *What Justice is: how it is defined.*2. *Of the justice of men.*3. *Of the Justice of God.*4. *Applications distributive.*5. *Questions resolved about Justice.*

Sect. 1.

First, *what justice is.*

Justice is to give to every one his own; it is to do right, to keepe equity: Justice is either distributive in dealing, so it is communicative justice; or distributive in punishing, so it is corrective justice.

Justice is to give neither too much, nor too little; it is to be exact, as a man that shoots, which neither shoots over the mark, nor short of it, nor besides it, but hits it just in the middle.

Sect. 2.

Secondly, *of justice in men.*

Justice in men is either justice before men, or justice before God: Justice before men the heathen attaine, to pay that they owe, not to wrong their neighbour in dealing: A heathen buyes a commodity of a Christian merchant, and going away, opens his wares and findes money; he brings it backe to the Christian and saith, I bought the wares, not the money, 'tis unjust to me to keepe it. Justice before God is legall or Evangelicall: Legally just was never any, but Adam in innocencie, and Christ, that just one, who fulfilled all righteousnes.

Evange-



Evangelicall justice is that, when a sinner being justified by imputation of Christs justice, labours for inherent justice by the vertue of the regenerating spirit in him, the endeavouring after justice is called justice through Gods acceptance.

Thirdly, of the Justice of God.

Self. 3.

**G**OD is Justice, 'tis essentiall with God to be just. The Lord is just: *Psal. 92. 15. Zephaniah 3. 5.* Hee is just in his decrees; just in the execution of his decrees; just in his government of the world; just in all his punishments and judgements. Hee is the judge of all the world, the Lord of all; just in himselfe; just in his Lawes; just in his rewards; just in his punishments.

His Justice in punishing may bee considered five wayes.

1. His justice past, on Angels and on men: on Angels his justice fell totally irrecoverably: on men, a world of them felt his justice at once, onely *Noah* and his family excepted: Cities have bene punished, as *Sodom*, *Gomorrah*, *Admah*, *Zebaim*: Families, as *Achan*, and *Sennacherib*: Persons; as *Ananias*, *Sapphira*, and *Herod*.

2. His justice present, for no age escapes without some demonstration of justice: we, or others seele Plague, Warre, or Famine, decay of trade, fearefull fires, inundations of waters, earth quakes, civill combustion, and uproares among the people, &c.

3. His justice to come in this world or the next world; there shall be a great Sessions, and justice shall bee executed without all evasions, bribes, or shifts.

4. Consider Gods justice spirituall: as a blinde man, *Isa. 6. 10.* A hard heart, *Psal. 81. 12.* A Reprobate sense: The spirit of slumber *Rom. 11. 8.*

5. His justice and judgements are temporall on out bodies, goods, or names, *Deut. 28. 26.*

Sec. 4.

**Fourthly, a duty of justice to the poor.**

**I**f justice be to do right, then easy with all injustice; if we do not, God will away with us. *Mat. 7. 23. discedite a me. Away from mee ye that worke iniquity: the unjust shall have their portion, shall be disinherited.* *1 Cor. 6. 9.* 'tis a plaine case all know it. *Know ye not (saith St. Paul) the unjust shall not inherit the Kingdom of heaven?*

**2.** This should provoke us to labour to be just, to get forth, that so we may be justified, clothed with Christ, righteous before God. To get a honest heart, and good conscience, that we might praise be justified. To honour superiors, this is right. *Eph. 6. 1.* To pay what we owe, and what we bargain for, to stander no man; to be diligent in our places, faithfull where we are trusted, to sell a penny worth for a penny, to be just wrights and ministers, to keep promises, wearable, to love our wives with a matrimoniall love, to be altho excessive, to give in our families to be courteous to strangers, to comfort the afflicted, to be grateful for favours received, to be peaceable among neighbours, altho it is right to follow our calling to the occasions, to live within our stipend, to preserve the means, it will preserve not this is just, equal and right.

That we may be quickned to labour for justice in dealing, take these motives.

1. We shall be conformable to our head, I say Christ, who was and is just.
2. The Lord delighteth in them that deal justly.
3. It shall way in honour: Justice is of an exalting nature, and maketh a man to be glorified.
4. The fruit of Justice is peace.
5. The righteous shall be saved, and have glory in heaven.

Lesson from Gods Justice. 1. 10. 1.

1. God is not all of mercy, as some good men think persons imagine that he is all of justice, and clearing the wicked, *Ezekiel 34.*

2. We shall be sure to have Justice at the great Sessions: for the Lord is just that judgeth, *Psalm 13.*

3. To declare the same to our children, *Psalm 78.*

4. Take heed of the like sinners that were punished before, lest we be also punished: the same effect have the same effect.

5. We are the more inexcusable before God, and deserve to be made examples that will not take examples.

6. To acknowledge God the author of them, *Psalm 119.*

7. To confesse God is just in his dealing, *Psalm 119.*

8. That he deal not with us in extremity, *Psalm 119.*

9. We should work ourselves to repentance, *Psalm 119.*

10. Our hearts should be moved with fear, *Psalm 119.*

11. We should humble ourselves, and pray, *Psalm 119.*

12. To shew highly of the Lord Jesus, who saves us from wrath to come, *1 Thess. 1. 10.*

13. Not to be rash in consulting things that God has hid now, shall be manifested then, *1 Cor. 13.*

14. To use our talents well, for that we must give up our accounts, *Math. 25. 19.*

15. To persuade others as we are able, that they may escape with us at that day, *1 Cor. 15. 17.*

5. To be frequent in the works of mercy, for that will stand us in stead at that day, *James 2.13.*

6. To make conscience of every sinne, for then every secret shall come to judgement, *Eccles 12.14.*

7. Watch and pray now, that we may escape then, *Luke 21.* compare verse 27 with 36.

8. To repent speedily, and seriously, because there is a day of judgement, *Act 13.30.31.*

9. To grow in love now, that we may have boldnesse at that day, *1 John 4.17.*

10. To account all things dung, that we may winne Christ, and at that day be clothed with his righteousness, *Phil 3.9.10.*

From spirituall judgements, learne,

1. They are not most happy, that doe escape temporall judgements only.

2. Labour for eye-salve, and inward moisture, and softnesse of heart.

3. Pray most against spirituall judgements.

4. Honour God with that light you have received lest he give you over to spirituall judgements, *Rom 1.21.*

From temporall judgements, learne,

1. Sinne brings these evils, *Psal 107.34.*

2. Let us judge our selves, this is the best way to escape, *1 Cor 11.31.*

3. The worst members are wicked men in a Church or State; it is they that doe pull downe judgements.

Thus I have declared; the Lord my rooke is just, and my judgement is in him, *Psal 92.161* and I further conclude from his justice,

1. That no good shall goe unrewarded; for God is not unjust to forget it, *Heb 6.*

2. Our sinnes shall be pardoned, if we confesse them, *1 John 1.9.*

3. Our prayers shall be heard, *Psal 145.17.*

4. Our wrongs shall be revenged, *2 Thess 1.6.*

Fifthly,

Fifthly, *Questions answered.*

**I**S it just to abate workmen, as some shop-keepers doe?

No, it is unjust, having promised so much in bargain, and the workman deserves so much by labour. The master of the vineyard paid what he agreed for, and said, *Friend, I doe thee no wrong*: had he given lesse then he bargained for, he had done him wrong. This pinching of poore men, and abating them, is from covetousnesse and cruelty, and a beginning of oppression.

May Stewards spend of their masters stocks, and yet be just?

No: unless for their masters advantage, and with their allowance: Nor must they, if their master allow them to spend a pinte of wine, call for a quart; but be as frugal for their masters in their bargains, as they would be for themselves; and save their masters money, as they doe their owne, because God sees them.

Is it lawfull for a tradesman to keepe back some stuffe left of a garment, because the customer will abate him in his bill?

Hard miserable paymasters make men unjust, and then complaine of others, when themselves enforce them: yet to keepe backe the stuffe on a supposition of abatement, is unjust, for it is none of their owne, and we are not to withhold the good from the owner; he is the owner that bought it, not the workman that keeps it.

Is it just to feast our friends with much cost, and in workes of mercy to be very scanty?

Our workes of mercy should exceed our courtesies: Christ saith, Invite the poore, the maimed, the blinde; not thy rich neighbours. He would have our expence goe in mercy most, not in costly feasting. Rich men may lawfully feast the rich; but if they be often in feasting,

Sabb. 5.

Quest. 1.

Answ.

Mat. 20. 13, 14.

Quest. 2.

Answ.

Quest. 3.

Answ.

Prov. 3. 27.

Quest. 4.

Answ.

sting, and seldome and parcimonious in almes, then it is not just.

Quest. 7.

Is it lawfull to make as much of a commodity as we can purchas it for to sell?

Ans.

Wee would not have another doe so to us when wee come to buy. A reasonable price is just; but to worke on the need or ignorance of the buyer, by excessive prices, is unjust.

Quest. 8.

Is it just for a private man to neglect his calling, and to fall to study?

Ans.

If lustfully want by his absence, it is unjust: but to spend vacant time, which others doe in drinking and gaming, elsewhe is just. Of such a mind I say, as the waterman in the boat, Sir, I pray sit a little more to the right hand; anon, Sir, a little more to the left hand: so it may be said to such a man, when he neglects his calling, Sir, a little more to the left hand; and when hee is too eager about the world, or weary, Sir, a little more to the right hand; your studie will refresh you; as the day followes the night, and the night followes the day, so studie and labour will one sweeten the other.

Quest. 9.

Is it just to revenge our wrongs?

Ans.

No: we are not to recompence evil for evil, Rom.

12. 17. Because,

1. Vengeance doth belong to God, Psal. 94. 1.
2. He takes vengeance without perturbations.
3. He being the Judge of the world, will take vengeance justly, being most wise, and most righteous.
4. We revenging our wrongs, may cause the Lord to spare our enemy, and punish us.

Quest. 10.

Is it lawfull to love another woman more than the wife, because the other is more goodly?

Ans.

Not with a matrimoniall love; the Wife must have the preeminence in the affections above all others; because of the nearness of relation, and covenant in Marriage. I may love others as they are Christians,



with a sociable love and familiarity, I must respect none  
equall to my wife.

Is it just to weare brave clothes, when men owe more  
than they can pay?

Some there are whose clothes are their credit, and  
they are betraisted for their outward shew: they may  
have some probability to pay their Debts, and so for  
a time save their credit. But if they have no good ground  
to pay debts due already, it is but injustice to make a  
shew to be trusted further, it is just to Brike faile.

Quest. 11.

Ans.

## Of Life

1. What Life is.

2. Of the Life of Creatures.

3. Of the Life of Gods.

4. Application of edifica.

5. Questions answered.

First, what Life is.

Sec. 1.

Life is to have motion and activity, opposed to  
Inactivity and Inanimateness. There is a living  
Spring a live Fire, whose Motion, Life is operative, and  
excellent, a live Workman more excellent than all the  
Gold in the World, though gold be more useful: A  
live Drigger, such a wise man, is better than a dead  
boy, one live soldier is more excellent than an Army  
of the dead, and slain. It was the live Child that the  
two Slaves were about, it is life that we all strive to  
maintain, and prolong: Life is as the first figure in Arith-  
metick, number as much as you will, it is the greatest.

Second-

Self. 2.

Secondly, of the life of the creatures.

**T**Here is a vegetive life of Trees, and Roots, and Herbs, part in the Earth, part in the Ayre: there is a sensitive life of Beasts, Fowles, and Fishes; there is a rationall life of Angels, and Men: the Angels life is most excellent of all Creatures being spirittuall, holy without wearinesse, or want, or labour, or misery; a glorious and immortall life. The life of man hath three degrees: first, in the wombe; secondly, in the world; thirdly, in Heaven. The life in the wombe is secret in the conveyance, and secret in the continuance. *Ecclesiastes 11. 5.* The life in the world is a life of action: *Rom 2. 6.* The life in Heaven is a life of vision, or contemplation. *John 17. 24. Matth. 5. 8. Then shall we be as the Angels, Mat. 22. 30. which doe behold the face of God. Mat. 18. 10.* The life in the wombe is secret, and little can be said of it: The life in the world is either common to all, being a life of nature; or speciall to the Saints, called a life of grace.

Of the the life of Nature.

The life of Nature is exercised about such things as the strength of Nature can act: All men attaine not to the same operations, nor is the same man alwayes alike: some men excell others in their actions, and the same man excells himselfe in time by exercise and experience. This naturall life is exercised in the severall faculties of the soule, as Understanding, Will, Memory, and Affections. Some by study and industry attaine to the knowledge of the heavenly Sphaeres, and celestiaall Orbes which we doe call *Astronomy*. Some have knowledge of the terrestriall Globe, which is called *Geography*: These say, that the World is divided into foure parts, *Africa, Asia, Europe, and America*. Some attaine to *Rithmaticke*; others to Musick instrumentall and vocall,

and excell the melodious birds : Some attained to *Prin-*  
*sing* after they had long used *Prin-* First men wrote  
 on Ashes with the Finger, as some reports; then on barks  
 of Trees with Knives, then on stones with Iron; then  
 on Parchment with Canes; lastly, on Paper with quills.  
 Their Inke at first was the joyce of a Fish; then the joyce  
 of Mulberries; then they used Chimney-foote: now men  
 use Gumme, Gaules, and Copperas. Man in this life  
 of Nature acts on the Stage of this World divers acts of  
 Wisdome, Art, and Invention; many Martiall inven-  
 tions, and warlike exploits; rares Cures in Physick, and  
 shews great cunning in Navigation; policy in govern-  
 ments; curious Art in Workmanship; profoundnesse  
 in Rethoricke; deepe Arguments in Logikes; I give a  
*Compendium*, it requires a *Volume*.

### Of the life of Grace.

The life of grace none live, but those that are quick-  
 ned from spirituall death, *Ephes. 2. 1.* Naturall men  
 are spirituall dead: When God converts a soule, hee  
 puts a new life into it; that now a man lives to God in-  
 tentually, spiritually, and constantly.

1. Intentially, a man intends and purposes to live to  
 God, whose servant he is. *1. Cor. 6. 20.*

2. Spiritually, this life of grace is godly and religious;  
 holy, heavenly, and spirituall. *Rom. 8. 1.* This life of  
 grace makes them spirituall minded and affected, spiri-  
 tuall and heavenly in duties; as in prayer, hearing, read-  
 ing, and receiving the Sacraments, &c.

3. Grace makes us to live to God constantly; against  
 this life of grace heresies, nor afflictions, nor pleasures can  
 prevaile: *Acts 11. 23.* they cleave fast to the Lord. A  
 man that lives to God, would not change the condition  
 thereof with a worldly man, though he were a Lord, or  
 Prince. This life of grace is a life of knowledge, which  
 doth change him: *1. Cor. 3. 18.* A life of joy, which

doth strengthen him: *Nehemiah 8. 10.* A life of hope, which doth purge him: *John 3. 3.* And yet this is the

This life of grace is most excellent, most honourable, and most comfortable.

*Prov. 12. 26.*

*Psal. 16. 3.*

1. Most excellent in conveyance, they have it derived from Christ: *He is the fountain from whence spiritual life comes.* It is the life of the most excellent persons. This life makes Gods children excellent others, others live only a life of nature, but they live a life of grace; they have grace to restrain them, grace to renew them, grace to comfort them, grace to strengthen and quicken them.

2. The life of grace is most honourable. Two things doe bring honour, one, to doe that is hard, the other, to doe that which is profitable. He that lives a life of grace, doth hard things; he subdues himselfe, workes out his salvation, increaseth daily his assurance, edifies his brethren; and in this employment is his honour. He that lives to God, is one of his servants, he hath entrance into his favour, is beautified with grace and virtues, such honour have his Saints.

3. This life of grace is most comfortable; the comforts of naturall men are but as the light of the Moone, inferior at the best, and alwayes variable. Those which doe live to God, are more him, and the light of his countenance shines upon them. And hence it is, that they have more joy than worldly men: *Psal. 4. 7.* They have communion with God, this makes Heaven joyfull; their actions are goodly, and be a seed of joy; they are the most comfortable people, and have the greatest grounds of joy; they have a better possession, and a larger reversion.

Of the life of glory.

The life of grace ends in a life of glory: the people of God shall be glorious, and shine in the Kingdom of

then

their Father. This life is called *Eternal life*; *Marks 10. 30. John 3. 16.* This life the Scriptures reveale; we are to beleve it as an article of our Creed; we beleve everlasting life & were there not such a life, the professors of the Gospell, and the Martyrs had bene of all others most miserable. *1. Cor. 15. 29.* The Heathen Poets ghesed as it, comparing it to the *Ellysian fields*. This life of Glory is a blessed life; having the enjoyment of God the chiefest good, the only good: There is joy, pleasures, riches, rest, blessed company; there is no interruption of happiness; no sinne, no sickness, no want, no sorrow, no tears. It is a glorious life.

### Thirdly, Of the Life of God, -

**T**He Life of God is essentiall; God is life. This life is eternall, independant, full of joy and felicity; the fountaine of life, all life is derived from him, both naturall, spirituall, and eternall.

The testimonies of Scripture. *Deut. 32. 40. I live for ever. Psal. 42. 2. My soule thirsteth for God; for the living God. Dan. 6. 20. The servants of the living God. 1. Thes. 1. 9. To serve the living and true God. Heb. 3. 12. To depart from the living God. Heb. 10. 11.*

### Fourthly, Applications to edifice.

**I.** **A**rnethly, to desire the living God; to thirst after him. *Ps. 42.* A heart hath three things; first, a vehement desire. Secondly, a present supply. Thirdly, a little will not suffice.

We must desire to enjoy the living God with a great desire, a restlessness till we enjoy him, and have the light of his countenance to shine abundantly upon us.

We should adhere and cleave to the living God, *Heb. 3. 12.* Never depart from him, who is the fountaine of life; we must cleave to him by faith, and not depart from him by infidelity.

Self. 3.

\*John 1.  
\*Ephes. 3. 1.  
\*Rom. 6. ult.

Self. 4.

3. To take heed we provoke him not to wrath: he is not as the dumb Idol, nor as the carflie magicians, he is the living God, lively to pierce into our hearts to finde our faults, and lively to punish us: his feare full to fell into his hands, *Heb. 10. 31.*

4. To learne to trust in him for a supply of all our wants: *is the living God that gives us all things, we do enjoy.*

5. To labour for his favour which liveth for ever, great men die, & their servants are left to shift for themselves: but this Lord lives for ever, and when his servants end this life, he gives them eternall life. *Rom. 8. 38. 39.*

Sect. 5.

Quest. 1.

Ans.

Why doe men so much desire naturall life?

1. Because all honours and pleasures are of no worth, unlesse we have life.

2. Nature abhorres a dissolution.

3. Life is a blessing promised in the word.

4. Life is our time to lay our foundation for happiness.

What course shall a man take to make his whole life hereafter more happy?

First, let him get more holiness, for holiness and happiness are copulative. *Rom. 7. 6.* Secondly, let him learne Gods providence, and be perswaded all shall worke together for the best. Thirdly, unloose his affections from the world, and set them on God.

Doe not learned men live a life of grace?

The Regenerate doe, and none else: the second Adam quickens none but his members of his mystical body.

Which is best, a life of action, or of contemplation?

The life of action for doing, is better than knowing: we must be judged according to that we have done in the flesh, not according to our speculations.

What is the best remedy of a lively and dampish disposition?

To consider the evill of it, it disgraces religion, dis-hartens others, and makes us unserviceable, and dis-

Quest. 2.

Ans.

Ans.

Quest. 3.

Ans.

Quest. 4.

Ans.

Quest. 5.

Ans.



place as for temptation, distrust, and despair.  
 Consider the benefit of a lively and cheerefull con-  
 dition it makes us strong to performe our duty, to overcome  
 our life and heart the one brethren, and make them to  
 approve of our religion.  
 There must needs be used to be quickned: think  
 how happy we were in a cheerefull temper, endeavour  
 to regaine that estate by earnest prayer, lay to heart  
 Gods promises, Gods presence, and follow the example  
 of the Martyrs, their zeale, and courage, the force of their  
 faith, the invincible esse of their patience, their contempt  
 of the worlds lye, as veruna as at their feet.

How may we come to be happy?  
 We must be once hal in our owne eyes, and not be  
 affected with our sinne.  
 Must often lift up our hearts to God.  
 To make a continuall worke to please God.  
 To persevere betwixt holy duties.  
 To out-grow our personall frailties.  
 To be perswaded we are known of God, what so ever  
 we be, and what so ever we doe.

Quest. 6.  
 Answ.

His freewill; he doth what he will.  
 All his happinesse is perfectall.  
 All his will is done as hee desires  
 from the foundation.

Of Blessednesse

What Blessednesse is  
 2. God is most blessed.  
 Of his Blessednesse, of his Creation  
 applications, of his life  
 3. Questions resolved

Self. 1.

First, what is Blessednesse?  
 O he blessed is who is happy, who is felicity, who  
 a well being in honour, safety and prosperity.  
 Blessednesse is opposed to misery; he that is happy, is

Self. 1.

not weary, nor in want, nor in pain. Those that are happy do want neither strength, nor of their happy abundance do relieve others; they are healthy, joyfull, honourable, wise, vertuous, successful, victorious, and this their happinesse is settled, established, increased, enlarged, and no alteration comes, but makes for their happinesse.

Self. 2.

**Secondly, God himselfe is blessed.** *imagine of a*

**Psalm 149. 13. Blessed art thou O Lord: Make**

**14. 61. Arise thou the Father of the blessed: Tim.**

**16. As the commendation of the blessed, God is most**  
blessed and happy: the fountain of blessednesse; most  
happy in himselfe: All creatures cannot add to his  
felicity; onely we acknowledge that he hath already,  
and 'tis our felicity to know and acknowledge the same:  
our humane conceits reach to this; that he is happy:

1. In his possession.
2. His Apparell, *Psalm 134. 1.*
3. His Attendants, the Angels.
4. His freedome; he doth what he will. *Psalm 103. 3.*
5. All his happinesse is perpetuall.
6. All blessednesse is derived from him, as streames  
from the fountaine.

Self. 3.

**Thirdly, the happinesse of the Creatures.**

**1. The Angels' happinesse is a confirmed happinesse,**  
they were created happy, and so continue by con-  
firmation.

**2. The happinesse of men, is a restored, a recovered**  
happinesse: we had happinesse at first, but we lost it; and  
were made againe by for election, effectual calling,  
faith, and repentance.

**3. The other creatures have a happinesse in their kind,**  
and

and their happiness, is that content and delight, which  
satisfies with their desire, as food, and drink, and delight,  
and pleasure, which the reasonable creatures desire, and  
looks no farther: The vegetative happiness is full  
growth, and honourable use, that is the root, and con-  
summation of their happiness.

## Fourthly, in Application.

Sect. 4.

**T**his should provoke us, and stir us up to use  
our best endeavours, to attain to the view of  
the blessedness of God: The Queens of Sheba took  
a long journey, and was a great cost to her, to see  
happiness, and wisdom of Solomon: and afterward she  
saw more than she expected: So if we contemplate  
the blessedness of God, we shall persevere more at the  
last, than at the first.

**2.** We are to acknowledge this blessedness of God as  
David did, *Psalm 145. 13.* else we shall be worse than  
the wicked Priests, *Mark 14. 61.* All Gods excellen-  
cies are to be acknowledged, and published, this will  
cause those that are miserable to fly to him, because he  
has enough for himself, and all that else come and  
blessed at his table.

**3.** To sue and intreat for his love: All desire to be  
happy: and they sue to have relation to great ones,  
whom they judge to have felicity; and if they can get to  
be retainers, or household servants, they think them-  
selves in a happy condition, especially if they target  
the affection of their Lord towards them: others:  
Gain this, and gain all, namely, the favour of this  
blessed God; then all that we have shall be ours, all  
that we want shall be supplied with the love of his  
love: wherefore we are, we are happy; whatsoever  
we do, we shall be blessed in our doings, being in a way  
of obedience.

4. This

4. This shews us, who are the truly blessed and happy ones, those that are the children of the blessed God (A blessed Father he is; and his children must needs be blessed. *They are the blessed of the Lord that made Heaven and Earth.* Psal. 135. 14.)

1. *They are all of them blessed.* Psal. 128. 1.

2. *They are assuredly blessed.* Psal. 128. 4.

3. Sometimes they are apparently blessed, which is evident by their unexpected conversion, their eminent graces, and famous deliverances.

4. Sometimes they are sensibly blessed, this is known to themselves by their sweet consolations; and to others by their fervent praising of God.

5. They shall be eternally blessed; the perfection and consummation of blessednesse shall come upon them to their happiness. *Mat. 25. 34.*

Fifthly, this should informe us to seek blessednesse after in right manner.

1. Let us lay the foundation of our happiness in the pardon of our sinnes. *Psal. 32. 1, 2.*

2. Seek blessednesse by believing. *Luke 1. 55. Blessed is hee that believeth.* Galat. 3. 9. They that are of Faith, are blessed with faithfull Abraham: No faith, no Christ; no Christ, no blessednesse. Happiness is by being united to Christ by faith.

3. Labour for divine qualifications, to evidence to our selves, and others, that we are blessed here, and prepared for blessednesse hereafter: As these;

1. Poverty of spirit.

2. Purity of heart.

3. Meeknesse to beare wrongs.

4. Patience to suffer.

5. Spirituall hunger and thirst, *Matth. 5. 4.* the beginning.

6. The feare of God, *Psalm. 128. 1.*

7. Meditation in Gods Law. *Psalm. 1. 2.*

8. Diligence

8. Diligence in our places. Mat. 24.46.
9. Obedience to the Truth preached to us. Luk. 11.28
10. To be raised from our sinnes. Revel. 20.6.
11. To give to others. Acts 20.35.
12. To doe that our consciences call for, and avoide that which our consciences cry against. Rom. 14.22.
13. To struggle with our tentations to victory. James 1.12.
14. To be very watchfull & circumspect. Rev. 16.15

Fifthly, *Questions resolved.*

Self. 5.

**W**Hat reason can you give, that happinesse is not in the creature?

Quest. 1.

1. Because it cannot give satisfaction.

Answ.

2. They last but a season.

3. They shelter us not from wrath.

Are not your merry jocund fellows happy?

Quest. 2.

No; for their mirth is but madnesse when 'tis sinfull, and as Lightning it blasts their goodnesse, being soone past away.

Answ.

Were not those Heathen happy that attained to moral vertues?

Quest. 3.

They were more happy than brutish, sensuall, ignorant, and vicious Heathen, yet not so happy as weake Christians, whose vertues proceed from justifying faith, are regulated by the Scriptures, are a part of Regeneration, and referred to the glory of God.

Answ.

If Christians be most happy, why are they so inchearefull?

Quest. 4.

1. It may be their joy is inward.

Answ.

2. They may be in the worke of mortification.

3. They grieve for others sinnes and miseries.

4. Some infirmities lie upon them, as the sicknesse of their soules, which hinders their joy.

5. They finde themselves soone to erre in externall

mirth, and then they are growne more circumspect, yet not more content; nor uncherrell.

*Quest. 5.*

If happinesse here, is to have divine qualifications, how is it that some cannot endure to heare of qualifications?

*Ans.*

1. Because they are led by errour, and not by Scripture.

2. They are ignorant that the same Spirit that seales them, doth qualifie them; as the same fire that gives heate, gives light.

3. They doe want qualifications themselves, and in their frenzy oppose them in others, out of their grosse-nesse and ignorance.

4. They have qualifications among themselves, as

1. The qualification of Vagrants; for they will be boundlesse, and know no law for rule.

2. The qualification of Atheists, they say, God sees no sinne in the justified.

3. They have the qualification of divels, to accuse the brethren, and oppose faithfull preachers.

Thus they can admit of qualifications of abhormation, but cannot endure qualifications of sanctification.

What is our happinesse at death?

*Quest. 6.*

*Ans.*

1. That we have walked before God. *Isaiah 38.*

2. That we have kept the faith.

3. That there is prepared for us a Crowne. *2. Tim. 4. 8.*

What is our happinesse after death?

*Quest. 7.*

*Ans.*

1. Our Soules shall bee accompanied to Heaven with good Angels, and good workes; the one to deliver their charge, the other to receive their reward.

2. Our bodies shall be raised at the last day in glory.

3. Both body and soule shall be freed from sinne, and ill company, and all misery, and we shall enjoy the presence of God, the fulnesse of joy with the Angels and Saints, and to be made immortally happy and blessed, beyond that we now can comprehend.



## Of Hatred.

1. The description of it.
2. The distinctions of it. *Impersonal, in things, in causes, in degrees.*
3. Of Gods hating.
4. Applications.
5. Questions resolved.

First, *What Hatred is.*

Sect. 1.

**I**T is a disliking, detesting, and avoiding things contrary to us, to our nature, liking, and welfare. Hatred is of things contrary to us, as God hates sin, being contrary to

1. His Nature.

2. His Law.

3. His Honour.

Man hates contrary to sight and feeling, as stripes, and torments, and death, and sickness, contrary to our being, or well-being. So then Hatred is a disliking, a desire of separation, a detesting, a flying off that which we apprehend to be against us, and our good.

Secondly, *The distinctions of Hatred in persons.*

Sect. 2.

**I**N God his most pure and holy: what hee doth, is good; his will is the rule of righteousness: nothing is in him, or that proceeds from him, but that is most righteous, holy, and good.

Hatred in man is sometimes a lawfull affection,

*Pfal. 97. 11. They that love the Lord, hate evil.*

Againe, there is hatred causelesse; as some hate cherrie, some hate some fruites which in themselves are lovely; but the contrariety and hatred is in their natures: this is in vegetables, in beasts, & in fowles, and fishes, as between the Vine and the Colewort, betwene the Serpent and the Spider, &c.

So men of accursed natures, hate God, *Rom. 1.* hate Light, *Iohn. 3.* hate good men, *Pfal. 34.* hate goodnesse without iust cause, as *Caine* hated *Abel*.

And there is a cause makes men hate; as *Iosephs* brethren hated him, because they thought his fathers love would be removed from them to him.

So *Ahab* hated *Micahiah* because he reprov'd him: so the Dove hates the Hawke, and the Lambe the wolfe, because they know them their enemies, and come to devour.

3. There is hatred of enmity, when we hate the evil, and the party, wishing him punishment or death: so evil men doe hate superiors punishing. And there is an hatred of abomination, when wee, loving our selves or others, hate those evils of sinne or punishment that may be hurtfull to us or them.

4. As there is a distinction in persons or causes, so in things: as

1. Envy and hatred differ in the kind, hatred is in a kind in other creatures, envy is onely humane.

2. Envy arises from some good befalling to our enemy, hatred from some ill he doth to us.

3. We hate Toads and Serpents; but envy not beasts for strength, swiftnesse, or beauty; onely we envy men.

4. Some hatred is lawfull; but no envy is lawfull.

So there is a difference betwene hatred and anger.

1. Hatred reaches to many, but anger to few most usually.

Anger, the older it growes, the weaker it is: but ha-

ted the older it growes, the stronger it is.

3. The angry man would have the party hee is angry with, to know he is angry : but he that hates, conceales his hatred often times.

4. Anger ceases, if we see misery with submission ; but hatred is often cruell and brutish, and unsatisfied, unlesse it see the ruine of the party.

5. Anger is more painefull for the present, because of vehemency : but hatred is more quiet, yet doth watch an opportunity.

There is a distinction of degrees : there is dislike, hatred, and abhorring ; dislike breeds hatred, and hatred growes to an abhorring, to a deadly hate.

Thirdly, of Gods hating.

Scilicet. 3.

I: **W**hom he hates.

2. What he hates.

First, whom he hates.

1. He hates them that love sinne. *Psalm 11. 5.*

2. He hates Lyars. *Psalm 5. 6.*

3. He hates the proud. *Prov. 16. 5.*

4. Those that deale Hypocritically. *Isaiah 1. My soule hates your new Moones.*

6. Those which deale falsely, under a pretence to give to God. *Isaiah 61. 8. I hate robbery for burnt Offering.*

Thirdly, what God hates.

1. He hates iniquity. *Psalm 45.*

2. He hates the prayers of the wicked. *Proverbs 15.*

3. He hates Idolatry. *Psalm 78. 39.*

4. He hates false weights. *Prov. 11. 1.*

Fourthly, P. 3

Sect. 4.

## Fourthly, Applications.

1. **T**His shewes the misery of the wicked, the hatred of God is their portion.

2. This should stirre us up to doe the best we can, to worke our affections so hate sinne, and abhorre it.

1. Because 'tis that dishonours God. *Rom. 2. 23.*

2. 'Tis painfull and grievous. *Rom. 7. 24.*

3. It separates betwene God and us. *Isaiah 59. 2.*

4. It makes us captives. *Isaiah 61. 1.*

5. Sinnes are our debts. *Matth. 6. 2.*

6. They are our burthens. *Psal. 40. 12.*

7. They pollute us. *Cor. 7. 2.*

8. They wound us. *Psal. 41. 4.*

And we should manifest our hatred,

1. By being censorious of sinne.

2. To shunne the places where it is committed.

3. By contending with it, seeking a divorce.

4. By seeking the destruction of it.

5. By rejoycing in the ruine and decay of it.

6. By being irreconcilable with it.

Sect. 3.

## Fifthly, Questions answered.

Quest. 1.

Answ.

**W**Hy doe wicked men hate God?

1. He curseth them by his law.

2. He is contrary to them in his nature.

3. They looke on him as a Judge that will punish them.

Why doe the wicked hate the godly?

1. God hath put an enmity betwene them.

2. They serve severall Lords.

3. They have severall dispositions.

4. The Godly by vertue get the credit from them; the difference of workes breeds hatred, as in *Caine* and *Abel*.

Quest. 2.

Answ.

5. They

5. They are provoked by the diuell to hate them.

What persons are hated among men in the world?

1. Those wch are perfidious where they are betruſted.
2. Thoſe that prove Apoſtates from that they profefſed.
3. Thoſe which are buſie-bodies, and tale-carriers.
4. Thoſe which live idly.
5. Thoſe which make no conſcience to pay their debts.
6. Thoſe which for private gaine doe ſpoyle a Common-wealth.
7. Thoſe which bring in innovations in Religion.
8. Thoſe which live baſely, having great meanes.
9. Thoſe which oppreſſe the poore, and vex the widow and fatherleſſe.
10. Thoſe which take baſe courſes to enrich themſelves.

How may wee get our affections more vehement againſt ſinne.

1. Seely the nature of ſinne more, the danger and filthineſſe of it.
2. Look on it in the effects in the end, and concluſion.
3. The more we love God, the more we hate evil, and abhorrent.
4. Humble confeſſions of our ſins, with aggravation, increaſes hatred.
5. Subſtract from the hatred of poverty, of affliction, and death, and adde to the hatred of ſinne.

How farre may we hate wicked men?

1. We muſt hate their ſinnes, not their perſons.
2. Hate them as they are Gods enemies, not as they are our enemies.
3. Our hatred muſt bee with hope of their converſion, not with deſpaire.
4. We muſt hate them as they diſhonour God, and would pollute us, but not with a ſeeking their deſtruction.

Queſt. 3.  
Anſw.

Queſt. 4.  
Anſw.

Queſt. 5.  
Anſw.

5. So

5. So hate them, as to pray for them; not plot against them that are evill men amongst us.



## Of Love.

1. *What Love is.*
2. *Of Gods love.*
3. *Of Mans love to God.*
4. *Of Mans love to man.*
5. *Applications to edifie.*
6. *Questions resolved.*

*Self. 1.*

*First, What Love is.*

**L**ove is an affection of liking, a well-wishing: Love seekes union, and desires to enjoy the object loved: if it obtaines, then there is a joy, delight, and complacency; if the object of love be lost, or separated, then there is a sadnesse and discontent; if there be hope of regaining, then Love studies, inquires, labours, and is industrious to have former enjoyment and possession. Love is a strong affection in us, it labours, and endures, and forgives; it will be victorious.

*Amor vincit omnia.*

*Self. 2.*

*Secondly, Of Gods love.*

**G**ods love is essentiall; He infinitely loves himselfe, His Sonne, and Spirit, and his love is extended to all his children. 1. *John 4.8. God is love*; hee not onely hath love, but is love, as it is said, *I am understanding*, Prov. 18. 14. As the Sunne is light, so God is love, the Fountaine of love.

*Farther*



Farther, consider four things:

1. The objects of his love.
2. The liberty of his love.
3. The extent of his love.
4. The duration of it.

1. The objects of Gods love are, first, Christ; secondly, the Elect.

First, *Christ*; *Isai. 42. 1. His soule delights in Christ*; *Matth. 3. 17. In him he is quiesced, well pleased; he ever ly pleases him.*

Secondly, in Christ he loves the Elect; *Gal. 3. 23. They are beloved ones, elect, and beloved; ever; Christ*

2. The liberty of Gods love.

It is free; no cause in us, no cause out of himselfe; *Hosea 13. 5. I will love them freely.*

*Benevolentia.*

3. The extent of his love.

It was large and great; *John 3. 16. So God loved the world.* 1. *John 3. 1. Behold what love.* Behold it with admiration, with acclamation, with gratulation: *To love them dead in sin.* *Ephes. 2. 2. To love enemies.* *Rom. 12. 9. To love them that shew themselves manifest enemies by evil workes.* *Colos. 3. 14.*

4. The duration.

*It is everlasting love.* *Jer. 31. 1. Troubles deprive us not of his love.* *Rom. 8. 35. for hee will be with us; Infirmities cannot quench his love; for he will spare us.* *Matth. 10. 29. Death cannot separate us from his love.* *Rom. 8. 38. 39.*

1. Thirdly, *Of Gods love to God.*

*Self. 3.*

And love is either naturall, originall, or spirituall.

Our love to God must be spirituall; but before we can thus love God, our selves must be regenerate.

rate. 1. *John* 4. 19. We love him, because he first loved us, and gave us grace: this love of ours to God, is a constrained love; 2. *Cor.* 5. 14. not a constraint, but by a sweet influence; as the Sunne shining on Hearbe and Flowers, doth constrain them to grow, and smell sweete. The love of God to us, is love active; the love of God in us, is love passive; hee loved of us.

3. *John* 1. 9. Love cometh from God; the Father is the Spirit, the fruite is love. *Gal.* 5. 22. Gods love is manifested to us by the Holy Ghost; *Rom.* 5. 5. Then we love him which first loved us. 1. *John* 4. 19.

4. The marks of our love to God. First, love earnestly desires his presence. *Psal.* 43. 1. This desire is compared to a thirst; wee thirst for God as the thirsting doo, the onely good. This thirst requires,

1. A suitable satisfaction.

2. A present satisfaction.

3. A large satisfaction. A large satisfaction is to offer a costly maner garment, or to sell him a pleasant tale; or let him hear Musicke, it is not suitable; it is drink that he desires.

4. It is a present satisfaction: he desires not drink to morrow, or next weeke, but presently.

5. It is a large satisfaction: drop, or a spoonefull satisfies not; he desires a large draught. When love, it desires God, and himselfe; to enjoy him sweetly, and speedily, and largely.

Secondly, love desires the vision of God, it is death to the soule, having once enjoyed God, to want him. *Psal.* 27. 10. In the want of all things, we want God above all; we really lose him. *Psal.* 73. 1.

Thirdly, love rejoices in his presence; by prayer we draw nigher. *Gen.* 19. 27. 5. will then joy in his presence. *Psal.* 43. 4. Prayer brings us into his presence with a holy gladness. *Phil.* 2. 1.

Fourthly, love makes us obedient to God: *Iohn 14. 15. If ye love me, keepe my Commandements.* The more love, the more duty, obedience, and conformity to his Will.

Fifthly, when we love God, we doe love the children of God: If we love him that begat, we doe love them begotten. *1. Iohn 5. 1.*

4. The promises made to them that love God.

First, they shall have mercy shewed to them, and their posterity, pardoning merites, relieving merites. *Esaie 26. 6.*

Secondly, they shall share in Gods affection: *Ioh. 14.*

21. The Father will love them, the Sonne will love them that love Christ.

Fourthly, all shall worke for the best unto them. *Rom. 8. 28.* What can be more comfortable?

Fourthly, they shall have a crowne of life, *Iames 1. 12.* and a kingdome. *Iames 2. 5.* This is the portion of them that love the Lord.

#### Fourthly, Of Mans love to man.

Self. 4.

THE love of man to man, is either naturall, or spirituall: the naturall love is grounded on naturall Causes, either beauty, or bounty, or consanguinity; something we judge to be love-worthy that drawes the naturall affection.

Spirituall love is a peculiar among the regenerate: they love God for his owne sake, they love their spouses for his commands sake, they love his children for his Image sake: The more holy, and righteous, and heavenly minded men are, the more they love them.

Of this love to the godly, consider

1. The necessity of it.
2. The excellency of it.
3. How it is exercised.

Q 2

4. The

4. The markes of true love.

9. How 'tis preserved.

First, the necessity of this love to our brethren.

1. Without this love we can have no sound evidence that we are the children of God. *1. John 3. 18.*

2. We can doe no workes that God accepts without this love. *1. Cor. 13. 1, 2, 3. 1. Cor. 16. 14. All our things must be done in love: If love be wanting, the work is lost: love is as the sale that seasons all.*

Secondly, the excellency of love.

1. The Divine Essence is love; and 'tis excellent to resemble God.

2. Love is an excellent badge of a servant and scholar of Christ, whereby they are manifested and knowne. *John 13. 35.*

3. 'Tis an excellent fruit of faith: *Eph. 1. 15.* Faith in Christ is fruitfull in love to all the Saints.

4. 'Tis an excellent testimony of a sound convert: By this we may know wee are changed from sinne to grace. *1. John 3. 14.*

5. It is excellent to have God to dwell with us: *Where love is, there God dwells. 1. John 4. 12.*

6. 'Tis as the anoynted above the rest for excellency. *1. Pet. 4. 8. Above all, have fervent love. Col. 3. 14. Above all joy in love.*

Thirdly, how love is exercised.

1. Love seekes to be united; as soone as we love Gods children, we endeavour to joyne with them. *Act. 9. 26.*

2. Love enjoying the objects, turnes to delight. *Psal. 16. 3.*

3. Love casts the garment of charity to hide our brethrens infirmities. *1. Pet. 4. 8.*

4. Love edifies others. *1. Cor. 8. 1.* To edifie, is to build. Love builds artificially.

1. By pulling downe the old wall of naturall corruption.

2. Lay

2. Laying a sound foundation of faith and repentance; it will conferre with young ones, and weake ones, to helpe them, not puzzel them. *Rom. 14. 1.*

3. It brings new materials from the word, and raises the building higher and higher; and strives to adde practice to knowledge, wisdom to zeale, mercy to justice, patience to diligence, reverence to assurance.

4. Love is exercised in relieving the necessities of our brethren: Love ministreth to the needes of the Saints.

*Heb. 6. 10.*

Fourthly, the markes of love to our brethren.

1. True love is unfeigned; *2. Cor. 6. 6.* without dissimulation. *Rom. 12. 9.*

2. 'Tis fervent: there is heate in true love, and haste to doe them good: heate hath motion. *1. Per. 4. 8.*

3. 'Tis diligent: Love nor hatred will be idle. *1. Thef. 1. 3.* Love is laborious for them beloved. *Heb. 6. 10.*

4. 'Tis constant, 'tis not as carnall lust; hot lust is soone cold; as *Amnon* to *Tamar*; but true love continues. *Hab. 13. 1.*

Fifthly, how love is preserved:

1. Labour for reall, sound, effectuall love, then it will last and hold out. *1. Cor. 13. 8.* Love doth never fal away.

2. Avoyd groundlesse surmises: Love thinketh none evil, *1. Cor. 13. 5.*

3. Interpret doubtful things charitably, as old *Jacob* did, when he saw *Iosephs* coate.

4. Harken not to every tale and report of the faults of others, the words of tale-bearers sinke deepe, and embitter our affections.

5. Give loving answers, for sweete speeches preserve love. *Iudg. 8. 2, 3.*

6. Sometimes let us lay aside our authority, and use entreaty to preserve love. The Epistle to *Philemon* the ninth verse.

Sect. 5.

Fifthly, *Applications to edifie.*

1. **T**O admire the love of God : 1. *Iohn 3. 1.* both for the freeness, greatnesse, and continuance : we admire that we cannot comprehend : such is the love of Christ, *Eph. 3. 19.* that it passes our knowledge.

2. If God hath so loved us, we ought to love him againe with all our heart, and mind, and strength. *Deut. 6. 6. Matth. 22. 37.*

3. Let us endeavour to preserve our love to the Lord.

1. Take heede we looke not on the worlds excellency too much, and neglect divine meditations.

2. If we will preserve our love, we must preserve our acquaintance with him by daily prayer, reading, hearing. *Iob. 22. 21.*

3. Daily consider the worth of his love ; 'tis better than life it selfe. *Psal. 63. 3.* and of the effects of his love, in giving his Sonne, his Spirit, his Graces, his Promises, his consolations, this world, and the next world ; this will revive our love to him.

4. 'Tis great impiety to decline in love to God ; wee make as if he were not so amiable, and love-worthy as once we thought him ; or that we have found something that deserves our affection more than himselfe.

If we preserve our love to God, we preserve our assurance of his love to us, we preserve our strength to performe duties, to beare crosses, we preserve in our selves a fitnessse to live, and a promptnesse to dye, preserve this, and it will preserve us.

Fourthly, concerning love to men.

1. Let us thinke of things that pertaine to love, such thoughts are both comfortable and profitable, *Phil. 4. 8.*

2. Pursue love, follow after it, as men that hunt, doe pursue



pursue the hare, let us follow hard to catch it, not to kill it, but enjoy it. *1. Cor. 14. 1.*

3. Let our trading, and employments, all our business and affaires be done in love. *1. Cor. 13. 14.*

4. Let us endeavour to be found in love. *Tit. 2. 12.*

This duty is

1. Commanded. *1. John 3. 23.*

2. Commended. *1. Cor. 13. 13.*

3. Approved. *Rev. 2. 19.*

4. Rewarded. *Heb. 6. 10.*

And our love should be thus ordered.

1. To love God above all, as the supreme, and chiefe good.

2. To love our owne soules next, as being more worth than all the world. *Matth. 16. 6.*

3. To love my neighbours soule, for that may partake of God; after that manner the body is not capable, but by participation with the soule.

4. To love my owne body above all other mens.

5. The bodies of my brethren, among them;

1. Those which are most godly.

2. Those that are of my owne nation.

3. Those that are my kindred.

4. Especially those of my family. *1. Tim. 5. 8.*

5. Above all my wife. *Gen. 2. 24.*

Sixthly, *Questions resolved.*

**W**HAT is the love we owe to wicked and ungodly persons? *1. Cor. 13. 14.*

A love of compassion, but not of approbation.

May we love our selves?

We may; for wee are to love our neighbour as our selves; our selves with honest patterns to love our neighbourly: we must love our bodies, and nourish them: *Ephes. 5. 29.* And we must love our soules, and labour

*Gal. 6. 13.*  
*Psalme 113. 8.*

*Psalm 6.*

*Quest. 1.*

*Ans.*

*Quest. 2.*

*Ans.*

*Quest. 3.*

*Ans.*

to save them. *Acts 16. 30. Matth. 16. 16.*  
What love owe wee to the children of God that are dead?

1. Honourable buriall. *Acts 8. 2.*
2. Moderate mourning. *John 11. 33.*
3. Respect to their posterity, as *David* to *Jonathan*.
2. *Sam. 9. 4. 5.*
4. To speake of their good workes. *Acts 9. 39.*

*Quest. 4.*

*Ans.*

Losse of love  
to God.

How come Christians to lose their first love? *Rev. 2. 4.*

1. They make new things rather than true things.
2. They take too much worldly contentment.
3. They neglect the meanes of grace, as reading, hearing, and prayer.
4. They change their company for them that are lesse zealous.

5. They look on the graces of others with envy, or discouragement.

*Quest. 5.*

*Ans.*

Why is the love of many growne so cold?

1. Because in some it was never hot.
2. Because they see men perfidious, unjust Apostates, so abhorre them.
3. Some looke onely on the evils of men, not their good parts.
4. They finde arguments to coole their love, but none to kindle it.

*Quest. 6.*

*Luke 14. 26.*

*Ans.*

Must wee so love Christ, as to hate Father and Mother?

1. Our love should be so large to Christ, that our love to any other creature should seeme hated to it.
2. They should see us so flie them in opposition to Christ, that they should thinke we hate them.
3. Though we honour and love them simply, yet we are to hate them comparatively.

*Quest. 7.*

*Ans.*

What is the love we owe to our Reverend Preachers?

1. A love of Reverence, as they are Embassadors.
2. *Cor. 5. 19. 20.*

2. A love of maintenance, as they are painefull.
3. A love of attention, as they are teachers.
4. A love to stand for them, as they are opposed by hereticks and profane men.
5. A love of piety, to pray for them. *Colos. 4. 3.*
6. A love of courtesie, if wee be able, to invite them home. *Acts 16. 15.*
7. A love of complacency, to delight in them as the excellent ones. *Psal. 16. 3.*

1. Excellent in their function, being the Lords Tribe.

2. Excellent in their gifts of holinesse and learning.

3. Excellent in their employment, the saving of soules. *1. Tim. 4. 16.*

4. Excellent in their reward, a great reward. *Mat. 10. 41.*

How shall we preserve love where we differ in judgement and opinion?

If we agree in the foundation.

1. Observe how godly Ministers doe agree, follow them; some differ in judgement, yet walke in love.

2. Let us looke on the good we see one in another.

4. If we meete, let us confesse of those things where in we doe not differ.

5. Let us pray one for another, so love may be preserved.

How may I gaine more love, and grow therein?

1. Get the strongest apprehension wee can, of Gods love to us in Iesus Christ.

2. Looke on the good that wee see in our brethrens, ponder their vertues, cover their infirmities.

3. Labour to feeble the comfort of love. *Phil. 2. 1.*

How doth love sweeten our pilgrimage? To meete and confesse in love, to comfort one another in love, makes our presence acceptable, it adornes our profession, and Religion abundantly.

Quest. 8.

Ans.

Quest. 9.

Ans.

## Of Patience.

1. What Patience is.
2. Of the patience of God.
3. Of the patience of man.
4. Applications to edification.
5. Questions resolved.

Sect. 1.

First, What Patience is.

**T**HE word signifies sufferance, or forbearance. In patience are three things: First, a promptness, or readinesse to beare. Secondly, the act of patience in bearing. Thirdly, the duration, which is called long suffering.

Sect. 2.

Secondly, Of the patience of God.

**T**HE patience of God, is his slownesse to anger, his sparing of sinners, and giving them space to repent.

Rom. 2. 4.

There is patience and long suffering which flowes from his goodnesse: Men daily doe provoke God, yet he forbears.

1. Because he would bring men to Repentance. Rom. 2. 4. 7. 11. 3. 9.
2. To leave wicked men inexcusable, having so long forbore them.
3. That men might be encouraged, and not despair: thus God was patient towards Pharaoh, for the example of others. P. Tim. 1. 6.

Thirdly,

Thirdly, Of patience in good men.

Sol. 3.

**P**atience is a gift of God, whereby they beare evils present, and looke for good things absent.

1. It is a gift of God. *James 1. 17.*
2. Whereby they beare evils at Gods hand, being corrections, or chastisements; Or at mens hands, being wrongs and injuries.
3. A waiting for good things absent, as the sense of Gods favour, the accomplishment of Gods promises, the consummation of future happinesse; these with patience we doe waite for.

Patience may be further considered.

1. In the contrary to it.

2. In the causes of it.

3. In the effects.

First, in the contrary of it.

The contrary to patience is fretting, murmuring, despairing, cursing.

1. Fretting, as *Haman*, because *Mordecai* bowed not to him.
2. Murmuring, as *Israel* for want of water.
3. Despairing, as *Enoch* and *Judas* for want of grace; so pray for pardon and patience; to waite for an answer.
4. Cursing, as *Isiah*, who could not refrain, till hee came within the stroke of *David*; but being impatient, cursed him before he came at him. *1. Sam. 17.*

Secondly, consider patience in the Causes of it.

1. Patience arises from the knowledge of Gods Sovereignty, being perswaded of his disposing things below.

*Psal. 10. 2.*

2. From the perswasion of Gods Wisedome, and love, that he will turne the event and conclusion to our good. *Rom. 8. 28.*

3. From hope of glory; Hope makes us patiently to waite. *Rom. 8. 25.*

R 2

Thirdly,

Thirdly, consider patience in the effects of it.

1. It quieteth the heart in the time of trouble, making those things easie, which murmuring, fretting, and impatience doe make irksome and tedious. The same *David* that was vexed at *Nabal*, was by patience calmed at *Shemei*.

2. Patience makes us to persevere when we finde not the present good we expected; for by patience we hold out, when others by impatience draw backe.

Self. 4.

Fourthly, Application to edification.

1. **G**ods Patience should lead us to repentance; God is patient towards all; some are benefited by it that have grace, they make a holy use of his gentlenesse and patience; others are licentious, because God defers his punishmentts; and their hearts are set in them to doe evill, so they heape up wrath for themselves. Let us bee wise, and in the sunne-shine of his patience procure our owne peace, get assurance of his favour, that Gods patience may be prolonged; our wisdom commended, and our happinesse established.

2. Admire Gods patience; he came to *Adam* at the close of the day, shewing his patience. He spared the old world 120 yeares, hee hath spared us a long time.

3. Let us be followers of God as deare children: hee is a God of patience; *Rom. 1. 19.*

4. Tis the Diuell that hath great wrath, and his instruments are given to rage. *Psalm. 1. 1.* The Saints are commended for their patience; and though wee bee converted, and know God, yet we doe need patience. *Heb. 10.*

5. There is a passive obedience to suffer, tis patience must helpe us: If we bring miseries on our selves, then wee should exercise patience; if God lay them on us, then use patience.

Are



Are we troubled in mind? we must be patient, and wait.  
 Are we scandalized in our names? we must be patient.  
 Have we lost our goods? we must be patient.  
 Are our bodies sicke? still we must be patient.  
 Patience is physick for all maladies, a plaister for all  
 sores, a horse to beare all burthens.

*Job* kept his patience and thankfulness when he lost  
 all outward things.

4. Here see the misery of the impatient; they are as  
 souldiers without armor, as travellers without shoes, stil  
 they are wounded and pricked: every word makes them  
 take exception, and every small crosse becomes heavy un-  
 to them. Their ignorance and pride workes them more  
 woe than all their miseries; and they vex themselves  
 more than their enemies can doe. A glasse, or a knife  
 broke, or their dogge kicked, or a scoffe cast on them, tor-  
 ments them, and they are in their mindes in an uproare  
 like the Beare-garden: they are like a sore, ever aking,  
 and must not be touched: they are unfit for the Crosse,  
 and farre from consolation: they cannot enjoy them-  
 selves, and are miserable wheresoever they are; alwaies in  
 danger to be baited with the Crosse, and meeet with  
 vexation.

5. Here we may try our selves whether we have at-  
 tained patience. Hath the head aked? or the child died?  
 or the Customer broke? or the servant proved false?  
 hath some censured, or falsly accused us? have friends  
 proved perfidious? is trading decayed? how doe we be-  
 have our selves? doe we vex, and fret, and looke to se-  
 condary causes, complaining of the wickednesse of men,  
 and wish evill to them, and fret at God under the name  
 of hard destiny, ill fortune? doe wee seeke revenge on  
 men by word, or writing, or law? if we doe, wee are not  
 yet patient.

Patience will make us say, it is the Lord, let him doe  
 what seemes good to him.

Patience opens not the mouth discontentedly, but graciously. *Psalm 39.1.* Patience blesses God in loss of all: Patience quiets us in God at the worst: *1 Sam. 30.6.* Patience makes us, with Saint *Stephen*, pray for enemies.

Fifthly, *Questions resolved.*

*Sect. 5.*

*Quest. 1.*

*Ans.*

**H**OW differs the Patience learned by Scripture, and the patience learned by Philosophy?

The Patience the Scripture brings, is a recompence of the study of the Scripture, and is seconded with consolation from the promises in the Scripture, and the hope of glory revealed in the Scripture. *Rom. 15.4.*

Philosophicall patience was sometimes Stoicall, to submit to that is inevitable; they wanted divine consolation and sound hope, wanting the ground thereof, the holy Scriptures.

*Quest. 2.*

*Ans.*

How large must our patience be extended in respect of wrongs and injuries?

Injuries are of three sorts.

1. Those small wrongs which doe displease us, to our honour and credit to passe them over. *Prov. 9.12.*

If small bryers take hold of our garment, let us loose them gently, and goe on our way.

2. A second sort that doe somewhat harme us in our persons, goods, and reputations; these we may take notice of, yet patiently beare them, and forgive them. *Iohn 8.49.*

A third sort of violent injuries of adversaries, both malicious and cruell; wee may patiently submit to God, yet use meanes by Law, or force of Armes to defend our selves.

*Quest. 3.*

*Ans.*

How farre should Master and Parents be patient before they correct?

1. They should use prayer, example, and instruction amongst their servants and children.

2. L

2. Distinguish of faulces of infirmity, the faulces of im- providence, carelesnesse, and obstinacy.

3. Give warning first, and winne them by gentlenes.

4. Use correction with prayer and moderation in the last place.

How if they be hase and vaine people that scandalize me; how shall I be patient?

*Quest. 4.*

1. They have the lesse credit, and will hardly bee be- lieved.

*Ans.*

2. It may be, yet they have not learned to speak wel.

3. Be not impatient, but use their accusations and scandalls for preventions.

4. Praises may prove more dangerous than scandalls, they are better that speake evill of us, than they that flatter us, and better to us.

5. Christ was evill spoken of, though an innocent.

6. Our patience will more vex our adversary, than our returning word for word.

How if my crosses come thicke one upon another, as Iabrid?

*Quest. 5.*

1. Time and custome makes fooles patient; get patience timely, and speedily, by resolution, and meditation; beare all with patience, they come from God; be thankfull for them, because they are medicines; be the more patient and chearefull, because they are steppes to glory.

*Ans.*

2. Labour to get a further interest in God, then all shall be supplied; and we having lost all, may be patient and quiet, because we enjoy him that is better than all: The fruition of God is the maine good, the onely good; matchlesse, changelesse, alwaies, everywhere with us, above all casualties and uncertainties.

3. Be not insensible as a blocke, nor impatient, as without faith and hope: be patient as a Christian, that though he be molested, he enjoyes himselfe: *By patience we possesse our soules* Luke 21. 19.

4. Labour for a rectified judgement, looke not with a

wrong

wrong eye on others prosperity. The Jewes were impatient to heare the children cry *Hosanna*, *Matth. 21. 15.* and impatiently murmured at a supposed fault, when *Christ* went in with *Zacharias*. Errour in opinion doth much wrong others, and disquiet our selves; we having blinded eyes, shall have impatient hearts: Ignorance makes us full of mistakes; we see not good in evill. Our crosses are as *Sampsons* Lyon, there is honey of instruction in them; bitter Aloes may prove medicinable.

5. Impatience cures us not, it is not the remedy of a misery, but a procurer of a judgement. The Jewes murmured, and were impatient, their carcases fell in the Wildernesse. *Achisophel* and *Judas* in their impatience hanged themselves.

Ezekiel 36.

6. Set up a Sessions in the conscience, and let us judge our selves worthy of all the sorrows of this life, and the life to come: thus abasing our soules before God, will breed in us patience and submission in all our afflictions.

7. Meditate in the Law of God continually, search the Scriptures, then we shall learne this lesson, to be patient. *Rom. 15. 4.*

8. Learne Gods providence, he disposes of all things: to be grieved at Gods ordering things, is great impiety; all creatures submit, Man onely disquiets himselfe, and is impatient.

9. Abhorre sinne, the cause of crosses; remember that crosses should prevent sinnes, and make us to forbear pleasures, and endure troubles the more patiently.

10. By patience the Will of God is done by us, *Heb. 10. 35.* and the promises inherited. *Heb. 6. 12.* Goe on therefore, suffering his will, and waiting with patience for the inheritance.

11. Let our troubles cause us to cry to our Physicians, who will heare us, though not according to our will, yet according to our good.

12. We suffer not alone; the same afflictions, yea, worse

worke it may be, our brethren doe endure. The griefe of the Saints being indifferent, it is the easier borne; if it be great, the glory shall be greater: if it seeme hard, let us blame our tendernesse; most commonly, if it bee long, it is the lighter; if it be violent, it is the shorter: None are exempted; I shall not escape that which never any did before me. God had but one Sonne without sin, but not one without affliction.

13. Looke to Christs comming to Iudgement; then the troubled shall have rest. 2. *Thess.* 1. 6, 7. Be patient therefore, for the comming of the Iudge draweth neare. *James* 5. 7, 8.

14. Affect no earthly thing over-much; for we impatiently part with that which wee inordinately affected. *Jonah* too much rejoyced in his Gourd, and *David* too much affected his sonne, which made the one exceeding angry, and the other cry out, O Absolon my Sonne, my Sonne.

How may I have my patience enlarged?

1. We must pray more for it, for increase of it; our Reasons, our Arguments, our Rules, and Directions are but as Alder-guns without earnest prayer.

2. Be lesse disquieted at the smaller crosses that dayly befall us; small wheales etc. and small dusts in our eyes; learne to say, My God will enable me to beare more than these.

3. Looke to the most noble examples, Christ endured. *Heb.* 12. The Prophets are examples. *James* 5.

4. Resolve for the worst, our preparations are as Armour, learne to take up the crosse by stooping for it, as well as beare it, if it be laid on us.

5. Grow dayly lesse and lesse in our owne eyes, then shall we be more patient, and willing to suffer.

6. Be sure that we affect not the praise of men, then our sickness will be lesse like *James*.

Quest. 6.  
Answ.

S

Of

## Of the Will.

**T. What it is to will.**

...and the Lord God.

OF AMERICA.

**3. (c) [illegible]**

Questions and answers

5. *Leptodermis* *Leptodermis*

1970-1971

...and the ...

First, what is it?

1944

will, is to change, or refuse

sent Phil. 2, 13. God

ons and parables. W

Method (3) by

**YAN-00-019**

## ding. The War Issue

ON THE WAY WITH MY BROTHER

1996-1997

any other day.

belongs to the region  
near Effie/unt at : 182

1992, 2000, 2002, 2004, 2006, 2008, 2010, 2012, 2014, 2016, 2018, 2020, 2022, 2024, 2026, 2028, 2030, 2032, 2034, 2036, 2038, 2040, 2042, 2044, 2046, 2048, 2050, 2052, 2054, 2056, 2058, 2060, 2062, 2064, 2066, 2068, 2070, 2072, 2074, 2076, 2078, 2080, 2082, 2084, 2086, 2088, 2090, 2092, 2094, 2096, 2098, 2100, 2102, 2104, 2106, 2108, 2110, 2112, 2114, 2116, 2118, 2120, 2122, 2124, 2126, 2128, 2130, 2132, 2134, 2136, 2138, 2140, 2142, 2144, 2146, 2148, 2150, 2152, 2154, 2156, 2158, 2160, 2162, 2164, 2166, 2168, 2170, 2172, 2174, 2176, 2178, 2180, 2182, 2184, 2186, 2188, 2190, 2192, 2194, 2196, 2198, 2200, 2202, 2204, 2206, 2208, 2210, 2212, 2214, 2216, 2218, 2220, 2222, 2224, 2226, 2228, 2230, 2232, 2234, 2236, 2238, 2240, 2242, 2244, 2246, 2248, 2250, 2252, 2254, 2256, 2258, 2260, 2262, 2264, 2266, 2268, 2270, 2272, 2274, 2276, 2278, 2280, 2282, 2284, 2286, 2288, 2290, 2292, 2294, 2296, 2298, 2300, 2302, 2304, 2306, 2308, 2310, 2312, 2314, 2316, 2318, 2320, 2322, 2324, 2326, 2328, 2330, 2332, 2334, 2336, 2338, 2340, 2342, 2344, 2346, 2348, 2350, 2352, 2354, 2356, 2358, 2360, 2362, 2364, 2366, 2368, 2370, 2372, 2374, 2376, 2378, 2380, 2382, 2384, 2386, 2388, 2390, 2392, 2394, 2396, 2398, 2400, 2402, 2404, 2406, 2408, 2410, 2412, 2414, 2416, 2418, 2420, 2422, 2424, 2426, 2428, 2430, 2432, 2434, 2436, 2438, 2440, 2442, 2444, 2446, 2448, 2450, 2452, 2454, 2456, 2458, 2460, 2462, 2464, 2466, 2468, 2470, 2472, 2474, 2476, 2478, 2480, 2482, 2484, 2486, 2488, 2490, 2492, 2494, 2496, 2498, 2500, 2502, 2504, 2506, 2508, 2510, 2512, 2514, 2516, 2518, 2520, 2522, 2524, 2526, 2528, 2530, 2532, 2534, 2536, 2538, 2540, 2542, 2544, 2546, 2548, 2550, 2552, 2554, 2556, 2558, 2560, 2562, 2564, 2566, 2568, 2570, 2572, 2574, 2576, 2578, 2580, 2582, 2584, 2586, 2588, 2590, 2592, 2594, 2596, 2598, 2600, 2602, 2604, 2606, 2608, 2610, 2612, 2614, 2616, 2618, 2620, 2622, 2624, 2626, 2628, 2630, 2632, 2634, 2636, 2638, 2640, 2642, 2644, 2646, 2648, 2650, 2652, 2654, 2656, 2658, 2660, 2662, 2664, 2666, 2668, 2670, 2672, 2674, 2676, 2678, 2680, 2682, 2684, 2686, 2688, 2690, 2692, 2694, 2696, 2698, 2700, 2702, 2704, 2706, 2708, 2710, 2712, 2714, 2716, 2718, 2720, 2722, 2724, 2726, 2728, 2730, 2732, 2734, 2736, 2738, 2740, 2742, 2744, 2746, 2748, 2750, 2752, 2754, 2756, 2758, 2760, 2762, 2764, 2766, 2768, 2770, 2772, 2774, 2776, 2778, 2780, 2782, 2784, 2786, 2788, 2790, 2792, 2794, 2796, 2798, 2800, 2802, 2804, 2806, 2808, 2810, 2812, 2814, 2816, 2818, 2820, 2822, 2824, 2826, 2828, 2830, 2832, 2834, 2836, 2838, 2840, 2842, 2844, 2846, 2848, 2850, 2852, 2854, 2856, 2858, 2860, 2862, 2864, 2866, 2868, 2870, 2872, 2874, 2876, 2878, 2880, 2882, 2884, 2886, 2888, 2890, 2892, 2894, 2896, 2898, 2900, 2902, 2904, 2906, 2908, 2910, 2912, 2914, 2916, 2918, 2920, 2922, 2924, 2926, 2928, 2930, 2932, 2934, 2936, 2938, 2940, 2942, 2944, 2946, 2948, 2950, 2952, 2954, 2956, 2958, 2960, 2962, 2964, 2966, 2968, 2970, 2972, 2974, 2976, 2978, 2980, 2982, 2984, 2986, 2988, 2990, 2992, 2994, 2996, 2998, 3000, 3002, 3004, 3006, 3008, 3010, 3012, 3014, 3016, 3018, 3020, 3022, 3024, 3026, 3028, 3030, 3032, 3034, 3036, 3038, 3040, 3042, 3044, 3046, 3048, 3050, 3052, 3054, 3056, 3058, 3060, 3062, 3064, 3066, 3068, 3070, 3072, 3074, 3076, 3078, 3080, 3082, 3084, 3086, 3088, 3090, 3092, 3094, 3096, 3098, 3100, 3102, 3104, 3106, 3108, 3110, 3112, 3114, 3116, 3118, 3120, 3122, 3124, 3126, 3128, 3130, 3132, 3134, 3136, 3138, 3140, 3142, 3144, 3146, 3148, 3150, 3152, 3154, 3156, 3158, 3160, 3162, 3164, 3166, 3168, 3170, 3172, 3174, 3176, 3178, 3180, 3182, 3184, 3186, 3188, 3190, 3192, 3194, 3196, 3198, 3200, 3202, 3204, 3206, 3208, 3210, 3212, 3214, 3216, 3218, 3220, 3222, 3224, 3226, 3228, 3230, 3232, 3234, 3236, 3238, 3240, 3242, 3244, 3246, 3248, 3250, 3252, 3254, 3256, 3258, 3260, 3262, 3264, 3266, 3268, 3270, 3272, 3274, 3276, 3278, 3280, 3282, 3284, 3286, 3288, 3290, 3292, 3294, 3296, 3298, 3300, 3302, 3304, 3306, 3308, 3310, 3312, 3314, 3316, 3318, 3320, 3322, 3324, 3326, 3328, 3330, 3332, 3334, 3336, 3338, 3340, 3342, 3344, 3346, 3348, 3350, 3352, 3354, 3356, 3358, 3360, 33

101 1/2 in. So much water  
101 1/2 in. So much water

1. The first step is to identify the problem or question that needs to be answered. This involves understanding the context and the specific requirements of the task.

Secondary of the 7

... ..

## Will of God Is Eff

...is good: *Alfred*

...I, after the completion

apprehend his will two

1.20.23. The Feder W

epth. *Psal.* 36. 7. which

...

---

\_\_\_\_\_

Set. 1.

मार्ग ३

Scd. 2.

\*Rom. II.33

UMI



This will of God is first absolutely first; his will without interruption, and with delight. Also his will is the rule of Justice, therefore things are just, because he wills them: his will is simple, with one of his wills all: his will is immutable, he alters not by accidents: his will is holy, he is not carried by corrupt reasons of sin.

Our thoughts pitch on three things concerning Gods will: The first, what he will doo with us. The second, what he will doe for us: The third, what he will have us to doe: But we should mainly looke to the last, what he will have us to doe, then he will doe this with us: he will make us vessels of mercy: he will doe this for us, he will blesse us here and hereafter.

What hee will have us to doe, is revealed in the Law and the Gospell: In both he wills three things.

1. He wills us all to repent.

2. He wills us to beleve in Jesus Christ: *sw. 1. 1. 1.*

3. He wills us to lead a holy life: *sw. 1. 1. 1.*

The will of God is, that we should repent: *All. 1. 7. 34.* The word is a returning, a waxing wise, a recovering a mans selfe: Repentance is a change of the minde, a turning from sinne to God: Repentance makes a man come to himselfe: it makes a man as were another man, a new man.

The will of God is, that we should beleve in Jesus Christ: he is lifted up to save belevers: *Ioh. 3. 16. Ioh. 6. 40.* By faith we receive him, *Ioh. 1. 12.* as our Priest, to sacrifice divine justice: as our Prophee, to be taught by his word, as our King, to be subject to his government: faith beleves him the purely Saviour, the sufficient Saviour, a Saviour to me.

The will of God is, that we should live a holy life, of doing will and doing good, separating our selves from wickednesse, and wicked company: dedicating our selves to God and godlinesse: to walke circumspectly, to learne piety, devotion, heavenly mindednesse.

Nota.

Prov. 1. 23.  
Exek. 38.

Sect. 3.

This is the will of God: our holiness. *1. Pet. 1. 16.*  
*2. Cor. 7. 1.* and *1. Th. 4. 12.* **Thirdly, of Mans Will.**

**M**An is so wholly corrupted by the fall, that hee  
 understands not the things of God. *1. Cor. 2. 14.*  
 and his desires are opposite to Gods will. *1. Pet. 4. 1.* being  
 spiritually dead, how can he will spirituall things?  
*Eph. 2. 1.* God offers grace, men refuse. *Prov. 1. 15.* 16  
 that we have by nature no strength. *Rom. 7. 5.* We have  
 no sufficiency to think, which is lesse than to will.  
*2. Cor. 3. 5.*

Sect. 4.

**Fourthly, Lessons to edifie;**

**F**irst, we should labour to know Gods Will.  
 Secondly, we should endeavour to doe Gods will.

We attaine the knowledge of Gods will;

1. By getting into the estate of grace, and being  
 believers; for knowledge is a peculiar gift to such.

*1. Cor. 12. 8.* The Devil blinds unbelievers. *2. Cor.*

*4. 4.* The booke is closed to them. *Isaiah 29. 10.* or if  
 it be opened, they have not judgement. *1. Cor. 2. 14.*

2. For the desire of it; we must separate our selves,  
*Prov. 18. 1.* separate from needlesse studies, idle bookes,  
 which are not meant for children, but scraps for whelps;  
 separate from vaine company, excessive worldly busines,  
 carnall pleasures, needlesse journeyes; let spare houres and  
 vacant time be spent this way to get it.

3. We understand by bookes. *Dan. 9. 2.* Therefore  
 we should search the Scriptures. *Job. 1. 9.* there is the  
 fountaine of living knowledge; there we should labour  
 hard. *Prov. 2. 13, 4.*

4. We must frequent the faithfull ministry of the  
 word, there we shall be fed with knowledge and under-  
 standing. *Ier. 3. 15.*

5. Bec

5. Be sure prayer be not omitted. *Psal. 119. 28.* wee must cry for knowledge, and call for understanding. *Prie. 2. 2, 3.* pray earnestly for the Spirit promised. *Luk. 11. 13.* that Spirit is the Spirit of revelation. *Eph. 1. 17.*

6. We must labour to be such vessels as knowledge is put into, and get these qualifications.

1. To feare God; for his secrets are revealed to them that feare him. *Psal. 25. 14.*

2. To obey him, then we shall know. *Job. 7. 17.*

3. To give up our selves wholly to his service, and to be at his disposing; then wee shall know what is his good and acceptable will. *Rom. 12. 2.*

7. We should propound our doubts to them able to resolve us: the Disciples gained knowledge by questioning with our Saviour apart: also Expositors, Commentaries, Dictionaries are helpees, and as buckets where by we draw waters out of the Well of knowledge.

We should doe the will of God:

1. Because then we shall differ from Hypocrites, which speake that is good, but doe it not. *Matth. 23. 3.*

2. We shall be likee the Angels, which execute the will of God. *Psal. 103. 20.*

3. We shall be the children of wisdom; and differ from foles: hee that hears, and doth, is as a wise builder that built on a rocke. *Matth. 7. 24.*

4. We shall be honourable, being in affinity to Christ: those that doe his will; he accounts as his kindred. *Matth. 12. 50.*

5. We shall be under the promises.

First, temporall; *Isaiah. 1. 19.* If yee consent and obey, yee shall eat the good things of the Land.

Secondly, spirituall; The Spirit is promised to them that aske; but is given to them that obey. *Acts 5. 32.*

The eternall promise is made to the obedient, *Adae. 7. 21.* He shall enter into heaven that doth the will of God. *Romans 2. 7.* Heaven is for them that by pa-

science doe continue in well-doing.

The manner of doing Gods Will.

1. It must be done speedily : must and haste is for the great King. *Psal. 119. I made haste.*

2. It must be done sincerely, looking to Gods command, and presence, and reward. *Psal. 51. 8. God loves truth in the inward parts.*

3. It must be done constantly ; for the former part of our life yockes to the latter : If we doe leave our righteousness, it was but seeming righteousness, and wee shall perishe in wickednesse. *Ezek. 18. 24.* Again, it is an indignity to the Lord to leave his service ; and lastly, we lose the promise which is made to perseverantes, *Revel. 2. 10.*

4. Gods Will must be done cheerefully ; for we served sinne with great delight : God is the better Master, his worke and wages more honourable. Secondly, cheerefulness will evidence us to be Gods people, who are a willing people. *Psal. 110. 3.* Thirdly, God accepts the will without the worke, as in *Abraham* offering *Isaac*, but never the worke without the will. Fourthly, cheerefulness is acceptable, like ripe fruite soone shaken, pleasant to the eye and taste. Fifthly, uncheerefulness is a diabolical service, a beastly service ; we make them obey with whips, goads, and spurres. Sixthly, there is a speciall command of cheerefulness, *Deut. 16. 14.* and a fearefull threat against uncheerefulness, *Deut. 28. 47, 48.*

Fifthly, *Questions resolved.*

*Seet. 5.*

*Quest. 1.*

*Ans.*

*Quest. 2.*

**H**ath not Man free will by Nature?

He hath freedom to will by Nature : but to will well, it is of Grace.

How is the Will of God free, seeing hee cannot will that is evill?

Liberty

Liberty to evil is not from the property, but from the defect of the will.

Ans.

You said, *Lib non est Rapis, ibi non est Voluntas*: Where Reason is not, there is not Will. What say you to Rom. 8. 10. speaking of the unreasonable creature, hee saith not of his owne will?

Quest. 3.

There is will proper, which onely the creature hath that is reasonable; there is will improper, or metaphoricall, which the unreasonable creature is said to have, being *Inclinatio Naturæ*, A naturall inclination, called a Will.

Ans.

If there be a secret will of God, how doe you know it, if you doe know it, how is it secret?

Quest. 4.

We know there is a secret will, *Drus. 19. 19.* but wee know not the secrets of that will; but when it is manifested, then we know it either by revelation, or events.

Ans.

Are men to looke for immediate revelations in our times, besides, or without the Scripture?

Quest. 5.

No; the Scripture is sufficient to make the man of God perfect. *1. 2. Tim. 3. 16, 17.* If Revelations may be followed as a rule, then they may be written: for others, then comes another Bible; and new Penman.

Ans.

What motions be agreeable to the Will of God?

Quest. 6.

Those which are agreeable to the Written Word. *Isai. 59. the last verse.* 2. Those which are agreeable to our calling. 3. Those which are circumstantially good for time, and place, matter, manner, and end.

Ans.

May we expect all the revealed Will of God in so many letters and syllables expressed?

Quest. 7.

Fundamentall points are for the most part cleare; if not fully exprest by plaine Texts, yet found as to be proved by inferences, sound consequences, and sanctified reasons: The Catholike Church, Sacrament, Trinity, Christian Sunday, and the baptizing of Infantes are not proved by letters and syllables; the Preachers Doctrine

Ans.

and

and his whole Sermon may be very true, yet not in the expresse words of the Text.

Quest. 8.

May not Gods children expect to be taught by Angels, or suppose an Angell or Angels appear in some shape, or light, and speake by voyce; may it not be Gods Will manifested this way?

Answ.

We must submit to Gods Ordinance, and not expect or receive another meanes. *Dives* in hell had a devilish disposition, and hee would crosse Gods Ordinance, to leave *Moses* and the Prophets, and to have his brethren instructed by one that came from the dead. *Peter*, not an Angell, must instruct and teach *Cornelius*, *Acts* 10. *Philip*, not an Angell, must preach to the Eunuch. *Acts* 8. In former time God spake by his Prophets; in these last dayes by his Sonne, *Heb.* 1.1. All merit belongs to his Priestly Office, all Doctrine to his Prophetical Office, and all efficacy to his Kingly Office: As Prophet he taught personally in the dayes of his flesh, being among us: when he ascended on high, hee gave gifts to men, (not Angels) to the gathering of his Saints, and edifying of his body. *Ephes.* 4. And men, (not Angels) are Embassadors to reconcile us to God, *2. Cor.* 5.19, 20.

Note.

## Of the grace of God.

1. What is meant by grace.
2. How we may obtaine the sence of his grace.
3. How we may know we are in Gods favour.
4. How the sence of Gods favour is preserved.

Self. 1.

First, What is meant by grace.  
**T**HE Grace of God is either his free grace, *2. Tim.* 1.9. which was before the world, called the good pleasure



pleasure of his Will, *Ephes. 1. 5.* or the effects of his favour in our Iustification and Sanctification. *Rom. 5. 15.* 2. *Pet. 3. 18.* To have the grace and favour of God, is to be accepted. *Luke 2. 22.* *Jesus grew in favour with God,* id est, *was accepted.* *Gen. 4. 4.* *God had respect to Abel.* *Gen. 6. 8.* *Noah found grace in the eyes of the Lord,* hee had Gods favour shewed him. There is Gods grace towards us, and Gods grace in us; the first in his owne breast, the other we have by donation; the first is his grace, love, and good-will, the other the gift of his Spirit, regenerating, changing, and sanctifying; the first is the Cause; the second the Effect: Of the former I intend, Gods grace and favour to us.

Secondly, *How to attaine the fence of Gods Favour and grace.*

Seet. 2.

**W**E must know that his favour is free, *Hosea 14. 5.* *and none can give to him first.* *Rom. 11. 35.* yet we are to use means for our owne good, that wee may get some evidence to our owne soules that wee are in his favour.

1. We must have respect to knowledge.
2. We must labour for faith.
3. We must looke to our course of life and conversation.

1. That we avoide evill.
2. That we doe good.
3. That we suffer and beare the crosse.

First, we must have respect to knowledge; for the ignorant are no favorites, but rebels; *Hosea 4. 1.* and though they be Gods creatures, yet they are excluded from Gods favour, *Isai. 27. 11.* and shall feeke Gods vengeance. 2. *Thes. 1. 8.*

Ignorance is not the mother of devotion, but the mother of error, *Matth. 23. 29.* the mother of blood-shed,

T

Att:

Faith.

*Acts* 3. 17. the mother of blasphemy, persecution, and oppression, *1. Tim.* 1. 13. the mother of filthy lusts, *1. Thes.* 4. 5.

Secondly, those who are in favour with God, must be believers: *Without faith we cannot please God.* *Heb.* 11. 6. Unbelief brings Gods displeasure, and they are so farre from favour, that they are cast into the lake of fire. *Revel.* 21. 8.

Thirdly, we must looke to our course of life and conversation, in both active and passive obedience.

Evill avoided.

First, in avoiding evill; we must shunne the love and affection to sinne. God favours not, but hates them that love iniquity. *Psal.* 11. 5. Wee must also take heed that we doe not flatter our selves in sinne. *Dent.* 29. 19. Take heed of forgetting God, *Dent.* 32. 19. Take heed of all unrighteousnesse: *Rom.* 1. 18. These sinnes bring wrath, and are contrary to Gods Nature; He is a holy God: contrary to his Law, a holy Law: contrary to his Honour. *Rom.* 2. 23.

1. *Pet.* 1. 16.2. *Rom.* 7. 12.

Secondly, something must be done if we will find and feele the favour of God.

1. We must humble our selves; this way *Moses* found favour. 2. *Chron.* 33. 12, 13.

2. We must pray earnestly. *Dan.* 9. 32.

3. Be often and serious in thanksgiving. *Psal.* 69. 30.

4. Get our hearts broken. *Psal.* 51. 17.

5. We must reforme and amend our lives. *Isai.* 1. 17.

6. Doe good, and distribute. *Heb.* 13. 16.

7. Use a Mediator for favour. *Acts* 12. 20.

Thirdly, something must be suffered: Sufferings are two-fold, the sufferings for the Church, and the sufferings of the Church: The sufferings for the Church are for expiation, or confirmation; of expiation, to *Christ* only suffered, to satisfie Justice, to pacifie wrath, to purge and cleanse us from sin. *Heb.* 9. 26. Sufferings for Confirmation, were the sufferings of the Martyrs: these

chers were strengthened by their death.

Sufferings of the Church are chastisements or tryalls, these are internall or externall; internall, as Sathans buffetings, or trouble of conscience, because of transgressions, or else because of desertion: externall, are in body, or name, or goods.

To have sense of grace and favour in Martyrdome.

1. We must get assurance our persons are accepted.
2. We must looke to our calling to suffer.
3. Have a care we trust not in our selves.
4. Be sure the cause be good and warrantable.
5. Labour for fit qualifications, as patience, and boldnesse, and prayer for adversaries, hope of glory, cheerefulness, and perseverance.

In chastisements and tryalls.

1. We must not slight them, nor be Scoicall.
2. We must strive against fainting. *Heb. 12.5.*
3. We must not make desperate conclusions, *1. Sam. 27.1. Psal. 31.22.*
4. We must not use unlawfull meanes; as to goe to Witches, &c.
5. Trust not in the meanes too much with *Asa.*
6. Fret not, nor murmur, but be silent. *Psal. 39.9.*
7. Limit not Gods meanes or time to deliver. *Psalms 78.42.*

These are Negatives: Adde these affirmatives.

1. Returne to him that smites. *Isaiah 9.13.*
2. Powre out a prayer to God. *Isaiah 26.16.*
3. Be more zealous. *Revel. 3.19.*
4. Learne to pittie others. *Heb. 4.15.*

In Sathans buffetings to keepe the sense of Gods favour,

1. Pray earnestly.
2. Labour to see your insufficiency.
3. Being pricked and restless, looke on Gods sufficiency. *1. Cor. 12.7, 8, 9, 10.*

In desertions,

1. Resolve to walke by faith. *2. Cor. 5. 7.*
2. Prize favour above all things. *Psal. 63. 3.*
3. Waite patiently for the Lord. *Psal. 40. 1.*
4. Expect consolation. *Isaiah 54. 8.*
6. Resolve to cleave to God. *Iob. 13. 15.*

Sect. 3.

Thirdly, how we may know we are in the favour of God.

1. **Y**our Vocation: those he favoured before time. He calleth in time. *Rom. 8. 30.* He calls them to holinesse here, *1. Thes. 4. 7.* and glory hereafter. *2. Thes. 14.*
2. He manifesteth himselfe and his will to those he favours. *Matth. 16. 17.* He giveth them the Spirit of revelation, *Ephes. 1. 17.* whereby they perceive those mysteries which are hid from the world. *Matth. 13. 11. Iohn 15. 15.*
3. The mollifying of the heart, is a token of his favour. *Rom. 9. 18.*

Sect. 4.

Fourthly, how is the sence of Gods favour preserved?

1. **Y**our esteeme and prizing his favour.
  2. By our carriage, in regard of relation to him.
- How may I know I esteeme Gods favour, and prize it at an high rate?

Quest. 1.

Answ.

1. By the streame of your thoughts, for our thoughts runne on that we doe esteeme. *Psalms 119. 127, 128.*
2. If we oppose Gods favour against mans malice, the one swallowes the other.
3. Our esteeme appeares by our desires, *Canticles 1. 1.* We desire tokens of his love and favour.
4. We lament the losse of his favour. *Psal. 79. 10.*
5. We receive his favours humbly as of favour.
6. We desire nothing which stands not with his favor.
7. We keepe and use his blessings as favours.

8. We

## Of the grace of God.

141

8. We will not breake with him: for others favour,  
How may I obtaine this esteeme?

*Quest. 3.  
Answ.*

1. Consider the excellency of it: Gods favour is the  
happinesse of Angels: How happy was *Adam* in Para-  
dise when he enjoyed it? how happy werethe Martyrs  
that felt it? how comfortable are our lives when wee do  
taste it?

2. Consider the necessity; we cannot be strong to  
performe duties, nor patient to beare crosses without it:  
the Devils are nimble and active, potent and vigilante;  
but what good doth all this to them, they wanting Gods  
favour? it is this which adds wings unto our duties,  
and is as oyle to our soules. *Nehem. 8. 10.*

3. Consider the benefit of Gods favour; it makes us  
presently happy, and like to the angels in heaven: it  
makes us accepted; the sence of Gods favour quickens  
our spirits, enlarges our hope; hope makes us industri-  
ous, we hope for perseverance, and goe on comfortably.  
The perswasion of Gods favour, is as the great wheele  
that moves all the rest; it is so beneficiall, that it is better  
than life, exceeding life; being a peculiar, and durable, o-  
ver-topping all miseries, and bringing to all felicity; to  
our full satisfaction at last in heaven, where the beames  
of his favour will make us glorious.

Lastly, his favour is preserved by our carriage; in re-  
gard of our relations to him: we have relations to him  
divers wayes.

1. As he is a King. *Matth. 5. 35.*

2. As he is a Master. *Col. 4. 1.*

3. As he is a Husband. *Hosea 2. 19.*

4. As he is a head. *Ephes. 5. 23.*

5. As he is a husbandman. *Iohn. 15. 1.*

First, as he is a King, and we his subjects.

1. We are to rejoyce in our King. *Psal. 149. 3.*

2. To keepe his lawes, labouring to know them, and  
justify them to be good, by loving them, and obeying  
them.

T 3

3. We

2. We must fight his battailes.

4. We must keepe the Kingdome.

By yeelding to others in some cases. *1 Cor. 17. 27.*

By gentle answers. *Judges 8. 3.*

By endeavouring to be like minded. *Rom. 15. 5.*

Secondly, as he is a Master, we owe to him

1. Reverence, both inward and outward.

2. Faithfulnesse, both serving our time, using his talents for his owne advantage, and doing all his workes after his owne minde.

Thirdly, as he is a husband united to us

1. We should diligently observe his nature.

2. Humbly acknowledge his free grace that took us, who had neither beauty nor dowry.

3. Expresse duty to his commands from our love.

4. Affect him with content and satisfaction.

5. Labour to imitate him as we are capable.

6. Endeavour to be cheerefull with him and before him.

Fourthly, as he is a head, and we members:

1. To acknowledge both life and wisdom is from him.

2. Follow his directions, let the head be guide.

3. Confirme to his death and resurrection.

4. Harne not, but love the poorest member.

Fifthly, as he is a husbandman:

1. Take heede of barrennesse.

2. Labour to abound in fruit. *John 15. 8.*

3. Let your fruit be seasonable. *Psal. 134.*

4. Let your fruit be lasting. *Psal. 92. 14.*



## Of Glory.

1. *What Glory is.*
2. *Of the glory of the creatures.*
3. *Of the glory of the Creator.*
4. *Questions resolved.*

First, *What Glory is.*

Sect. 1.

**G**lory is excellency, dignity, honour, splendor; as the Crowne on the head, as the light to the world: we may see it by contraries and comparisons.

1. By contraries: so darkness is opposed to glory, for light is glorious: Weakness is contrary to glory, it is strength is glorious and honourable: Also shame and death are contrary to glory, but nothing more than sinne, for that deprives of glory, of endowments and excellencies, which we had originally. *Rom. 9. 23.* or thus we are by sinne deprived of the glory of Communion with God, of acceptance, and by desert deprived of the glory of heaven: sinne brings on us that which is contrary to glory; as weakness, sickness, shame, death, and darkness.

2. We perceive glory by degrees: there is the glory of the Morning, the glory of the Moone, the glory of the Sunne: The Starres differ in glory, men differ in dignity and glory. So much what glory is.

Secondly, *Of the glory of Creatures.*

Sect. 2.

**W**e may consider the creatures, either celestiall or terrestriall: the celestiall are the Angels, or the heayens; the heayens either invisible or visible, and elementary.

mentary, as is above our heads with their ornaments.

1. Of the glory of Angels: the Lord is the God of glory, *Mat. 7.1.* and these doe stand as his holie court about him, and the rays of his glory shiues on them, and makes them exceeding glorious: These Angels have fixe wings, with two wings they cover their faces, not able to behold Gods glory; with two they cover their feete, so that we that are mortallie cannot behold their glory; with the other two wings they flye with a glorious swiftnesse. They are said twofold have foure heads, and the one is as a man, for they are most honorable for wisdomes; the other as a Bull, for they are glorious for strength; the third is as an Eagle, for they have a glorious expedition and celerity in their messages; the fourth head is as a Lyon, for they have a glorious courage.

2. Of the glory of the invisible heavens: It strips our conceits, capacities, and inventions. Tis the Court of the glorious God: compared to a City whose gates are pearles: whose walls precious stones; the streets gold: the inhabitants are Kings, there is the glory of Gods presence: all is light and day, and no darknesse nor night: tis the kingdome of glory, there are Crownes of glory laid up for vessels of mercy prepared for glory.

3. Of the glory of the visible heavens: the heavens have the prebeminence, and are the most excellently the waters excell the earth, the aire excels the water, and the heavens for largenesse, clearenesse, purenesse, excell all under them: and have this honor to declare the glory of God, *Psal. 19.1.*

4. The ornaments of heaven are glorious: the sunne is glorious in magnitude, brightnesse, swiftnesse, efficacy, and operation: enlightning and heating the aire: quickning the waters: quickning the earth, and making it full the earth, with trees, herbes, and plants, &c.

The Moone hath her glory, though it be borrowed, and her excellency appears in the darke, when we must need her light: in the Cancell her firenesse is commended; and shee is one of the glorious workers of God.

1. Cor. 15.

The Starres have glory differing one from another: and adorne the heavens with their bespangled brightness, like a curious embroidered Canopy: glorious to our eyes.

The Earth hath the glory of stability, riches, and variety: among all that are taken out of it, man is a glorious piece of workmanship, whose foundation was in the hill: young mens glory is their strength, and the glory of the aged is the gray-head, Princes have their glory, and great men according to their dignity; but sinning men none have the glory and honor like to the regenerate man: he is honorable by faith, *Iohn 1. 12.* and is glorious within, they are changed from glory to glory, *2. Cor. 3.* they have a glorious head, *1. Sam. 2. 1.* a glorious guard, *Heb. 1.* salver, glorious food, Gods ordinance: glorious apparell, Christs righteousness; they are called the glory, *Isai. 4. 5.* the spirit of glory rests on them, *1. Pet. 4.* they are heires of glory.

The Sea hath his glory, for largenesse, and terrible-nesse, and strength: carrying the mighty ships: there sports the great Leviathan, and there are fishes innumerable: The sea hath his proud waves of great height and quantity, yet is honorable for this, that it keeps within his bounds at the Creators command.

### Thirdly, Of the glory of the Creator.

Soll. 3.

**H**is glory is essential, he is clothed with Majesty and glory, *Ps. 104. 1.* so glorious is the Lord that the very angels cover their faces before him: The Father is called the God of glory, *Mat. 7. 1.* if the whole Trinity be there

there more, the Father is not excluded; Christ is called our glorious Lord Jesus Christ, *1. Cor. 2. 8.* The holy Ghost is called the spirit of glory, *1. Pet. 4. 14.* all the glory in the creatures is but as a drop compared with the Ocean; he had glory before there was a world, *Job. 17. 9.* and all creatures can adde nothing to his glory, for it is not capable of addition; he doth manifest his glory to the creatures, and we give him glory by taking notice of his excellency, and rendering praises and acknowledging that is in him already.

Sett. 4.

Quest. 1.

Ans.

Quest.

Ans.

Fourthly, *Questions resolved.*

**W** Herin doe men most usually glory? In wisdom, strength, riches, *1. Pet. 2. 3.*

Why doe men glory in their wisdom?

1. Their wisdom and knowledge puffes them up, *1. Cor. 8. 1.* *cognitio inflat*: knowledge makes them swolne and filled with winde, they looke on their bulke and bignesse, and doe forget they want the substance of faith and love.

2. They thinke by their wisdoms to doe great matters, to suppress those they would not have rise, *Ecc. 1. 10.*

3. When they effect their enterprises, and get into favour, or prevaile against those they hate, that they applaud their wits like those that sacrifice to their nets, *Habbak. 1. 16.*

Quest. 3.

Ans.

Why doe men glory in their strength?

1. Because they compare themselves with those are weake and feeble.

2. They overmaster others and command them, and glory in that strength and power which subdued them.

3. They thinke to prevent and withstand those which dare oppose them.

Quest. 4.

Why doe men glory in their riches.

1. Be-

1. Because of the supposed good they think riches can procure them: as friends, places of preferment, costly buildings, dainty fare, many attendants and servants, and to become as the great men of the earth.

2. Because of the supposed evil they think riches will free them from, *Prov. 23. 5. 7.* therefore in their riches in their imagination is as a strong City and a high wall to shelter them.

3. They have thoughts of the perpetuity of their riches to their posterity, *Psal. 49.* desiring to assure them to their children, children.

4. Because they see others run to them, stand with cap and knee before them, runne and got at their beck, afraid to displease them, these causes make them glory in riches.

What is it to glory in God?

It is to have an inward joy manifested by outward expressions, *Psal. 33. 24.* to the word signifies, and *Psal. 34. 2.* my soule shall glory in the Lord, *1. Cor. 13. 31.* That he that glorieth, may glory in the Lord; we must not arrogate to ourselves, but all to God: he is wisdom to our understanding, righteousness to justify us, sanctification to renew us, and redemption to our bodies and soules.

1. God is our wisdom to teach us knowledge, and give us light, *2. Cor. 4. 6.*

2. God is our strength, *Psal. 33. 27.*

3. God is our riches and our portion, *Psal. 119. 57.* therefore we should glory in him.

What is vaine glory?

It is when a man seekes his owne glory, as the end hee aims at, *Iohn 7. 18.* He that speaketh of himselfe, seeketh his owne glory. *Prov. 25. 27.* To seeke diligently our owne glory is no glory; glory and honour may be enjoyed, but we must not seeke it carnally from men, then it is vaine; if wee seeke it, then it must be in the se-

Ans.

Quest. 5.

Ans.

Latetur.

Quest. 6.

Ans.

\*Perseverant.

cond place moderately, orderly, else it is vaine, a fruit of the flesh, and it is sought from vaine men: it is most uncertaine, and gives no sound satisfaction being vaine.

*Quest. 7.  
Answ.*

What is the right way to seeke glory?  
1. To abase our selves, then we shall be exalted and honoured. *1. Pet. 5. 6.*

*Quest. 8.  
Answ.*

2. To grow stronger in faith. *John 1. 12.*  
3. To practise good workes. *Math. 5. 16. Acts 10. 4.*  
What kinde of workes doe glorifie God?

*Quest. 9.  
Answ.*

1. To repent and turne from sinne. *Revel. 16. 9.*  
2. To give to the poore. *Prov. 3. 9.*  
3. To sanctifie the Sabbath. *Isaiah 58. 13.*  
4. To praise the Lord. *Psalm 50. last verse.*  
How may we know wee doe seeke the glory of God?

1. Though our selves be commended, wee are displeased if we see not honour redound to the Lord.  
2. We are content to lose that God may gaine honor.  
3. Though our outward contentments faile, yet wee will seeke Gods glory, and serve him.

## Of the Lord of Hosts.

1. What is meant by Hosts.
2. Why God is called The Lord of Hosts.
3. Which are his Hosts.
4. Questions resolved.
5. Applications to edification.

*Sec. 1.*

First, what is meant by Hosts.  
The word is a Military word: many Souldiers make an Host: *Sabaoth* is an army, and the army being



being well ordered; is not onely *exercitus* an Hoast; but also *ornatus*; it is an ornament; when the Souldiers keep their ranke, there is a comlinefle: so then an Hoast is an ordered multitude fit for imployment.

Secondly, *Why God is called, The Lord of Hosts.*

Sc. 2.

**H**E is so called because he is the soveraign Lord over all: the Creatures are in beautifull order at his command. *Gen. 2. 1.* He finished heaven and earth with all their Hosts, and they continue to this day, and are his servants. *Psal. 119. 91.*

Thirdly, *which are his Hosts.*

Sc. 3.

**I**n generall all creatures; God is the great generall, and all creatures are his hosts to execute his will.

*Gen. 2. 1.*

2. In particular, Angels are his hoast: *Gen. 32. 2.* The Angels met *Jacob*, and he said, *This is Gods Hoast.* *Psal. 103. 21.* *Blesse the Lord all ye his Hosts.* *1 Kings 22. 19.* *The Hosts of heaven stand round about the Lord:* These are *exercitus Caelorum*, heavenly Souldiers.

3. The Sun, Moone, and Starres are his Hoast. *Deut. 4. 19.* Herein *Manasses* transgressed. *2 King. 21. 3.* This is Gods Hoast to serve us, we are not to serve them.

4. Men are his Hoast: *Exod. 12. 41.* The same day departed the armies of the Lord from the Land of *Egypt*, the same day, in the body of the day, openly: for God had said to *Moses* and *Aaron*; *Bring out the sons of Israel according to their armies.* *Numb. 33. 3.* *Exod. 6. 26.* *1. Sam. 17. 45.* *Goliath* railed against the hoast of the living God.

5. The unreasonable creatures are his hoast, as Frogs, Lice. *Exod. 8.* So Caterpillars, and Cankar-wormes, Grasshoppers, &c. are his hoast.

Sect. 4.

Fourthly, *Questions resolved.*

Quest. 1.

Answ.

**W**Hich is the chiefe host of God? The Angels, these are his royall host; one of them in a night slew 185 000 men. *1. Kings 19. 35.* Wisdome and strength are for the warre: and these soldiers are admirable for wisdom, *2. Sam. 14. 20.* and excellent for strength. *Psal. 103. 20.* God hath of these two myriades: twice ten thousand. *Psal. 68. 17.* Twice tennethousand thousands, *Dan. 7. 10.* For number they are numberlesse. *Heb. 12. 22.*

Quest. 2.

Answ.

God is said to be the God of peace: *Heb. 13. 20. Rom. 16. 20.* how is he then the Lord of hosts?

He is the God of peace to his Church, yet the Lord of hosts for his Church. A Prince may be at peace with his owne subjects, yet at warre with his and their enemies: Hee is the Lord of Hosts, yet with us, *Psalme 46. 7.*

Quest. 3.

Answ.

Is warre lawfull, or no?

Yea, it is lawfull; for God directs them concerning warre: *Deut. 20.* and approved a Stratagem of warre. *Iosuah 8. 4, 5, 6.* compared with *verse 18.* Abraham rescued Lot by warre; and the Judges of *Israel* saved the people often by warre: God is stiled a man of war. *Exod. 15. 3.* *Iohn Baptist* taught souldiers to cast away their violence, not their weapons: there are the Lords battells, *1. Sam. 18. 17.* therefore warre is lawfull.

Quest. 4.

Answ.

How came warres first into the world?

By the fall of *Adam* corruption came into our hearts, and from mens lusts came warres. *Gen. 4. 1.* *Caine* was the first builder of Cities: *Gen. 4. 17.* and no doubt the wicked would not onely defend themselves, but offend the godly; and the godly must labour to defend themselves from *Nimrod* and his fellow hunters: and after the flood the sword was put into the hand of the Magistrate

Magistrate

strate to shed the blood of the murderer: and as he must looke to the Fold within, so he must looke to the Wolfe without, and as a nursing father, preserve his people from forraigne invasion. We ghesse thus warres begunne.

What is required of us as we are Christian Soultiers?

1. That we put on the whole armour of God.
2. That we prepare to be assaulted.
3. That we turne not our backs on Sathan; for there is no armour for the backe.
4. We should be courageous; it is for the Lord, and for our salvation that we fight for.

How must I fight with my enemies?

With the flesh and the world I must fight flying. *2.Tim. 2.22.* Flye the lusts of youth, *2.Pet. 1.4.* flye the corruptions of the world: but with Sathan I must fight with resistance: *James 4. 7. 1.Pet. 5.8.* with both enemies I must fight praying. *Ephes. 6.18.*

What may I learne from this, that a Christian is a soldier?

1. That our whole life is a warfare.
2. Idle and delicate persons are no good Christians.
3. We should not be entangled in our affections with earthly contentments.
4. He that flyes at scoffes and reproaches will never fight to blood.
5. Ignorant persons are untrained, and unfit for service.
6. We must walke in our places and keepe ranke and order.
7. We must labour for unity, for united forces are strong.
8. We must follow our leader and great Captaine, Iesus Christ.

Fifthly,

*Quest. 5.  
Answ.*

*Quest. 6.  
Answ.*

*Quest. 7.  
Answ.*

Self. 5.

Fifthly, Applications to edifie.

1. **T**His shewes the Sovereignty and Majesty of the Lord of Hosts, who excels as head over all; all Creatures in heaven and earth are subject unto him.

This Lord of Hosts differs from all other generalls.

1. They command a few, he commands all.

2. They command onely men and beasts, as horses and elephants: he commands windes and seas, thunder, and tempest; yea the diuels.

3. They command a little time; he for ever.

4. They cannot preserve an host made to their hand: he makes his host and keeps them.

5. They command for him; he is independant.

6. They often command unjustly; he alwaies justly.

2. Miserable is the condition of all naturall men which are not reconciled to the Lord of Hosts: hee the sovereigne Lord is against them, they may feare he will send one of his host to punish them: they may feare the fire will destroy them, the water drowne them, a beast goare them, their meate choake them, the tile-stone kill them, the iron weapon slay them, and all creatures warre against them.

3. We should admire his wisdom that orders the multitudes of his armies, and causes them to keepe their appoynted places, and imployes them for their severall uses.

4. There shall be deliverance on mount Zyon, for the Lord of hosts is with them, they shall not alwaies lie under the oppressor.

5. We are to bow and bend our hearts and soules to this high and absolute Lord: his infinite greatnesse and sovereignty requires a sutable subjection and submission.

6. We should seeke to him who is the Lord of hosts, to goe with the armies into the field, that hee will be

with

with them, and make them wise in counsaile, and valorous for his cause; that he would crowne them with victory, and spread his owne praises; by using instruments to suppress the pride of the enemies, and by spreading his Gospell.

7. Let us in all the victories we heare of, that are for the Churches welfare, give God all the honour and glory that we are able, by looking beyond the instruments to the Lord of hosts, that employes them. The horse may be prepared for the battaile, but salvation is of the Lord; therefore to him let us bow, and worship, and acknowledge his right hand, and say, the Lord hath triumphed valiantly, to him let us sing, it is the Lord of Hosts to whom we should give the glory and the praise, as we have a patterne, *Exod. 15. Judges. 5.*

8. Here is comfort against Principallities and powers, the mighty enemies of our soules, the Lord of Hosts is with us, mighty to save, through him we shall doe valiantly.

## How God is made an Idoll.

1. What an Idoll is.
2. How men make God an Idoll.
3. Their punishment that make God an Idoll.
4. Questions resolved.

First, what an Idoll is.

Set. I.

**A**N Idoll is an unlawfull representation of a false God; an Idoll is a resemblance, figure, or shape: the making of an Idoll of a false, or Image of the true God.

Deut. 4. 25.  
Vol. 40.

God: neither shaven, carved or painted, is unlawfull, for no man ever saw his shape, if it be so made as to imitate God, is condemned, *Exod. 32. 8.* and God was displeased, *1. Cor. 10. 5.*

Self. 2.

Secondly, *How men doe make God an Idoll.*

**T**It is impossible to turne the essence of God to an Idoll, but men are said to make God an Idoll in imagination, and in conversation; in imagination, that conceive of God to be like an Idoll, that thinke God will doe neither good nor evill: that God sees not, *Zeph. 1. 12.* *Psalm 99. 7.* they could conceive no otherwise of an Idoll.

*How men make God an Idoll in his worship.*

1. When they prepare not their hearts, nor fit their affections for his presence; they could doe no otherwaies, were they to come before an Idoll that could take no notice of their hearts.

2. When all their religion is in the Temple, there they leave their God: if they served an Idoll in the Temple he could not see their behaviour in their houses, nor have they communion with him at home; then men carry themselves as if God were an Idoll, only setled within the walls of the Temple. This is indeed the principall, but not the sole place of Gods worship.

3. When men invent wayes to worship God and follow their owne devices and imaginations, they make God like an Idoll which cannot direct his worshippers, but they will teach him how he must be served; they could doe no more to an Idoll.

*In conversation men make God an Idoll.*

1. When they say it is in vaine to serve God, and to walke honestly before him: that thinke God will not reward his servants, they could thinke or say no more of an Idoll, which receives all and gives nothing.

2. When



# How God is made an Idoll.

155

3. When men commit horrible sins in secret, were God an Idoll they could doe no more, as if he would never call them to a reckoning.
3. That opposes the godly and persecutes them were God an Idoll then they might trouble his servants without feare or danger.
4. When men scrape together abundance of wealth by wicked meanes, then on their sickbed they thinke by some dead workes to satisfie for all; as if God were an Idoll that for a few scraps of that is evilly gotten, would be dumbe for ever.
5. When men forswear themselves and call God to witnesse to a lye: were he an Idoll that could see their abomination, nor be revenged, they could doe no more against him.

Thirdly, Their punishments that doe thus make God an Idoll.

Soll. 3.

1. GOD hath a base esteeme of them, 1. Jan. 3. 30. Those which despise him shall be despised, they shall find him no Idoll but a living God, when they fall into his hands, Heb. 10. and a strong God when he see their sins in order before them, Psal. 50.
2. They thinke he sees not; he punishes them with blindness, Isai. 6. so they have eyes and see not, they come to his worship with no more preparation, then to some before an Idoll, and goe away with no more blessing then if they had bin before an Idoll.
3. They will bring in humane inventions into his worship, and prescribe rules out of their owne braine; he rejects all their services, and makes them lose all their cost and paines, and tells them their worship is vaine, Isai. 3. Isai. 66. Mat. 23.
4. They sitne freely as if he were an Idoll; God lets them alone, shewes the minis in their sights, so they being

*Nota.*

being let alone; doe live most abominably, and fill up the measure of their sins; and heape up wrath. thus God abhors them, and gives them over to spirituall judgements; he accepts not their services, he reserves wrath for them, and reserves them for wrath; this is their punishment, it is most bitter.

*Sect. 4.*

*Fourthly, Questions resolved.*

*Quest. 1.  
Answ.*

**H**ow is it said an Idoll is nothing? It is nothing in comparison of a God, it is something for matter and formes; it is nothing for divinity. it is nothing that is spoken in contempt; it is an empty foolish vaine fiction, it is good for nothing.

*Quest. 2.  
Answ.*

Where did idolatry first begin? It is likely from the brood of *Cain* it did first arise; *Cain* he left the true God and his service, and it is probable he would worship somewhat.

*Quest. 3.  
Answ.*

Why did the Jewes so often fall to idolatry. 1. *Man's nature is very prone to that sinne;* therefore God gave the second commandment to restrain us.

2. They being mingled with the heathen, learned their wiles, and were inticed by their example.

3. Sometimes their Princes were idolaters; then they turned for feare.

4. The idolaters had glorious deckings of their Images, this did move the carnall to be wonne.

5. The zeale of idolaters to cut their flesh, and burne their children, was powerfull to allure them.

*Quest. 4.  
Answ.*

What is the best prevention of idolatry?

1. To be truly informed of the nature of God, that we may give to him divine worship; and not to them which by nature are no Gods. *Gal. 4. 8.* Ignorance is the mother of idolatry not devotion.

2. Consider Gods law, negative and affirmative; negative, hee forbids all divine adoration to be given to

*Crea-*



1. To performe spirituall duties only from a naturall carnall heart.
2. To give only an eternall worship.
3. To performe the duty with deadnesse, coldnesse, and lumpishnesse.

### How to conceive of God when we pray

1. What it is to conceive.
2. How we must not conceive of God.
3. How we may rightly conceive of him.
4. Questions resolved.
5. Applications to edifie.

Sect. 1.

**F**irst, *What it is to conceive.*  
 The word signifies a gathering things together: to conceive is to apprehend, conceptions they have communion: By the way we may observe, unless Gods Spirit be with our spirit, our conceptions will prove but fantasies or monsters: The foundation of the right conceiving of God must be by a better spirit than our owne, and by better light than nature affords us. To conceive is to apprehend, to stoyle in our minds, and to conclude to understand, & in some measure to know.

Sect. 2.

*Secondly, How we must not conceive of God.*

1. **V**e must not conceive him out of the Trinity of persons, as the *Turks* doe.
2. We must not conceive of him after any bodily shape, as the *Antient Egyptians* did.
3. Nor conceive of him that up in the Circle of Heavens as some kind of *Atheists* doe.
4. Nor a God all made of silver as some ignorant persons doe.

1. Nor all of justice as some defending passion doe.
6. Nor as a God regards more what is done here below, as some doe that deny his providence, *Barth.*
7. Nor as a forgetfull God, *Psal. 103.*
8. Nor must we conceive of a multitude of Gods as some heathen did.
9. Nor of a superiority or inferiority in the Trinity, in respect of essence or time.
10. Nor must we conceive of God, as of a thing we can comprehend in the limiting of our thoughts or imaginations.

Thirdly, *How we may rightly conceive of God.* *Sect. 3.*

1. **W**E must endeavour to conceive of him, as an infinite essence in Trinity of persons.
2. We must conceive of him in his attributes, as absolute, incomprehensible, eternal, immutable, invisible, omnipotent, &c.
3. We must conceive of him as a God that will become unto, through a carnal nature; in himselfe he is a consuming fire, *Heb. 12.* In through Christ we have access, *Heb. 10. 19.*
4. We must conceive of him as good, gracious, loving, mercifull a God hearing prayer, *Psal. 65. 2.* delighting in prayer, *Prov. 15. 3.*

Fourthly, *Questions resolved.*

**H**OW can we conceive of him who is invisible?  
We conceive of our own souls, that they are and have being, yet we see them not; we conceive of God in his perfection, yet a little portion we know of him, and see him as *Moses*, *Heb. 11.*

How can we conceive of him who is incomprehensible?

We conceive him to be, as he hath revealed him-

*Sect. 4.*

*Quest. 1.*

*Ans.*

*Quest. 2.*

*Ans.*

*Gift.*

Quest. 3.

May we not conceive of him in some shape?

Quest. 4.

Ans.

Quest. 5.

Ans.

Quest. 6.

Ans.

Quest. 7.

Ans.

Selfe: we conceive of him with admiration, adoration, subjection, divine reverence, &c.

God hath appeared to the eyes of men in some shapes, and representations, *Ezek. 1. Dan. 7.*

He appeared to the capacity of his servants, yet forbids adoration to any shape. *Deut. 4.*

Christ saith, the Father is greater than hee: and Saint Paul saith, God is Christs head: is there not superiority in the Trinity?

It is spoken in regard of Christs humanity, else hee and the father are one.

Did the Fathers in the old Law know there was a Trinity?

They did: *Isaiah* writes of Trinity, *Isaiah 61. 1.* and *David Psal. 33. 6.* The learned *Rabbins* speak of it.

What false gods have men conceived of to worship and serve?

Some have worshipped and made gods of the host of heaven, *2 Kings 21. 3.* The *Persians* worshipped the Sunne, the *Syrians* worshipped *Asheroth*, the *Philistines* *Dagon*, the *Moabites* *Chemosh*, the *Amonites* *Moloch*, the *Egyptians* *Ausse*, the *Babylonians* an Idol named *Bel*, the *Athenians* *Appollo*, *Carthage* worshipped *Juno*, the *Ephesians* *Diana*, the *Maures* the governours of their Countrey, the *Papists* the Virgine *Mary*, the *Indians* (it is said) doe worship the divell: all men doe worship something.

How comes there such a mistake in the world?

1. Man naturally is in darknesse, and stumbles at stocks and stones.

2. Man naturally is foolish, and beguiled with pictures and bables, and Images.

3. Man naturally is sensuall, and desires first to see then to worship.



Fifthly, *Applications to edification.*

Self. 5.

1. **T**His shewes it is hard to conceive aught of God when we doe pray.

2. There must of necessity be some competent measure of knowledge in a true Worshipper.

3. Let us alwayes minde Christ our blessed mediator when we come to pray.

4. We should come with all reverence we can into the Lord, and labour in our prayers to conceive of him, as he hath revealed himselfe.

5. So let us conceive of God that we move towards him, and desire after him: Prayer is a compound of heavenly graces; if ever we apprehend Gods favour in any manner, if ever we have a taste of Spirit, or the light of Gods countenance, or strong assurance, it is in prayer.

Of the workes of God.

Six reasons why we should meditate on the workes of God.

1. **B**ecause his workes doe shew forth his power, *Rom. 1. 20.* and his glory. *Psalme 19. 1.* By steppes we ascend from the creature to the Creator, and so gaine knowledge of him.

2. It is a duty to search out the workes of God, and cheerefulness is required in the duty. *Psalme 137. 2.*

3. Because Gods children should differ from wicked men, who regard not the workes of the Lord. *Isa. 5. 12.*

4. There is danger of ruine and destruction, if men regard not Gods workes. *Psalme 138. 6.*

5. Examples goe before us of the godly: these have medita-

meditated of Gods majesty, and of Gods workes: as in the booke of *Iob* at large, and *David* *Psal.* 145. 5. This is a true signe and mark of a wise man: *Psal.* 92. there it is negatively set down, an unwise man will not consider, and tis affirmatively set downe, *Psal.* 107. 43. *who do wise, he will observe these things.*

6. God hath made his workes for this end, that we should behold them. *Isaiah* 40. 26. and have them in remembrance. *Psal.* 111. 4. Thus we shall be able to ex-  
 ale God in our hearts, and declare his workes to others; so God will be glorified, others edified, our souls much delighted, and a weighty duty discharged, and God will recompense us with revelling his loving kindeesse to us. *Psal.* 107. 43.

## Of the worke of Creation.

1. Who created all things.
2. Whereof all things are made.
3. The time when they were made.
4. For what end all things were made.

*Self.* 1.

First, who made all things.

**T**he maker of all things is God: it is his prerogative to create. *Gen.* 1. 1. God made heaven and earth. *Col.* 1. 16. his workes are visible and invisible.

1. Creation is a worke of the whole Trinity.

2. All was made by the power of his word.

3. In wisdom all was made.

First, creation is a worke of the Trinity: as appeared.

1. The Father created. *Ephes.* 3. 9. who created all things by Jesus Christ.

2. The

3. The Sonne created. *Colos. 1. 16. Heb. 1. 10.*

3. The Holy Ghost created. *Iob. 26. 13. Iob. 33. 4.*

Secondly, all was made by his word: Gods word is either, first substantiall, or secondly written; or thirdly, operative: Though God made all by his substantiall word, yet this is not meant, when he saith, let there bee this, or that, for the operative word was in time; the substantiall word was eternall: the word was a willing things to bee, not a founding of syllables: so that without coylnesse, with great facility God created all things: he spake the word and it was done.

3. In wisdom all was made. *Psal. 104. 24. Prov. 3. 19. (Prov. 3. 19. sapientia fundavit terram, & sicut carlos intelligitur. Psal. 104. 24. non est in terra creatura quae non sit in sapientia.)*

1. God makes the creatures without sence: these are superior: as the light, the firmament, and ornaments of heaven: as Sonne, Moone, and Starres: or inferior, as the seas, earth, trees, and plants.

2. He makes the sensitive creatures, as beasts, fishes, and fowles; then the reasonable creatures, man and woman: Some creatures have matter and forme and generation, as men: some no generation, as the heavens, and sunne, &c. some have distinct formes without matter, as Angels: some are bodies without immortall spirits, as beasts: some are immortall spirits without bodies, as Angels: Some are immortall spirits and bodies, as men.

1. Let me lift up mine eyes, and behold who hath made

all these things. (1) and bringeth out their armies by number, and calleth them by their names: then shall I see his eternall power and god-head by his visible works. (2) and let me cast my thoughts on the sea, where goe the great ships (3) and are creatures innumerable: there is the great *Leviathan* which spotteth himselfe in the waters, which God hath kept in with banks by his decree: (4) let me look on thine earth hanging in the aire (5)

A desire of  
1. Contem-  
plation.

(1) *Isai. 40. 29*

(2) *Rom. 1. 20*

(3) *PL Ro 4. 26*

(4) *Iob 38. 11*

(5) *Iob 36. 7*

- (f) Ifai. 66. 1. the foot-stool of my Creator, (f) and then break out to admiration and say: *Ps. 104. 24* 2. Admiratiō. 2. O Lord how wonderfull are thy workes in wisdom: *Ps. 104. 24* (g) when I behold the heavens, the workes of thy hands, the moone, and the starres, (h) then I thinke thou hast got thee an excellent name, and renowne in all the world: and for my owne part, I give glory to thee: and acknowledge none is like to thee, none can doe thy workes. *Ps. 86. 8.*
- (b) Psal. 8. 3. 3. Supplicatiō. 3. O Lord my Creator, enable me to remember thee now in my youth, before the evill day doth come; (i) with such a remembrance, as to turne to thee; (k) and doe thou remember me with the favour of thy people: (l) thy hands have made me, and fashioned me: oh give me understanding: (m) and thou which first didst create me, doe thou now make me: grant that I may be a new creature: (n) Create in me a new heart, (o) and renew me in the spirit of my minde, (p) that I may serve thee with gladnesse and cheerefulnesse, for thou hast made us, and not we our selves: (q) I am thine by creation: oh make me thine by redemption and grace.
- (i) Eccl. 12. 1. 4. Gratulatiō. 4. Fill my heart, with thy praises; that thy noble workes being in my eyes: thy high acts may be in my mouth, and I may often say: thou art worthy to receive honour, and glory, and power, for thou hast created all things: (r) let me ever bee resolute to praise thee: as for the workes of creation in the generall; so for forming my selfe in particular: (s) thou hast clothed me with skinn and fleshy and united my bones and sinewes: (t) I praise thee for my being, for my well-being: O let me praise thee in an everlasting well-being.
- (r) Rev. 4. 11. 5. Resignatiō. 5. Thou hast made me, and give a living soule within me, and set me on the earth to live; and breathe a short time: and then thou wilt bring me to death: the holie of all the living: (u) dust I am, and so dust I must returne: (w) so thou hast ordained all must dye, (x) because
- (s) Psal. 139. 14. *Ps. 139. 14.*  
(t) Iob 10. 11. *Iob 10. 11.*  
(u) Iob 30. 23. *Iob 30. 23.*  
(w) Gen. 3. 19. *Gen. 3. 19.*  
(x) Heb. 9. 27. *Heb. 9. 27.*

cause all have sinned: (7) grant that all my dayes I may waite till this change come, (8) and so become wise to consider my latter end: (9) wherefore I die, or howsoever, grant I may in much assurance commit my soule into thy hands, as into the hands of a faithfull Creator, (6)

(7) Rom. 9. 12  
(8) Job 14. 14  
(9) Deut 32. 29  
(6) 1. Pet 4. 19

Secondly, *Whereof God made all things.*

Self. 2.

**H**E made all things of nothing: to create, is to produce something out of nothing, to worke without materials, *Heb. 11. 3.* the things we see, were not made of things which did appeare.

Reflections.

1. Had I bene trained up onely in morall Philosophy, I had learned that of nothing comes nothing: Indeed it is so in mans worke: but in my Bible I learne that of nothing come all things, it is so in Gods worke.

I desire  
1. Faith.

2. What cause have I to feare and reverence this great Creator: I my selfe once was nothing, now have life, and being, and substance: oh cause me to repent, and to prize thy (ayour) or else I shall be at last worsethen nothing.

2. Reverence.

3. How easie is it for God to helpe his Church: he can worke without materials if he wills the good of his people, no adverse power can hinder him.

3. Dependance

4 In me is nothing that is good; Lord create in me that may make me acceptable in thy sight; which may be to me a pledge of thy love.

4. Regeneration.

Thirdly, *The time when all things were made.*

Self. 3.

They were made in the beginning, *Gen. 1. 1.* there is a first, eternisly, secondly, time, thirdly, beginning is the entrance of time; fourthly, there is end, fifthly, there

is everlasting, being indeed eternitie; againe, eternitie is before and after time; time we doe live in; beginning brings forth time, end consummates time, everlasting swallowes up time.

## Reflections.

## 1. Discerning.

1. I see the difference of the Creator and the creatures, none is eternal but God: he had no beginning, nor shall have ending, *Psalm. 90. 2.* he is from everlasting to everlasting.

## 2. Consideration.

2. Once there was no time, and an end will come, and time shall be no more, *Revel. 10. 6.* In this my day cause me O Lord to consider the things belong to my peace: on this moment depends eternitie, cause me wel to spend my space of time, and to take advantage of the opportunities of time; that doing thy will in this world, I may in the next world be eternally happy.

## 3. Preparation.

3. My beginning of time, was my birth; my measure of time, is my life, my end of time, is my death; my account for time, is my judgement: Oh that my waies were direct and straight, that the midst might agree with both ends; I was borne humble and meeke, and so I must dye: So let me live, O Lord, remembering the shortnesse, swiftnesse, precousnesse, and irrecoverablenesse of time: that is past, is gone; that to come, is uncertaine; time present is mine, which I desire so to spend, that it may appeare I had grace and time together.

## Fourthly.

## Fourthly, for what all things were made.

**T**He blessed God made all things for his owne sake: *Prov. 16. 4.* He made them not because hee needed them; he was essentially happy without them; nor doe the Creatures adde to his glory, onely wee acknowledge that is in God already: the end God aimed at in the creation, was to make him selfe knowne to the creatures, and that the Creatures should acknowledge him, and give him glory.



# Of the worke of Creation.

167

## Reflections.

1. What could have I to seeke his glory as my utmost end? by such meanes as his word teacheth mee. Cause me oh Lord to confesse my sinnes, and so to give glory unto thee; to turne from sinne, that I may repent and give glory unto thee: oh worke faith in my heart, and let me be strengthened therein, that I may give glory to thee; and let my light be sinne before men, that they may be stirred up to glorifie thee: grant that I may honour thee by sanctifying thy Sabbath, and by being fruitfull in grace: let my praises glorifie thee, and my wealth, and my death; if I bee called to suffer for thy truth.

1. Seeke the glory of God.

2. Of all sinnes, to take heede of pride and vaine glory: glory belongs to God, to us shame and confusion: God will not give his glory to another, if man doe take it, it will bee his destruction. Lord purge out all pride and false seeking out of my heart, and whatsoever I doe let me labour to give thee all the honour and glory I am able.

2. Beware of Pride.

3. God aimed at his glory in the first place, in his worke: I am to aime at my glory in the last place, in all my workes: First, Gods glory must be my aime, next, I must minde my duty, and lastly, my glory, my reward: when I beginne, I must looke to the glory of God; when I worke I must looke to the rule; if I faint, or be discouraged, or indisposed, I may looke to the joy before me: the glory prepared for us being the recompence of reward. So much in generall.

3. How to aime at glory.

Heb. 12. 2.

OF

## Of Angels.

1. Of their Nature.
2. Of their number.
3. Of their office.
4. Divers errors concerning the Angels.
5. Why Christ is called an Angel.

## First, of the Nature of Angels.

**N**ATURE is the quality, and disposition, and motion which God variously giveth to the creatures: to the heavens a firmnesse, to the sunne a brightnesse, to the water moytnesse: the stone descends, the fire ascends: men have reason, and Angels have swift motion: all by nature: the Toad is poysonous, the Serpent is wise: the Dove is meeke, all by nature. The Nature of Angels is spirituall, incorporeall, *Luke. 24. 39.* without flesh and bones.

**They are** spirituall, incorporeall, without flesh and bones.

1. Substances.
2. Excellent, being Spirits.
3. Invisible, being Spirits.

1. They are substances, though we cannot make dimensions to measure their length and breadth, yet wee learne they are spirituall natures, reall substances, having a true being a distinct essence.

2. They are excellent natures, excellent for holines, (a) excellent for beauty, (b) excellent for strength, (c) excellent for wisdom, (d) excellent for swiftnesse: being said to have wings, to declare their swift motion, celerity & expedition. (e)

(a) Mark. 8. 38

(b) A. 3. 6. 15

(c) Pl. 103. 10

(d) 2 Sam. 14.

17.

(e) Iai 6. 2.

Thirdly, they are invisible; their matter and nature is so pure, that our sense is not able to discern; if an Angel were before our eyes in the brightest light, with the best advantage we could not see him. For a corporeall view cannot apprehend a spirituall object of such an excellent nature.

### Reflections.

If the nature of Angels be so excellent; what is the Nature of the Lord of Angels?

Note.

1. To admire Gods nature.

1. His Nature is uncreat; theirs is an excellent, but created Nature.

2. His nature is independant; the Angels nature is by participation.

3. Gods nature is his essence; and eternall; theirs is begun, once they had no being.

4. Gods nature is every where at once; theirs is by local mutation and limitation.

5. Gods nature is Omnipotent; Angels can doe much, but they cannot doe all things.

Secondly, let me look to Christ; and there see my advantage; he hath advanced our humane nature, uniting it to the God-head; so that those Spirits and holy natures are content to be Ministers for the good of the members of Christ. Our flesh is carried up on high; and now Christ, which is both God and Man, all the Angels of God doe worship him.

2. To look to Christ.

Thirdly, I am informed by the Word of God concerning my behaviour towards the Angels, both by a negative and an affirmative rule.

3. Information.

1. Negatively, I must not worship them; for it is forbidden. *Colos. 2.18. Rev. 19.10.*

2. I am not to make Angels my Mediators; for there is one God, and one Mediator, which is Christ; by him we are to offer our sacrifices. *1. Pet. 2.5.*

3. Not am I bound to put my trust and confidence

in Angels; nor to depend on any particular Angel for my Angel-guardian.

4. Nor am I to busie my head about the *Hierarchie* of Angels, concerning their degrees and orders.

5. Nor am I to looke for audible voyces from Angels, nor visible apparitions, least I fall to phantasies and delusions; preachers, not those Angels are our instructors.

Affirmatively,

1. I am bound to beleve: the Angels are excellent creatures, of excellent natures.

2. That they are holy, pure, and perfect.

3. That they willingly doe service to the heires of salvation. *Heb. 1.* last verse.

4. We are to pray for the protection of Angels, and in thanksgiving to praise God for them.

We should be like the Angels.

1. To rejoyce at the conversion of sinners. *Luke 15.*

2. To reverence the divine Majesty like the Angels, who cover their faces before him. *Isa. 6. 2.*

3. To stand ready prest to execute the will of the Lord, as the Angels doe. *Psal. 103. 20, 21.*

4. To execute the will of God for the manner as the Angels doe; with cheerefulness, with sincerity, without weariness.

Fourthly, here I gaine comfort in respect of the Angels, five waies.

1. In respect of the Angels readinesse: they doe stand before the face of God, ready to receive a commission to take vengeance on the enemies of the Church, or to doe some service for the heires of grace from which number I exclude not my selfe.

2. I have comfort in respect of solitarinesse: as when like *Jacob* I am alone, then the blessed Angels are with me: *Jacob* had the presence of Angels, being without humane company: Faith is the evidence of things not seene: my comfort is, I beleve this, though I see it not with my bodily eyes.

3. Com-

4. Consolation  
in Angels  
readinesse.

3. Comfort in respect of my owne weaknesse ; the Angels are supporters, and as nurseries to uphold me, and keepe me from dangers.

4. Comfort in respect of contempt ; if worldlings contemne me, yet God honours me ; and the Angels guard me, and I can oppose them, and despise their contempt with dishonour.

5. Comfort, though evill spirits of the worst nature doe maligne me, yet the good Angels which are of the best nature, are with me, and for me.

Secondly, of their number.

Self. 2.

**T**He Host of Angels is exceeding many : twice ten thousand, or two myriads : *Psal. 68. 18.* they cannot be numbred, because they are innumerable. *Heb. 12.*

1. The glory of God is in the multitude of his heavenly host : this requires my admiration.

Applications.  
1 Admiration

2. Innumerable are with us, though the like for number be against us : this requires consolation.

2 Consolation

3. When I go hence, I shall have abundance of society with these innumerable Angels : this calls for my expectation.

3 Expectation.

Thirdly, of the office of Angels.

Self. 3.

**T**Heir Office is to stand before God, and to execute his will. *Psal. 103.*

1. The Angels are employed in praising of God, *Isai. 63. Psalme 103. 21.*

2. The Angels are employed about man-kinde, in the way of punishment, or doing good.

First, in the way of punishment to wicked men.

1. To blinde them that they cannot see. *Gen. 19. 11.*

2. To stop them that they cannot goe. *Numb. 22. 26.*

3. To slay them that they cannot live. *1 King. 19. 15.*

*Mat. 12.*

Z 2

Second-

Secondly, the Angels, doe good to the godly.

1. They defend from dangers. *Psal. 34. 8.*
2. They comfort in troubles. *Luke 22. 23.*
3. They encourage in duties. *2. King. 1. 15.*
4. They reveale hidden mysteries. *Daniel 9. 22;*  
*13. 24.*
5. They carry their soules to heaven. *Luke 16. 22.*

#### Reflexions.

1. If *Solomon's* servants were happy that stood before *Solomon*? How happy are the Angels that doe stand before God? that I have by faith, they have by vision: they have both height and delight; the height of honour, as the great Kings servants, and are full of delight and satisfaction in his presence, where is fullnesse of joy and pleasures for evermore. *Psalme 16. 15.*

2. I will not disdain to doe service to the poorest and lowest Christian: The Angels are ministring Spirits to heires of salvation. *Hebrewes* the first; and the last verse: It is unlawfull to worship Angels, but here in it is good to imitate them.

3. In my service for God I must not seeke my owne glory: the Angel would not suffer Saint *John* to worship him, but bids him worshipping God. *Revelations 22. 9.* God will not give his glory to another, *Isai. 42. 8.* nor should Angels or men take it from him, but say, not to us Lord, not to us, but to thy name give the praise. *Psal. 115. 1.*

#### Self. 4.

#### Fourthly, divers errors concerning Angels.

1. Some held there were no Angels at all.
2. Some tell the *Hierarchy* and orders of Angels, so fall to errors and fancies, not having their ground from the Scriptures.
3. Some held Angels were to bee worshipped:

*Calif.*



*Colossians 2.18. confuted Revelations 22.9. See thou doe is not, &c.*

4. It is said the *Indians* paint the Angels blacke, because themselves be so; but they be Angels of light.

5. Some make them their mediators to pray for them: confuted 1. *Tim. 2.3. There is one God, and one mediator, the man Christ Iesus.*

Fifthly, how Christ is called Angel. *Mal. 3.1.*

*Self. 5.*

1. Angels are near God: Christ is nearer being God.

2. Angels are beloved: Christ is more beloved.

3. Angels are glorious: Christ is more glorious.

4. Angels give glory to God: so doth Christ. *Ioh. 7.18.*

5. Angels have appeared in humane shape: so hath Christ.

6. Angels have brought us comfort: so hath Christ.

7. Angels are called servants: so is Christ. *2. Thim. 4.1.*

8. Angels are the lonnes of God: *Ioh. 1.1.* so is Christ.

9. Angels have freed us from enemies: 2. *King. 5.* so hath Christ. *Luke 1.*


10. Angels are beautifull, *Ps. 103.6* last verse: so is the Lord Christ. *Ps. 145.*

11. Angels are very happy: so is Christ blessed for ever. *Rom. 9.*

12. Angels love the elect, and guard them: Christ loved the elect, and dyed for them.

23

Of



## Of the Heavens.

1. *The divers waies heaven is taken for.*
2. *Of the clearenesse of the heavens.*
3. *Of the height of the Heavens.*
4. *Of the largenesse of the heavens.*
5. *Of the firmnesse of the heavens.*
6. *Of the motion of the heavens.*
7. *Of the heavens dissolution or reintegration.*

*Seet. 1.*

*First, of the divers waies heaven is taken for.*

**T**he airy region we breath in, is called heaven, & the things which live in the aire, are said to be of heaven: the Clouds of heaven, (a) the windes of heaven, (b) the Fowles of heaven. (c)

(a) Dan. 7. 14

(b) Dan. 7. 2.

(c) Mat. 13. 32

2. The elementary heavens, where the Sunne, and Moone, and Starres are. *Gen. 1. 17.*

3. The Imperiall heavens, where the Angels are, *Mat. 6. 9.* called the third heaven. *2. Cor. 12. 2.*

4. The visible Church. *Matth. 25. 1. Rev. 12. 7.*

5. God himselfe. *Luke 15. 31. Luke 20. 4. Dan. 4. 26.*

6. A great height is called heaven. *Deut. 1. 28.*

### Reflexions.

The first heaven I breath in, the second heaven I looke upon, the third I doe beleve. In the first heaven are birds and clouds; in the second, the Sunne Moone and starres; in the third, are Angels and Saints. The first heaven is for my sustentation, I live, and breath in it: the second is for my contemplation, I see, and admire it: the third

is for my expectation, I strive and waite for it.

In the visible Church I begin my Heaven, in communion with God I have a Heaven below: in the height of glory I looke for a Heaven above. First, let me be heavenly ey'd, to read; secondly, heavenly minded, to contemplate; thirdly, heavenly changed, to beleeve, to convert, to be renewed.

Secondly, *Of the clearenesse of the Heavens.*

Señ. 2.

**I**T is the elementary Heavens I now thinke upon; they are for clearenesse and purity compared to molten glasse: Job 37. 18. And the blewnesse of them to our view, is because of the farre distance betwene the eye and the object.

Reflexions.

1. If Heaven be so pure that we see, how pure are the invisible Heavens, that is a pure place, called Gods holy habitation?

Deut. 26. 19.

2. Gods dwelling is pure: He will not abide in a full soule, nor with a profane heart. I must be purged, cleansed, and humbled, if I will have God with me. Ps. 57. 15.

3. If Heaven be so pure, then God himselfe is a pure and holy God. 1. John 3. 3.

4. A pure conscience, a cleane heart, a sanctified soule is a kind of Heaven on earth. When I looke towards Heaven, and consider the purenesse of the Elements, let me desire to be pure; it is heavenly, and excellent: A legall purity I can never obtaine here, an Evangelicall purity I must endeavour after, to be cleansed from my guiltinesse by Christs blood, and from my filthinesse by his Spirit.

Thindly,

Sect. 3.

Thirdly, *Of the height of the Heavens.*

**H** Heaven is the Throne of God, *Matth. 5. 34.* and Thrones are on high; *Solomon* had staires to ascend to his Throne; because he sat as Judge above the people: *1. King. 10. 18, 19.* So Gods Throne is on high: *The Heaven is high above the earth, Psal. 103. 11.* as the large circumference to the little Center: the distance is very great, men may ghesse it, but not certainly conclude how farre it is.

Reflexions.

1. Feare.

1. What cause have I to feare the Lord? for as farre as Heaven is above the earth, so large is his mercy to them that feare him: *Psal. 107. 11.* This should enlarge my endeavour after the feare of the Lord.

2. Circumspection.

2. God sees all our actions here below; for hee dwelleth in the high Heavens, and from thence beholds us. *Psal. 33. 14.*

3. Heavenly mindedness.

3. Though the visible Heavens be high, yet our humane flesh is carried higher. *Heb. 4. 14. & 9. 24.* Christ is ascended farre above all Heavens. *Ephes. 4. 10.* There I hope to come, there I desire my heart may be often. *Colos. 3. 1.*

Sect. 4.

Fourthly, *Of the largeness of the Heavens.*

**T**HE Heavens for their largeness are said to be spread out. *Iob 37. 18. Psal. 104. 2. 1. 13.* The largeness may be demonstrated three ways.

1. By a visible apparition; for wee can see on our Horizon but halfe of the Heavens. In the Moneth of *March*, when the Sunner riseth at 6. and sets at 6. wee then may make a tryall.

2. By an Astronomickall relation, or Geometrickall collection, the Earth is large, yet it is but as the Center to the Heavens circumference.

3. By

3. By a divine conclusion, Heaven is the dwelling of the great God, and the receptacle of the Saints. *Psalm 113.*

4. *Iohn 14. 2.* Therefore the visible Heavens bee large, though not so large as the invisible.

Reflexions.

1. God is a great God; great Princes are knowne by their great Palaces: so I know God is a great God by his dwelling place.

2. I perceive a progresse from little to great; from the little wombe of my Mother, to this great world the habitation of mortals. I trust I am going from this little Terrene Globe to the large Heavens, the habitation of Angels.

3. Though the Heavens are large, yet they cannot containe God. *1. Kings 8. 27.* God comprehends all, and is incomprehensible himselve.

4. I may be straitned, and put in prison on earth; but when I leave earth, I shall come to a large place above the large visible Heavens, called for largenesse a Kingdome. *Luke 12. 32.*

Fifthly, Of the firmnesse of the Heavens.

Self. 5.

They are called Firmament for stability: *Psalm 119. 1.* Our bodies are generated and soone corrupted, but the Heavens continue to this day. *Psalm 119. 90, 91.*

Reflexions.

1. These Heavens we see continue a long time; but the Heaven I hope for, continues without alteration to eternity. A Kingdome it is that cannot be shaken. *Heb. 12. 28.*

2. Gods Worke is excellent; being out spread, and firme. If a Brazier or Gold-smith stretch out his metall, it loses firmnesse, and growes to weaknesse. Gods workes are admirable.

3. Heaven is firme, but the Word is more firme.





lasting: we have matter and forme, generation and corruption; the heavenly spheres have matter and forme of long duration but not for ever; whether they shall be annihilated or redentigrated; whether brought to nothing or refined ~~in the~~ <sup>in the</sup> earth, as monuments of Gods eternall power and wisdom: I am ignorant of it, and leave it to them more wise to judge.

## Reflections.

1. Oh with what detestation should I thinke of sin; It is sin hath ~~ruined this great fabricke~~ and will bring a dissolution.

2. There is ~~nothing~~ <sup>nothing</sup> will stand me ~~instead~~ and is of great consequence ~~in this world~~ when all my silver and gold is melted, and the world burned; that is holiness which now I must prize at a high rate, and pray and labour for it, 2. Pet. 3. 11.

3. If heaven must be dissolved that is so firme, then my fraile weak body will soon come to a dissolution: I am earth and must returne to the earth; my time is short. I am like to the Ice which ~~will~~ <sup>is</sup> and shall be water againe.

4. O that my affections were above these perishing heavens, had I a lease of ~~land~~ <sup>land</sup> as long as the heavens endure at last my lease would expire, and the heavens faile: let me O Lord ~~incline~~ <sup>incline</sup> ~~thine~~ <sup>thine</sup> ~~heart~~ <sup>heart</sup> in my eternall state, and affect things most durable.

5. I perceive the excellency of God beyond all created nature, the heavens and old age ~~are~~ <sup>are</sup> ~~not~~ <sup>not</sup> ~~to~~ <sup>to</sup> ~~be~~ <sup>be</sup> ~~changed~~ <sup>changed</sup>. ~~Psalm 102. 28~~ <sup>Psalm 102. 28</sup> ~~but thou Lord art the same~~ <sup>but thou Lord art the same</sup> ~~and thy name shall be praised~~ <sup>and thy name shall be praised</sup> ~~for ever~~ <sup>for ever</sup> ~~Mat. 3. 9~~ <sup>Mat. 3. 9</sup> ~~and to 17~~ <sup>and to 17</sup> ~~to much of the~~ <sup>to much of the</sup> ~~heavens~~ <sup>heavens</sup>.

## Of the Sunne.

The Sunne is the chiefe of the Planets, the fountaine of light, the mirth of the world, the measure of time.

1. *The Sunne is great and large.*

2. *The Sunne is swift in motion.*

3. *Of his exceeding brightness.*

4. *Of his order of the Sunne.*

5. *Consider his operation.*

6. *His eclipses.*

Self. 1.

Some hold the Sunne is 166 times bigger than the Earth: Some say he is greater, some lesser, but God saith in his word; *He is a great light.* Gen. 1. 16.

**Reflections.**  
1. If ever I should be great in the world, yet I am not excluded from doing service, if I will be taught by the Sunne, who serves little creatures, though himselfe be great.

2. This Sunne is great, and of a burning light, yet is considered, that he heates us, but not consumes us; which were he there as he would doe: for in some places he burneth more than a furnace: *Ecclesiasticus 43. 3.*

3. Great is the Lord that made the Sunne. *Ecclesiasticus 43. 5.* The glory of God appears in his works.

Secondly,

Secondly, *the Sunne is swift in motion.*

**S**O swift, that he runnes his race. *Psal. 19. 5.* No arrow, *Self. 2.*  
 nor bullet flies so swiftly, for intwenty foure houres  
 he runnes round the celestially globe: the earth as many  
 thousand miles about; then what are the heavens?

1. I admire Gods wiledome to make a creature so  
 exceeding large, and yet so swift in motion.

2. If the Sunne that is visible and materiall bee so *Considerations*  
 swift? what are those invisible immateriall swift winged  
 Seraphims?

3. Though the Sunne be swift in motion, yet he doth  
 good wheresoever he comes; to teach me, so to dispatch  
 my affaires in such haste, that I be usefull and profitable;  
 so may I, like the Sunne, bee good and swift both at  
 once.

Thirdly, *of the brightnesse of the Sunne.*

**I**T is so bright and shining, that our eyes cannot en-  
 dure it; it communicates light, and it sends the beams *Self. 3.*  
 downewards: whereas the fire flames upward: light and  
 brightnesse makes one stone more precious than ano-  
 ther, and a starre to excell a stone, and the Sun excels  
 them all.

Reflexions.

1. Let me looke higher than the Sunne, so that blessed  
 God who gives light to the Sunne: oh father of lights,  
 send thy light into my darke soule, and turne me from  
 darknesse to light, that I may walke as a childe of  
 light.

2. I am bound to communicate to others, according to  
 that I have received: I learne this of the Sunne, who be-  
 nefits others with his light.

3. If I can obtaine righteousnesse imputative and in-  
 herent, I shall shine as the Sunne in the kingdome of  
 God.

Aa 3

Fourthly,

Sect. 4.

Fourthly, of the order of the Sunne.

**T**He Sunne keeps order, and moves in his appointed place, from the end of the heavens, to the end of the same. *Psal. 19.* Astronomers say he moves in the Zodiac, called the twelve signes, keeping this order.

1. Apparently, in open view of the world.
2. Constantly, without standing, or going backe, unlesse God bid him: as *Ios. 10. 12. & 20. 11.*
3. Profitably, for true distinctions of time, and powerfull influence on the creatures here below.

Reflexions.

1. My Religion teacheth me to be like the Sunne, to traile in my owne circle; to understand my owne way, *Prov. 14. 8.* to meddle with my owne business. *1. Thes. 4. 11.*

2. I may urge my selfe by consideration of the comeliness of order, and the benefit of it. A bricke out of the wall, makes the place deformed, and more weak: Cities, and Countries, and families, and ships, and armies, are preserved by order.

3. I may from the Scripture learne to keepe a constant order; as to awake with God in the morning, to send up my praises before him. *Psal. 59. 16.* to speake graciously, *Eph. 4. 6.* to frequent godly society, *Psalm 16. 3.* To appaurell my selfe as becomes religion, *1 Tim. 2. 10.* to be just in my dealing, *Mith. 6. 8.* to be mercifull, *Colos. 3. 12.* to instruct my family. *Gen. 18.* Thus from yeare to yeare to keepe in my circle apparently, constantly, profitably: others will rejoyce in this order, and approve it.

Sect. 5.

Fifthly, the operation of the Sunne.

**I**T workes in the heavens, in the aire, in the earth, and in water.

In the heavens it conveighes light to all the inferiour Heavens,  
Orbes : as the Moone and Satres.

It heates the aire which is cold of it selfe, and enlightens  
it which is darke of it selfe.

It exhales vapors from the water, which the windes do  
carry; so it falls in raine or haile, or snow upon the earth.

It causes hearbes, and trees, and men, and beasts to  
grow and live on the earth.

A Reflexion.

I must reflect on my selfe, and stirre up my selfe to be  
operative.

1. Towards God, by confidence, reverence, and prayer.

2. Towards the Scriptures, by attending them, rea-  
ding them, hearing them preached, by loving the word,  
rejoycing in it and subjeeting to it.

3. To the Godly I must be operative; by acknow-  
ledging them, joyning with them, delighting in them,  
praying for them, relieving, comforting, and edifying of  
them.

4. To the world I must be operative; by the with-  
drawing my affections, by the bearing of reproaches; and  
flying the corruptions thereof.

5. To Sathan I must be operative; by watchfulnesse,  
faith, prayer, diligence, and resistance.

6. To friends I must be operative, by gratitude, loving-  
nesse keeping their secrets.

7. To enemies I must be operative; by forgivenessse,  
love, compassion, well-wishing.

8. To superiours, by reverence, faithfulnessse, obedience.

9. To inferiours; by example, kindnesse, and Counsaile.

Oh that I could give light to some, heate to others,  
draw some upwards; and be a means to provoke to  
fruitfulnessse and growth, that I may in some measure be  
operative: Doe thou O blessed Lord, worke powerfull-  
ly upon me by the operation of thy blessed Spirit.

Sixthly,

Sect. 6.

Sixthly, Of the Eclips of the Sunne.

1. **T**he Eclips is foreknowne.
2. There is a cause of the Eclips.
3. It is but a short time.
4. How men doe looke upon it.

Conclusions.

First, the Eclips is foreknowne for the time, the horizon, the continuance.

1. There is an order in the course of nature, else it could not be foretold.

2. There is a lawfull Astronomy, differing from a conjecturall Astrologie, which is but a busie vanity.

3. The foretelling of the Eclips is usuall, and not so wonderfull as the simple would make it; it is yeerely knowne, and by many Foxe told.

Conclusions.

Secondly, the cause of the Eclips is the interposition of the Moone betweene the Sunne and the Earth.

1. As the Moone hinders for a time the light of the Sunne, so inferiour things Eclips our joy, and hinder grace, though for the present they are sensible objects, and have a kind of luster and beauty on them.

2. If those we shew favours unto shall at any time disparage us: remember the Sunne is Eclipsed by the Moone, notwithstanding all her light is from it received.

3. Let me learne to recompence injuries with favours: the Moone darkens the Sunne: but the Sunne conveys light to the Moone, and makes it bright and glorious.

Conclusions.

Thirdly, the Eclips is but a short time.

1. We perceive blessings best by their want: how welcome is the light unto us after we have beene a little deprived of it.

2. How good is God in giving so excellent a Creature as the Sunne, and keeping the use of him from us

not



not every day nor weeke, and never but a short time.

3. The darknesse at the death of Christ was not an ordinary Eclipse from the sixth houre to the ninth: from 12. to 3. of the clocke, *Mat. 27. 45.* The Sunne was then long hid.

1. As ashamed of their great wickednesse.

2. Or darkned because the Sunne of righteousness was Eclipsed.

3. Or to shew the darkenesse was to come on the Jewes, this Eclipse was more then ordinary.

Fourthly, how men doe looke on the Eclipse.

We looke on it not so much with an eye ascending as descending, by a basin or pot of water men use to looke upon it.

1. As the beholding what is done above, is to looke in another Element beneath: so I am not to looke up into Gods secret counsell for my predestination: but descended into my heart whether it be regenerated and changed, as men looke on the dyall, not the Sunne, to know the time of the day.

2. When the Sunne is bright shining, men take no especiall notice; but in the Eclipse, they then are prying, and observing, consulting, and talking: so is it with a Christian, if by mutable accidents he be Eclipsed of his excellency for a time, then the cause is pryed into, and he is most spoken of.

3. I looke in water below to see what is done in heaven above: I looke to my baptisme with water, and there see my remission by that which water signifies, which is the blood of Christ: I looke downe there is mans baptisme, I looke up there is Gods baptisme, I see below what is done above.

4. The pot of water which gives me a demonstration, can give me a cleansing: so the same word that gives me light and discerning, can give me a cleansing & refreshing.

Conclusions.



3. Supernaturall is the light of grace, when God shines into our hearts giving us saving knowledge, 1. Cor. 4.6. this inward light hath outward manifestation by godly actions, which are called light that shines among men, Mat. 5. 16.

4. The light of glory is the state of glorified soules in heaven; there the Saints are said to be in light, Col. 1. 12.

Secondly, *What the Light was, which was before the Sunne.*

Self. 2.

**T**He learned have divers opinions of it; one thinks it was a spirituall light, another thinks it was the Element of fire, a third thinks it was a bright cloud, another that it was a dispersed light put after into the Sunne, another thinks it was a great light which could not bee belied now whole, but after dispersed.

A light it was, but how it moved, how it was placed, the scriptures are silent; we may be too curious to search, and take great paines to lose our labour.

Seeing the light is from the Sunne, how could there be three dayes before the Sunne?

Quest. 1.

First, there is a primary cause of the light, and an instrumentall, the primary cause is God, he can give light to the day without the instrument.

Ans.

Secondly, we must distinguish betweene the creation and the gubernation of the world: in the first creation God made a light to divide the day and the night, in the gubernation of the world the Sunne doth give the light.

What is the benefit of naturall light?

Quest. 2.

First, it discovers things in their formes, dimensions, and colours.

Ans.

Secondly, it cheares and comforts the creatures here below.

Theeves doe hate the light, and those which have fore eyes doe shunne it, and Owles and Bats doe hide themselves from it.

Theeves doe hate the light, not simply, but accidentally, because it discovers their evill deeds; and fore eyes are weake, and cannot behold that they rejoyce in: the Owles and Bats are night birds, and though they shun the day-light, yet they like the moone-light.

Thirdly, light is for action, wee worke in the light: in the darke we are unfit for action, and like the *Egyptians* sit still.

*Object.*

Some workes are done in the darke, as thefts, murders, and adulteries.

*Ans.*

The workes of darknesse are the baser workes, the excellent workes are done in the light.

*Quest. 4.*

What is the benefit of the vicissitude of light and darknesse; and the change of the day and night.

*Ans.*

1. The night makes the day more pleasant to us when it comes. 2. The night drawes men to a constant resting, both they and their servants. 3. The wild beasts by night seeke their prey. 4. By this meanes time is measured.

*Conclusions.*

1. God is the cause of causes: Hee is not tyed to secondary meanes: he can give light without the Sunne.

2. God makes a separation betweene light and darknes, sometimes they meet, but alwayes do strive to separate: so should the sonnes of light separate from Infidels and Idolaters: true Professours ought to be Separatists, not to separate from publicke assemblies in the reformed Churches, but from the corrupt society of those who walke in darknes.

3. God is the most excellent transcendent light. First, other light was made, but he is uncreate. 2. This light gives way to darknes, God is not capable of any Eclipse. 3. This light is common to all, but God is enjoyed of a

peer

peculiar people. 4. This light discovers outward things, but God discovers inward secret things.

4. Christians should walk as the children of the light; with the children of light. For them,

*First, as children of the Light.*

1. Take heed of sleeping in security: sleeping is for the darke and for the night. 2. Take heed of stumbling in grosse sinnes and errors, because we have received light, sleeping and stumbling are for the darke. 3. As the children of the light we should, first labour to distinguish betweene good and euill, truth and falshood; because we have the light. Secondly, to be chearefull and comfortable: tis the light breedeth comfort. 3. To be diligene and industrious: when the light comes, men awake and stir and are active. 4. Let our light shine before others, let us not be like those which carry it in a darke-lan-thorne: our light should direct others, and heate them, and discover the truth to them, and reioyce them, and quicken them.

*Secondly, we should walke with the children of light.*

1. With them to seporate from Idolaters, Hereticks, and prophane men.

2. Joyne with the children of the light, delight in them, and seeke their good alwaies: say of them, as Ruth to Naomy: Thy God shall be my God; where thou dyest I will dye.

3. Walke in their way, though they be few, though they be despised, desire to share with them here and hereafter:

*Thirdly, we should walke for the children of the light.*

1. If we have any authority or power, let it be exercised for their good.

2. If we have any gifts of learning, knowledge, or memory, or courage, or prayer, use all for their edification and encouragement, direction, safety, and comfort.

3. As we are able, let us hinder all accusations against them

them, and remove all false imputations laid upon them.

4. Let us so order our lives and carriage towards all, that they may not be disgraced because of us, or upbraided by our faults.

5. If we have wealth, let us relieve and succour them, and refresh them in an especiall manner; because they be children of light.

6. We should be of like affection towards them in all their troubles, to be troubled for them; in all their comforts to rejoyce with them; humbling our selves for their miseries, praising God for their prosperity, then are we for them indeed.

7. If we be called, we should suffer for them: there are sufferings of expiation, to Christ onely suffered; his sufferings are satisfactory, and are meritorious to take away sinne: our sufferings are for confirmation of the truth, and for the good of the Church; for the people of God we must endure, not onely words, but blowes, yea death it selfe, that our example may confirme the truth and manifest the power of religion, and holy love. So much of the light.

## Of the Moone.

Of the Moone consider these five things.

1. *Of her brightness.*

2. *Her borrowed light.*

3. *Her blemishes.*

4. *Her mutation.*

5. *Her gubernation.*

Self. 1.

First, *of the brightness of the Moone.*

**F**or brightness, shee is called light; Gen. 1. 16. and is said to be faire, Cant. 6. 9. and is often mentioned



with the Sunne, *Gen. 37. 19. Deut. 4. 19. 1. King. 23. 5.*  
and is said to walke in her brightnesse. *Job 31. 26.*

This brightnesse may be considered foure waies.

1. It is an inferior brightnesse.
2. It is a brightnesse usefull and seasonable.
3. It discovers onely grosse things.
4. The nearer the Sunne, the darker to the earth.

First, it is an inferior brightnesse.

The Sunne is the greater, the Moone is the lesser light.

*Gen. 1. 16. Cant. 6. 9.*

Five considerations from this inferiority.

1. First, there are degrees of light, so there are degrees of Grace: at first conversion we are as the morning-light, partly darke, and partly light. *Psalm 113. 9.* thus we are light as the morning: then we proceed to bee faire, as the moone. *Cant. 6. 9.* Thus wee goe from strength to strength, *Psalm 84. 8.* by degrees we are strengthened in faith. *Rom. 4. 10.* and doe grow in grace, *1. Pet. 2. 18.* daily increasing more and more. *2. Pet. 3. 18.* At last wee come from grace to glory, to the spirits of just men made perfect, *Heb. 12. 24.* then shall wee shine as the Sunne in the kingdome of our Father. *Mat. 13. 43.*

2. Secondly, inferiority is not an annihilation: the Moone is a light, though inferior to the Sunne: I must not confesse my selfe to be no Christian, because I am of an inferior rank; a man may be a free-man, yet not an Alderman; a Soldier, yet not a Captaine; the foote is of the body, though not so honourable as the hand. I desire to be thankfull for the gifts bestowed on me, and to be contented with my owne condition, and with modesty to looke on them; excell me in striving against envy and discouragement.

3. Thirdly, inferiours doe make their superiours to appeare more honourable: the light of the Sun is the more glorious being compared with the moone: The people compared with *Saul*, made his tallness and height to ap-

peare

peare more obvious, The spies were as grasshoppers before the sonnes of *Anak*: my littlenesse doth honour my superiour greatnesse, my government of my family honors the Kings government of whole Realmes: my teaching of my family honors my preacher, that teaches a whole congregation: Thus honoring my superiours in judgement and practice, they will shine on me with protection and doctrine, and my littlenesse makes their greatnesse appeare, and I give them honour for conscience sake.

4.

Fourthly, Inferiour things are not to be despised, the Moone though an inferiour light is not despised: but of men desired, some are little ones, but must not be despised, *Malch. 18.* men may have inferiour gifts yet honest hearts; I must love them for their sincerity, and not despise them for their inferiority. *Benaiah* was honorable though he attained not to the first three, *1 Sam. 23. 23.* I desire to honour all Christians, and not to despise the least of them, and so to reverence great ones which doe beare Gods Image, that I may not despise little ones as though they had none of his Image.

5.

Fifthly, there is variety in Gods workes, inferiour and superiour argues variety, and variety argues wisdom. There is variety of parts in my selfe, there is variety of faculties and members in me: In heaven, earth, and seas, there is variety, to fill me with delight, to raile me to meditation, to teach me to admire and say, O Lord how wonderfull are thy workes, in wisdom he hath made them all.

2. The brightnesse of the Moone is usefull and seasonable.

Things are beautifull in their season, water to the thirst, and the Moone in the night, I may learne from the Moone to be usefull, seasonably, and to take the opportunities offered me to doe good in them: to give and forgive, to beare and forbear, to speake and to be silent,

lent, seasonably, makes me like a tree planted by the rivers of water that brings forth his fruit in due season.

Thirdly, the Moone discovers onely grosse things.

The estate of nature is as the Moone-light, the estate of grace is as the Sunne-light: of wicked men it may be said: *Nescierunt neque intellexerunt*, they know not, nor understand, but of the godly we may say, Blessed are your eyes, for you see, *Mat. 13. 16*. The Moone light discovers houses, trees, and beasts. The light of the Sun discovers in his beames the smallest moates.

*Psalm 82. 5.*

### 3. Considerations from hence.

1. I must labour to get out of a naturall condition, and I must pray for that blessed spirit of God which doth convince, that seeing my misery, I may relish the mercy of God, O how sweet is mercy to a selfe condemning broken hearted sinner.

2. By this I know God hath given me a better light then my owne, which I have by nature; I once thought that if I obtained from grosse sinnes; (made knowne to me) as blasphemy, murther, adultery, theft, &c. it was a great matter, but being farther convinced, I see idle thoughts and idle words to be offensive evils, I see that omissions of good duties is dangerous, and am troubled not onely for my ill disposition, but for my indisposition, want of zeale for God, want of sorrow for other mens sinnes, not shunning the occasions of sinne, it disquiets me since the Sunne of righteousness hath appeared on my horizon.

3. Those which cannot see trees, nor houses, nor mountaines, have not so much as Moone light, sometimes it is so darke in the aire, that men cannot see their hand held up before them. Some men want the light of grace, and of nature, and reason, these men are darknesse *Ephes. 5. 8.* and walke in darknesse, *Iob. 8. 12.* and their wages is (*in Tenebras exteriores*) it utter darkenesse,

from the estate of darknesse, the worke of darknesse, and the wages of darknesse, O Lord deliver my soule.

Fourthly, the nearer the Moone is to the Sunne, it is darker to the earth.

Exod. 25.5.

The Moone being nearer, the Sunne is the brighter above, but darker beneath: So the nearer my soule is to God, the more it is bright upward, and of a heavenly disposition: God shining on mee my glory is reall, though invisible to others: my light and life being with God, men may looke on me, as one not to bee defired without forme or beauty: so they looked on my Saviour; *Isai. 53. 2.* to some he was veiled, yet to some hee was revealed: So it is with Christians, the world sees their infirmities and afflictions, but there is a bright side they see not; there is a curious Arkie, though covered with Badgers skinnies: the world sees the blacke side, but not the best side; they cannot see invisible things, till they have obtained faith. Let me bee light to God, though dark to the world: when God shines on me, then am I bright upward, and then I resemble his light as the drop doth the Ocean.

The Moone more remote from the Sunne, is bright downeward; so the lesse portion of grace, and the more remote from God, the more welcome to the world: It is my Lord *Esaü*, though prophane; and *Agrippa*, and *Bernier* are seene with great Pompe, *Abfolom* and his foote-men, *Belsatzar* and his Captaines, and Concupines, *Herod* and his royall apparrell have terrene glory; yet these are remote from the Sunne of righteousness. Oh that I could neglect that splendor is had, with a neglect of communion with God: Let mee never bee so shining toward the earth, that I may bee dark to wards heaven: Let me not flatter for favour, nor feare contempt; but let me draw neare to God; that he drawing neare to me, the raies of his light shining on me, shall make me both honourable and satisfied.

Secondly,

Secondly, of the Moones borrowed light.

Sol. 1.

1. **T**he light of the Moone is received.
2. The light of the Moone is communicated.
3. The Sunne lending his light hath not the lesse.

First, it is a received light.

She hath light in her, but it is not of her: the streams that came into Paradise, had not their spring in Paradise; the graces the Church hath, are all received. 1. Cor. 4.7.

Applications.

1. Let me humbly acknowledge I am a receiver from God, and deeply ponder this great receipts must have great accompts: he that hath two talents must accompt for two; he that receives five, must answer for five: a day will come when I shall be called to give account of my stewardship. Luke 16.2.

2. I must beware of pride, I am but a receiver, and must be called to a reckoning. Pride growes from this, we looke on the middle, and neglect both ends: men enjoy some present excellency, which breeds pride; as Iron doth the rust. Remember thy original, remember thy accompt, thou swolne dost and ashes; I came naked into the world, without a ragge of cloathes, or dramme of grace; shortly I must descend into the grave, and carry nothing with me, and must stand at the barre to answer how I have imployed my gifts, my wit, my wealth, my time, my strength, and abilities; all I have is but lent me, why should I bee proud of that the Lord betrusts me withall? Let me labour to use it well, and learne to be humble.

Secondly, the light of the Moone is communicated.

She receives light, and we partake of it: the Moone receives not light onely for her selfe; wee receive not our talents to hide in a napkin; we must disperse and

few abroad of our wealth, *Psalm*. 112. 9. *Heb.* 13. 16. and be as good stewards of Gods manifold graces, to the edification of others. 1. *Pet.* 4. 10 Let the little I have bee well employed; let my gifts edifie, encourage, and comfort others, alwayes endeavouring to be distributive and communicative.

Thirdly, the Sunne lending his light hath not the lesse. Nor hath God the lesse for giving largely to others; he gives abundantly; yet is not the poorer: the wise Virgins could not spare oyle for others; but God hath sufficiency for himselfe, for others, for all. Lord if thou give me wisdom, it diminishes not thy owne: open the treasures of thy blessings, and let the fountaine of thy goodnesse overflow, and runne into my soule, so shalt thou pleasure me a poore creature; and not disparage thy selfe, my blessed Creator.

Sett. 3.

Thirdly, of the Moones blacknesse and blemishes.

1. **T**he blemishes are really

2. The blemishes are apparant.

3. They are continued and remaining.

First, the blemishes are really, not feigned, or imaginary; so are the blemishes of my soule true and really blemishes; I am really guilty and polluted, and neede a really satisfaction by Christ, and a really renovation by Gods holy Spirit.

Secondly, the Moones blemishes are obvious and apparant, so are the sinnes of Gods people apparant to him, *Psalm* 90. 8. and apparant to others, as were the sinnes of David and Peter: apparant to our selves. *Psalm* 51. 5.

Lord let my iniquities be forgiven, and my sins covered; not from thy omniscience, (that is impossible) but from thy judicall view: Lord looke not on my sins to take vengeance; and let me so looke on the apparant faults



faults of others, that I forget not to looke on their apparant graces.

Thirdly, the Moones blemishes are continued; so are the blemishes of the regenerate. St. Paul had a law in his members: these *Canaanites* are left for our exercise; perfection is for the next world, here we are as the Moone with blemishes.

Applications.

1. Alas poore soule that I am; not onely in a place polluted, *Micb. 2. 10.* but my very soule is polluted, and my pollutions sticke fast upon me, *Heb. 12. 1.* so that much Niter and Sope will not wash them away.

2. Yet there is a fountaine opened for sinne and uncleannesse, *Zach. 13. 1.* There is a blood that can cleanse from all sinne, *1. Ioh. 1. 7.* and make me whiter than Snow.

3. Death is not to bee abhorred as the greatest evil, for it puts an end to my pollutions. He that is dead, is freed from sinne, *Rom. 6. 7.* Death takes away our sins as well as our lives, then perfect holiness and happiness shall meete, our blemishes shall be done away, and we shall shine as the Sunne, *Mat. 13. 43.*

Fourthly, Of the Moones mutation.

Scil. 4.

Like the English people, she ever changes her forme and shape, and hath a diverse light, sometimes like a bow, and sometimes like a globe; she is called *Mary*; when she is new and seemes horned, she is *Argent*; when she is in halfe at the full at eight daies old, she is *August*; when there is doubt of the full roundness, she is *Navon*, shining at the full going from the Sunne she hath horns toward the East; coming toward the Sun, her horns be toward the west; the side toward the Sun is alwaies the bright side.

## Considerations.

1. As the Moone is alwaies mutable, so are all things under it; the Windes change, the waters ebbe after flowing, the earth lies dead in the winter, but buds, springs, blossoms, and beares fruit in the Summer: generation and corruption is acted on this terrestriall globe.

Oh how mutable a creature is man? first an embriom, then a living creature, growing till he be borne: Then he cries at his birth, and is restless till his death: First hee changes from an infant to a childe; from a childe to a youth, from a youth to a man; from weaknesse he changes to strength, and from strength to weaknesse againe: In youth he is more strong and lesse wise, in age more wise, but lesse strong; every steppe he treads, he is mutable; now he goet, anon he runnes; then he sits, then he eates, anon he is weary of eating; he desires his bed, and in short time is weary of it; he would be rich, then honourable, then he longs for pleasures; he will marry, and if he could he would againe be unmarried; he will to sea, and shortly desire the shore: Man is made of composition, and alwaies subject to alteration: now he laughes, and anon is ready angry; now embraces, anon he strikes and stabbes; to day he is at his recreation, to morrow groaning on his sick bed; to day in a Bower feasting, to morrow in the field fighting: he desires, hee rejoyces, he feares, he sorrowes, now patient, anon vexed, now zealous, anon cold. *Abasueras* loves *Vashti*, but anon hates her; hee honours *Haman*, then he hangs him. *Amnon* lusts for *Tamar*, anon despises her. A man is an unsettled thing, he never leaves tumbling till hee comes to the pit, and there he doth change to dust, whereof hee was made.

2. If there be a necessity of an unavoidable mutation, let me labour to change for the better; to change from *Adam* to *Christ*, from nature to grace, from sinne to sanctification: Those which be never changed cannot be saved,

saved; those which are in the flesh cannot please God. Rom. 8. 8. Except we repent we must perish. Luke 13. 3. Let me labour to be renewed and changed. Rom. 12. 2. This will evidence that I beare his Image. 2. Cor. 3. 18.

3. All my little changes are but fore-runners of my great change. Job. 14. 14. Death will come; let me prepare for it, by seeing his approaching and pulling out his sting, which is done by faith in Christ his blood; and serious repentance: the thoughts of my end should be the end of my thoughts, and my thoughts of death should be as a bridle and a spur; so death would be to me not a ruine, but an advantage.

The fifth branch is, *of the Admoons gubernation.*

Self. 3.

**H**Er Regiment is over the waters, & moest govern-  
ment the flood and ebbe is according to the en-  
crease and wane of the Moone: what power she hath on  
our braines or blood exceeds my knowledge: but this  
is plaine, the Moone drawes the Ocean, as the Adamant  
doth the Iron. At new moone and full moone the tide  
is high.

#### Considerations.

How is my condition like the Moone: as in my mu-  
tation and blenishes, so in my calling and condition,  
being Clerke and Steward to the Water engines, like  
the Moone I cause the waters to flow abroad by my di-  
rection.

1. The Moone was appoynted among the rest of the  
Planets for this office: so I was chosen from the rest to  
my place.

2. The Moone is under the Sunne, and an inferior,  
yet over the waters as a governour: So am I under my  
superiors, yet, as the Centurion, have servants under me.

3. The Moone is faithfull in her Regiment, and was  
never knowne to stoppe a tide, or take a bribe to pervert  
order.

order, to teach me my duty to keepe order and Justice.

4. The Moone is sometimes clouded; yet still hath relation to the waters; so is my inclination that way; when other occasions keepe me away, I forget not my relation that I beare toward the water-workes.

5. The Moone is lesse welcome to thieves, who love the darke, because their deedes are evill; and I finde my selfe most maligned by them, whose falshood I discover.

Secondly, the Moone over the waters, is as the  
King over the people.

1. As many dropes makes a River, many rivers an Ocean; so many people doe make up a Nation, or an Army.

2. Waters are sometimes calme and quiet, and sometimes troublesome: so are people, sometimes quiet, sometimes raging and furious.

3. Water are for ornament and defence, fit, and refreshing: so are people to the Prince.

4. Some waters are salt, some are fresh, some are bitter, some are for healing: so are the people, some are tart, byting, and censorious; some are sweet loving, amiable; some are good, mercifull, and religious.

5. Some waters are more obvious, some are more obscure, and runne under the ground: so some people have places of eminence, others are more obscure and retired.

#### Conclusions.

1. If waters bee governed by the Moone, it may teach us not to despise government: it is nature that is refractory, grace submits.

2. United forces are strong: many dropes make a Sea, and carries great ships.

3. Let me pray for the waters of the Sanctuary, the saving graces of the Spirit, that I may be cleansed from my naturall pollutions: for water cleanseth, that my temptation may be allayed in respect of their heate: water cooleth,

cooleth, that I may be made fruitfull in all goodnesse: water causes fructification, thus I have a little digressed from the moone to the waters, it being an element I am much conversant withall. So much of the Moones regiment.



*Of the Starres.*

1. *Of the time of their creation.*
2. *Of their exceeding greatnesse.*
3. *Of the multitude of the Starres.*
4. *Of their use and service.*
5. *Of the glory of the Starres.*
6. *Other Questions resolved concerning Starres.*

*First, Of the time of their creation.*

*Self. 1.*

**T**He Starres were created in the beginning of time, in the fourth day of the world. *Gen. 1. 16.*

1. The Starres are ancient, yet usefull: they do keepe their vigor and brightnesse to this time: to teach mee, if I live to be old, to flourish in my age, to keepe my vigor and zeale.

1.

2. The fourth day after the creatures beganne to come to order, then the Starres were made; to teach me this, that at the first I am but a confused *Chaos*; then comes conviction as the first light; but when I come towards perfection, & endeavour to separate my affections from my finnes, and there is a Firmament of heavenly mindednesse in my upperregion, now there is knowledge; and judgement, and sanctified reason set up by the

2.

Dd

Lord

Lord to shine orderly in my hemisphære; as the Sunne, Moone, and Starres.

3.

Before the fourth day there was a light for the day, but none for the night: Now lights are made for the dark, to teach me now there is no time, but I should behold Gods workes: I may in a darke night see the army of heaven above my head, and so take occasion to praise my Creator.

4.

The fourth day were Lights made, there was light before, but now more excellent and durable lights: Let my last workes be my best, and my progresse be such that my conclusion be most excellent and honourable.

5.

The fifth day the Starres were made; now if a man be within doores, there is a Canille: if he go forth, there is Starre light, God loves the prosperity of his creature, day and night have we externall light from Heaven: desire a perpetuall spirituall light from the God of Heaven.

Self. 2.

*Secondly of the greatness of the Stars.*

I. 152.

TO leave all Astronomically conjectures, I may conclude the *Starres* are of an exceeding greatnesse, else it were impossible to see them, they are so farre above us.

I.

*Job yds: 15. 16. 17. 18. 19. 20. 21. 22. 23. 24. 25. 26. 27. 28. 29. 30. 31. 32. 33. 34. 35. 36. 37. 38. 39. 40. 41. 42. 43. 44. 45. 46. 47. 48. 49. 50. 51. 52. 53. 54. 55. 56. 57. 58. 59. 60. 61. 62. 63. 64. 65. 66. 67. 68. 69. 70. 71. 72. 73. 74. 75. 76. 77. 78. 79. 80. 81. 82. 83. 84. 85. 86. 87. 88. 89. 90. 91. 92. 93. 94. 95. 96. 97. 98. 99. 100. 101. 102. 103. 104. 105. 106. 107. 108. 109. 110. 111. 112. 113. 114. 115. 116. 117. 118. 119. 120. 121. 122. 123. 124. 125. 126. 127. 128. 129. 130. 131. 132. 133. 134. 135. 136. 137. 138. 139. 140. 141. 142. 143. 144. 145. 146. 147. 148. 149. 150. 151. 152. 153. 154. 155. 156. 157. 158. 159. 160. 161. 162. 163. 164. 165. 166. 167. 168. 169. 170. 171. 172. 173. 174. 175. 176. 177. 178. 179. 180. 181. 182. 183. 184. 185. 186. 187. 188. 189. 190. 191. 192. 193. 194. 195. 196. 197. 198. 199. 200. 201. 202. 203. 204. 205. 206. 207. 208. 209. 210. 211. 212. 213. 214. 215. 216. 217. 218. 219. 220. 221. 222. 223. 224. 225. 226. 227. 228. 229. 230. 231. 232. 233. 234. 235. 236. 237. 238. 239. 240. 241. 242. 243. 244. 245. 246. 247. 248. 249. 250. 251. 252. 253. 254. 255. 256. 257. 258. 259. 260. 261. 262. 263. 264. 265. 266. 267. 268. 269. 270. 271. 272. 273. 274. 275. 276. 277. 278. 279. 280. 281. 282. 283. 284. 285. 286. 287. 288. 289. 290. 291. 292. 293. 294. 295. 296. 297. 298. 299. 300. 301. 302. 303. 304. 305. 306. 307. 308. 309. 310. 311. 312. 313. 314. 315. 316. 317. 318. 319. 320. 321. 322. 323. 324. 325. 326. 327. 328. 329. 330. 331. 332. 333. 334. 335. 336. 337. 338. 339. 340. 341. 342. 343. 344. 345. 346. 347. 348. 349. 350. 351. 352. 353. 354. 355. 356. 357. 358. 359. 360. 361. 362. 363. 364. 365. 366. 367. 368. 369. 370. 371. 372. 373. 374. 375. 376. 377. 378. 379. 380. 381. 382. 383. 384. 385. 386. 387. 388. 389. 390. 391. 392. 393. 394. 395. 396. 397. 398. 399. 400. 401. 402. 403. 404. 405. 406. 407. 408. 409. 410. 411. 412. 413. 414. 415. 416. 417. 418. 419. 420. 421. 422. 423. 424. 425. 426. 427. 428. 429. 430. 431. 432. 433. 434. 435. 436. 437. 438. 439. 440. 441. 442. 443. 444. 445. 446. 447. 448. 449. 450. 451. 452. 453. 454. 455. 456. 457. 458. 459. 460. 461. 462. 463. 464. 465. 466. 467. 468. 469. 470. 471. 472. 473. 474. 475. 476. 477. 478. 479. 480. 481. 482. 483. 484. 485. 486. 487. 488. 489. 490. 491. 492. 493. 494. 495. 496. 497. 498. 499. 500. 501. 502. 503. 504. 505. 506. 507. 508. 509. 510. 511. 512. 513. 514. 515. 516. 517. 518. 519. 520. 521. 522. 523. 524. 525. 526. 527. 528. 529. 530. 531. 532. 533. 534. 535. 536. 537. 538. 539. 540. 541. 542. 543. 544. 545. 546. 547. 548. 549. 550. 551. 552. 553. 554. 555. 556. 557. 558. 559. 560. 561. 562. 563. 564. 565. 566. 567. 568. 569. 570. 571. 572. 573. 574. 575. 576. 577. 578. 579. 580. 581. 582. 583. 584. 585. 586. 587. 588. 589. 590. 591. 592. 593. 594. 595. 596. 597. 598. 599. 600. 601. 602. 603. 604. 605. 606. 607. 608. 609. 610. 611. 612. 613. 614. 615. 616. 617. 618. 619. 620. 621. 622. 623. 624. 625. 626. 627. 628. 629. 630. 631. 632. 633. 634. 635. 636. 637. 638. 639. 640. 641. 642. 643. 644. 645. 646. 647. 648. 649. 650. 651. 652. 653. 654. 655. 656. 657. 658. 659. 660. 661. 662. 663. 664. 665. 666. 667. 668. 669. 670. 671. 672. 673. 674. 675. 676. 677. 678. 679. 680. 681. 682. 683. 684. 685. 686. 687. 688. 689. 690. 691. 692. 693. 694. 695. 696. 697. 698. 699. 700. 701. 702. 703. 704. 705. 706. 707. 708. 709. 710. 711. 712. 713. 714. 715. 716. 717. 718. 719. 720. 721. 722. 723. 724. 725. 726. 727. 728. 729. 730. 731. 732. 733. 734. 735. 736. 737. 738. 739. 740. 741. 742. 743. 744. 745. 746. 747. 748. 749. 750. 751. 752. 753. 754. 755. 756. 757. 758. 759. 760. 761. 762. 763. 764. 765. 766. 767. 768. 769. 770. 771. 772. 773. 774. 775. 776. 777. 778. 779. 780. 781. 782. 783. 784. 785. 786. 787. 788. 789. 790. 791. 792. 793. 794. 795. 796. 797. 798. 799. 800. 801. 802. 803. 804. 805. 806. 807. 808. 809. 810. 811. 812. 813. 814. 815. 816. 817. 818. 819. 820. 821. 822. 823. 824. 825. 826. 827. 828. 829. 830. 831. 832. 833. 834. 835. 836. 837. 838. 839. 840. 841. 842. 843. 844. 845. 846. 847. 848. 849. 850. 851. 852. 853. 854. 855. 856. 857. 858. 859. 860. 861. 862. 863. 864. 865. 866. 867. 868. 869. 870. 871. 872. 873. 874. 875. 876. 877. 878. 879. 880. 881. 882. 883. 884. 885. 886. 887. 888. 889. 890. 891. 892. 893. 894. 895. 896. 897. 898. 899. 900. 901. 902. 903. 904. 905. 906. 907. 908. 909. 910. 911. 912. 913. 914. 915. 916. 917. 918. 919. 920. 921. 922. 923. 924. 925. 926. 927. 928. 929. 930. 931. 932. 933. 934. 935. 936. 937. 938. 939. 940. 941. 942. 943. 944. 945. 946. 947. 948. 949. 950. 951. 952. 953. 954. 955. 956. 957. 958. 959. 960. 961. 962. 963. 964. 965. 966. 967. 968. 969. 970. 971. 972. 973. 974. 975. 976. 977. 978. 979. 980. 981. 982. 983. 984. 985. 986. 987. 988. 989. 990. 991. 992. 993. 994. 995. 996. 997. 998. 999. 1000.*

1. Greatnesse and Goodnes may be together; Gods great and good, so are the *Stars*. So have some men been great and good; as *Iob*, *David*, *Iofias*; such men are honourable alive, and being dead, men speak of them, and their goodnes both together. *1 Chron. 22. 32.*

2. Cron. 32. 32.

2. The *Stars* are great in quantity, yet do seeme small to the beholders; so are the godly, great with God, small in account of the World; greatly dignified with heavenly graces, protected with Angels; yet slighted of the World, and of little account.

3. The *Stars* are small to our fence, yet great to our

realise



reason: the senses are no fit Iudges of the things a far off, or aboue us, he that walkes by sense only, is a sensuall man; he that is guided by reason is a rational man; hee that hath the light of faith, excels them both.

*Thirdly, of the multitude of the Stars.*

*Sol. 3.*

**T**hey cannot be numbred. *Jer. 33. 22.* If we looke up, we may behold the army of them, and conclude they are exceeding many. But how many that exceeds our humane capacity, here the best Arithmetician is at a non-plus.

*Applications.*

First, seeing I cannot number the Stars, for tis impossible; it is my wisdom to number my dayes, for that is profitable; to humble and weane my heart from pride and wordlines.

2. As the multitude of Stars discovers to us our impotency, so it discovers both Gods wisdom and omnipotency; his wisdom *Psalms 147. 4. 5. verses,* *Hee counteth the number of the Starres, and calls them all by their names: his wisdom is infinite: his power* *Iob 9. 9.* *He doeth great things, and unsearchable, yee marvellous things without number: these considerations are raysed on his making of the Stars.*

3. It may comfort us in this, that many shalbe saved: *Gene. 22. 17.* *Believers shalbe as the Stars for multitude.* Though compared with Reprobates, they are a little stocke, yet in themselves they are innumerable.

4. The spacious Heavens are al over bespangled with Stars, to shew the perfection of Gods workes with glorious ornaments, and it shewes Gods bounty to us below, which at sea and land every where enjoy the stars for profit and delight.

*Did a* *Fourth*

## Sect. 4.

## Fourthly, of the use of the Stars.

**F**irst they are for ornament. 2. They are for distinction of day and night. 3. To shew the seasons of the year. 4. They be signes of weather. 5. They have an influence on the interior things here below.

*Considerations applicatory.*

First, the *Stars* are for ornament, and ornaments are for wellbeing, and do come from riches. First, God gives a being, then a wellbeing; he gives a being in *grace*, and sayth to the Soule live: then he gives endowments, and comely ornaments, *Ezek. 16. 12.* If once I have a being in *grace*; I shall have an honourable being at the last, therefore I must hope and waite.

2. I am to admire Gods riches and bounty hee hath made for himselfe, and doth enioy the Heavens, earth, and the seas, with all their ornaments. Rich men have great variety, and every roome is furnished, wee admire them too much; let us admire Gods magnificence and riches, his royaltie and bounty in all his workes.

3. Ornaments are not unlawfull; *Solomon* had his Throne with carved Lyons by the staves, which were for ornament: soft rayment may be in Kings houses; *Isaiah* had a party coloured coate, *Gen. 37. 23.* and a ring, and a chayne of gold; *Gen. 41. 42.* people may use them according to their dignity.

*These Cautions are needfull.*

1. That they be rather cast on us by some act of Gods providence, not eagerly cared and sought for.

2. That we avoid garishnes; and neglecting modesty.

3. That we in cost on them exceed not our ability.

4. That we mind them not so much, as we do the inward graces and ornaments of the soule.

5. That we take the ornament God gives, that wee take heed of the pride God hates.

6. That

6. That every day wee be not brave like *Dives*, we that are inferiour people.

7. That we lay them aside in times of humiliation. *Ecclesius 33: 4. 5. verse.* *Secondly.*

The Stars are for distinction of day and night: the Sun doth rule the day, the Moone and Stars do rule the night.

1. Distinctions are lawfull; God teaches them both by his word and by his workes, we may distinguish and separate, chuse and refuse: the Anabaptists which refuse them, and call them turning of devices, do speake out of their ignorance and emptines.

2. Distinctions are not only lawfull but usefull, and of absolute necessity: we must distinguish of persons, times, places, things of matter, manner, end, &c. *Qui bene distinguit, bene docet: He which distinguishes well teaches well.* Go preach the Gospell to every Creature, saith our Saviour: we must distinguish betwene reasonable and unreasonable Creatures: some have mistaken, and preach to fishes, as it is reported. God heares not sinners. *John 9:* there are repentant sinners, and unrepentant sinners: Separate your selves, *1. Cor. 6:* There is a separation from Infidels, which is duty, and a separation from Christians (holding the same Creede with us) which is a Schisme.

*Thirdly, and fourthly.*

The Starres doe shew the seasons of the year. *Iob 38. 31:* There is mention of *Pleiades* and *Orion*, *Iob 9. 8.* There is *Arcturus*: a Starre neare *Pysa* major: by it called *Charles-waine*. *Pleiades* is the starres which doe bring in the Spring with their sweete influence: *Orion* brings in the winter, and hath his bonds, the frost bindes in that season, *Arcturus* is seven Starres, and *Charles* betokeneth heate, beginning the *rye of August*, and ending fifty dayes after. Thus the starres shew the season of the year, and are usefull.

D d 3

Appli-

*Applications.*  
 1. Here is great wisdom and Arte to learne effects by causes: the *Jewes* could discern the face of the sky: Astronomers observe the course of the heavens, and the conjunction of the Planets: and Religion fore-sees the frost of misery, the tempests of indignation, the heat of judgement.

2. When sinne is universall. *Gen. 6. 11. Jer. 6. 13.*

3. When faithfull Ministers are mist-used. *2. Chron. 36. 37.*

4. When God takes away the stay and strength of a nation. *Isai. 3.*

5. When men are incourageable, and reforme not by former judgements. *Levit. 4.*

6. When the divorcing sinne of Idolatry is acted. *Judges 2. 11. Judges 5. 8.*

These evils fore-shew judgements, as the Starres doe fore-shew the seasons.

7. There are some seasons I am to have an especial respect unto.

1. The time of yonthee be well seasoned.

2. The time of the Gospell to heare it, and submit.

3. The company of the gally for edification.

4. The time of prosperity to gaine saving grace.

5. The time of adversity to gaine humility.

*Fifthly.*

The Starres have influence, but the knowledge thereof is very obscure: the influence of the Sunne and Moone is more apparant: The safest way is to consider the influence of the Starres negatively.

1. Things cannot be fore-told by the starres, by lasting mens activities, how long they shall live, and when death they shall dye.

2. Nor doe the starres fore-tell inevitably the daily weather long before it come to passe: their strength too so suddie, is but conjectures.

3. Nor can men by the Seares finde out things that be lost.

4. The Seares worke not the wills of men in the least degree. Their exhalations bein light and lighte facts exceeds my capacity. I admire them that gives them their operations.

*Applications.*

1. Those, who see too blame which out of pride and curiosity, abuse the starres superstitious them to a wrong end, groundlesse predictions, and casting nativities upon

2. Let Ministers, who are Seares in the visible Church, have by the word they preach a sweet influence on my soules, that I may have the light of Knowledge, the heat of zeale, the exhalation of heavenly mindedness, this influence shall make me both fruitful and joyfull.

*Fifthly, of the glory of the Starres.*

**T**heir glory is their bright shining. 1. Cor. 15. 41. They have glory.

*They differ in glory.*

There is difference of contrariety, so blacke and white doe differ: There is a difference of degree, so the starres doe differ: all have smallness and glory, but all have not equall glory.

*Considerations.*

1. Gods workers are glorious, and doe deserve our consideration, our praise, our admiration. 2. Pet. 1. 12.

2. Varyety proves Gods wisdom and sovereignty.

3. As there is difference of Starres, so there is difference of Christians in the hierarchy of the Church.

4. There shall bee degrees of glory at the resurrection. 1. Cor. 15. 42. and those which convert many shall have the greatest glory. 1. Cor. 9. 12.

Sixthly,

Sect. 6.

Quest. 1.

Answ.

Et suis aggeri-  
bus, Trem.

Quest. 2.

Answ.

Quest. 3.

Answ.

Quest. 3.

Answ.

Quest 4.

Answ.

Sixthly, *Questions resolved concerning the Stars.***H**ow did the Starres fight? *Judges 5. 20.*Some thinke the course of the Heavens and Stars, in regard of storme and tempest, was against *Sisera* in the battaile, the Starres fought from their bulwarkes or trenches: the influence of heaven was against him.

What is it to make the nest among the Starres?

*Obad. 4.*

To thinke they are in security and safety, so be as presumptuous, as if they were out of danger, and lodged among the Starres.

How doe the Starres praise God? *Psal. 148. 3.*

God is praised of his creatures

1. Perfectly without distinctions: so the Angels in heavens and Saints praise him.

2. Sincerely: so the Church on earth doe praise him, yet hath infirmities.

3. Declaratively: so the Starres doe praise him, and declare his excellency.

How is Christ called the Morning-starre? *Rev. 22. 16.*As the Morning-starre he brings light into the World. *Iohn 8.*1. Men rejoyce when the Morning-starre doth appeare: so the Angels in heaven, and men on earth rejoyced when this appeared. *Luke 2.*2. The Morning-starre communicates his light: so Christ communicates his graces: of his fulnesse wee all receive. *Ioh. 1.*3. The Morning-Starre is excellent for brightnesse: so Christ is the chiefest of a thousand, and anointed with the oyle of gladnesse above his followers. *Psalme 45.*

How are the Angels and the Starres alike?

1. The Angels are Celestiall, Heavenly creatures: so are the Starres.

2. The Angels are glorious: so are the Starres.

3. The Angels are innumerable: so are the Starres.

The



4. The Angels doe service to man : So doe the Stars.

5. The Angels shine in the invisible : Likewise the Stars in the visible.

6. Though the Stars bee swift in motions, yet the Angels excell them for celerity.

7. The Stars at the end shall fall from heaven : but the Angels (as God hath said) stand for ever.

How are Preachers and Stars alike?

1. The Stars are above us in the heavens : the Preachers are above us in their places, being Elders, Fathers, Shepherds.

2. The Stars are lights : so are true preachers.

3. The Stars have degrees of brightness : so have preachers diversity of gifts.

4. The Stars doe comfort us : so doe the Preachers.

5. Stars fore-shew the seasons : the Preachers are seers, and doe forewarn us.

6. The Stars doe shine in the darkest : the Preachers are shining among the prophane & froward people.

7. The Stars shine, though some regard them not : so the preachers doe advertise their function : though some regard them not.

8. The Stars are most honoured of the Astronomers and learned that know their virtues, influences, & operations : so Preachers are most honoured of them which doe know the dignity of their calling, the end of their ministry, the necessity of preaching, the benefit that is gained by their labours.

9. When the Sun appeares, the Stars do then vaile their glory : so the true preachers give glory to Christ, and lay aside their owne glory.

### The Disparity.

1. The Stars are made of pure matter, and continue the Preachers be made of composition, and dye, and have succession.

E c

2. The

March. 24.

1. Tim. 5. 21

Quest 6.

Ans.

2. 1. 2. 3. 4.

5. 6. 7. 8.

9. 10. 11. 12.

13. 14. 15. 16.

17. 18. 19. 20.

21. 22. 23. 24.

25. 26. 27. 28.

29. 30. 31. 32.

33. 34. 35. 36.

37. 38. 39. 40.

41. 42. 43. 44.

45. 46. 47. 48.

49. 50. 51. 52.

53. 54. 55. 56.

57. 58. 59. 60.

61. 62. 63. 64.

65. 66. 67. 68.

69. 70. 71. 72.

73. 74. 75. 76.

77. 78. 79. 80.

81. 82. 83. 84.

85. 86. 87. 88.

89. 90. 91. 92.

93. 94. 95. 96.

97. 98. 99. 100.

101. 102. 103. 104.

105. 106. 107. 108.

109. 110. 111. 112.

113. 114. 115. 116.

117. 118. 119. 120.

121. 122. 123. 124.

125. 126. 127. 128.

129. 130. 131. 132.

133. 134. 135. 136.

137. 138. 139. 140.

141. 142. 143. 144.

145. 146. 147. 148.

149. 150. 151. 152.

32. The Starres teach by the eyes: the Preachers teach our eyes by example, our ears by doctrine.

33. The Starres keep a great way above us: the Preachers eat and drinke and converse with us.

34. The Starres put no difference between good and bad, but shine equally to all: but the Preachers do make a difference between the precious and the vile, *Jerem. 15. 19.* and teach the people to distinguish as it is *2. Cor. 4. 23.*

35. The Starres have a concordiall harmony; but preachers sometimes disagree.

Whereto should all Christians be like Starres?

1. Not be heavenly minded, but have our conversation above, yet the Starres are heavenly minded.

2. Not to envy one another: the little Starres do not envy the great ones.

3. To stand for the truth when it is opposed: the little Starres do shine in the darkest night.

4. To keepe our places, without aspiring, or wandering: the Starres abide where God hath placed them, and keepe their courses.

5. To do good to them a farre off: the Starres do communicate their light to us, though they be exceeding farre above us.

Whereto should all Christians be like Planets?

1. Luna the Moone which is next to us: her face is bright in twenty eight dayes.

2. Mercurius, which accompanies the Sunne, and is never further degrees from the Sunne.

3. Venus a bright star: her course is 248 daies.

4. Sol in the middle of the Planets his race is runne in three hundred sixty five dayes and five houres.

5. Mars, a hot and dry Planet: his course is two yeares.

6. Jupiter, a hot and moist Planet: his course is twelve yeares.

Acts 15. 29.

Quest. 7.

Ans.

Quest. 8.

Ans.

7. *Saturne* cold and dry, the highest of all the rest  
his race is thirty years.

## Of the Airt

1. *Of the clearenesse of the Airt*

2. *Of the finenesse and subtilnesse of it*

3. *Of the largenes and universallity of it*

4. *Of the usefulnesse and commoditie of it*

5. *Of the continuance of the Airt*

6. *Of the resistance of it*

First, *Of the clearenesse of it.*

Self. 1.

The Airt of it selfe is cleare and pure: of a thinne  
and invisible nature: when we say the airt is clar-  
ified and purged, it is not from any malignity that is in  
it selfe, or any pollution; but it is from the addition of  
fogges and vappours, which by exhalation rise from  
the earth into the pure airt. The lower region of the  
Airt is not so cleare as that above, yet the airt is all  
one, simply, and singly pure, and cleare as the Crystall.

Conclusions.

1. Pure is hee that made the Airt. 1. *Job* 38.  
God is pure: yea, so pure, that in comparison of God,  
Cal non sunt mundi, the heavens are unclean in his  
sight.

2. I am impure although the airt be pure: impure in  
my nature, *Job* 14. 4. impure in my life, therefore am  
commanded to cleanse my selfe. 2. *Cor* 7. 1.

3. I sucke in the pure airt, why should I not labour

Ee 2

for



2. To mens commands which crosse God. *Ab. 4. 19.*

3. To the examples of the wicked. *Ephesians 5. 7. ver.*

4. To Satans tentations. *1. Peter 5. 9. verse.*

*Against we must yeeld.*

1. To God for his owne sake.

2. To men for the Lords sake.

3. To the passionate for peace sake.

4. To the weake for Conscience sake.

5. To the poore for their needs sake.

6. To them that offend in for mercies sake.

*To yeeld.*

1. To the good that we may incourage them.

2. To the bad, that we may silence them.

3. To friends, that we may rejoyce them.

4. To enemies, that we may win them.

5. To all, that we may edifie them.

*Against, not to yeeld but withstand.*

1. The Apostates, that we may shame them.

2. The Hereticks, that we may convince them.

3. The Schismaticks, that we may reigne them.

4. The Innovators, that we may escape them.

5. The beastly prophane, that we be not corrupted by them.

*Thirdly, of the largeness of the Ayre.*

*Sol. 3.*

**I**T hath a large Circuite, a spacious being, yet limited ; if we go up to the Clouds tis there : if we descend to the vaults and Caves of the earth : tis there : if you go beyond the Seas, tis there : It hath a kind of ubiquity : God, our Consciences, and the Ayre are every where present ; shut the Windows ; barre the doores never so close, draw the Curtaines together, yet these three cannot be kept out.

*Conclusions.*

1. If the Ayre be present every where, much more is

Ee 3

God ;

1. King. 8.

God; the Ayre is limited his place; but God his center is every where, and his circumference no where: the Heaven of Heavens cannot containe him: he is in Heaven in his Majesty, in Earth by his providence, in Hell by his judgments: his omnipresence should teach me reverence and sincerity.

2. The Ayre is like to God, in this: it is present every where, but seene no where.

3. The Ayre in some places is dark and terrible: in some places light and comfortable: So is God, at some terrible in his judgements, to some comfortable in his presence and promises, mercies, and favours.

Psal. 81. 10.

4. If a man doe but open his mouth, the ayre flieth: so if we open our mouth to God, and pray in faith, God hath promised to fill it.

5. If a man be buried in the earth, the ayre leaves him, and he putrifies and rots: So these men are wholly earthly minded, snatched under earthly cares, buried in earthly desires, and in worldly hopes, God leaves them and they rot, decay, and perish.

6. A man that hath good ayre: is in possibility of health and chearefulness: but hee that enjoyes communion with God, hath certainty of soules health, and shall have so much comfort first or last, as shall exceed worldlings.

Sect. 4.

#### *Fourthly, of the usefulness of the Ayre.*

**I**T is so usefull, that we live in it, and cannot live without it: it is more usefull then fire and water, friends or money: with the ayre we do eat and drinke and sleepe, worke, walke, play, and refresh our selves: ayre is usefull in prison, in sickness, at all times, in all places: the ayre is with us in contempt, in disgrace, in all miserie, the ayre will visite us, abide with us, offer it selfe to goe downe to our Lungs and refresh us.

Conclu-



## Conclusions.

1. How good is God that makes the Aire so common; the poore Plough-man hath a better portion in it, than the rich Citizen: The Aire is Gods dole to the world, all share in it; the dogge, the horse, the swine are not deprived of it; yet it is more precious than the gold of Ophir: the Rubies and Pearles are not to be compared with it: wete it not to bee had without price, a man would part with all his substance for it, and purchase it with his chiefest treasure; yet God in bounty makes it common, and more plentifull than the stones of the street: O bleesse his name for ever.

2. The Sunne is the cause of the usefulness of the aire, for of it selfe it is both cold and dark: so is my soule without graces, both dark and cold, till God doe shine on me with light and heat.

3. Let me learne of the aire to be usefull; that others may have benefit by me: and avowing to behave my selfe so toward my governours, my family, my kindred, my neighbours, toward the poore, the weak, the strong, that I may be usefull to all; so shall I not live without being desired, nor dye without being bewailed; my enemies will wish to be like to me, and my friends will rejoyce to speake of me, and my conscience will speake for me.

## Fifthly, of the continuance of the Aire.

The Aire and all things are continued by an upholding providence of God, *Psal. 119. 90. 91.* Good things in their want doe breede desire, in their enjoyment they bring delight, comfort and contentment.

## Conclusions.

1. As the Aire is constantly continued, so is the love of God to his people; our finnes, if we repent, deprive us not of it. *Psal. 89. 35.* nor our afflictions, *Psal. 91. 15.*

See. 3.

nor yet death it selfe, *Rom. 8. ver. 38.* The love of God compasses us, and continues with us, as surely and as sweetly as the ayre we do breath in.

2. God takes not away this useful Creature, but continues it, I must learne of him not to take away from men that which is most usefull; that which they cannot well bee without: To take a poore mans tooles to pawne, or his bed-cloathes or garments, and keep them is somewhat harsh: To with-draw maintenance from my teacher, to take away the good name of my brethren, to be a meane to keepe bread from the Market, or preaching from the people, is not the Divine, but the diabolicall nature.

3. The aire is continued (amongst others) to them that are evill, and sinne against God, and blaspheme his name: To teach me, not to doe the worst I can to those which are evill, and doe me wrong, but to be patient toward them, and to strive to overcome them by supplying their wants and necessities.

4. At night the aire hath his being: though it wants the well-being to me, that is, it doth want light and heate: so grace may give me a being, though I want the comfort and exercise for my well-being: but the sunshine of favour brings feeling, comfort, and joy.

*Self. 6.*

Sixthly, *Questions resolved about the Aire.*

*Quest. 1.  
Answ.*

**W**Here doe you prove the Aire was created? The airy region is called heaven: There are three heavens; the Impenall heavens, where the Angels are; and Elementary heavens, where the Sunne, Moone, and Starres are; and the Region of the Aire, where the Fowles doe flye, called the Fowles of heaven: *Mat. 13. 32.* which heaven is the airy region: When God made the Firmament, he made the airy region.

*Quest. 2.*

How is Sathan said to be from beneath: *Iohn. 8.* You are

are from beneath: ye are of the Divell, saith Christ. Yet in *Ephes. 2. 2.* he is the Prince that hath his power in the aire.

There is beneath in place, & beneath in dignity: Lord may be beneath a slave in place, the slave may be in the chamber above him: there is beneath in respect of dignity, so the people are beneath the Prince: Nathan is from beneath in respect of cordedness, baseness, and indignity.

How are the clouds supported by the aire: seeing the aire is more thinn and pure: doth the weaker uphold the stronger?

The Lord upholds all things by his power; the earth he hangs upon nothing; he is not tied to manes, nor to give a reason of his doings: the Clouds are upheld for is so) but by what manes, our ignorance of it is no vice in us.

Have fishes aire in the seas and rivers?

As the wind blows where it listeth, and we know not whence it comes, nor whither it goes, so it may be said of the aire, how it penetrates or communicates it selfe with a contrary element, what path it hath under water, what aire fishes have; or whether they breathe by the Gills, we may question, but should avoid curiosity, and never looke for full satisfaction.

Are not some Masters of families to be blamed (that being able in state) they are so grossly worldly minded, that they deplete themselves of the fresh aire; and also their wives, children, and servants; and let them have no time, or that little time to refresh themselves?

They deplete themselves of a sweet blessing and demonstrate to the world what a hard master their Lord is: that makes them so hard, and makes such drudges of them? for the fresh aire cleaves their spirits, fardens their health, and refreshes their appetites; a broad, neare the City, or farre off, as they goe, they

*Ans.*

*Quest. 3.*

*Ans.*

*Quest. 4.*

*Ans.*

*Quest. 5.*

*Ans.*

rate of the fruits of their labours; rejoyce their children, encourage their servants if they have grace, glorifie God in his works; doe good by conference and example amongst the country people; returne to their home, and with a fresh Career, with thankesfull hearts, and activenesse they fall againe to their trades and callings, their whet proves no let, they blesse God for the good aire, and the good creatures, which with good conscience they have used, having taken their libertie, and doe thus shew

Quest. 7.

Ans.

Doe some erre on the other side, in going too oft abroad (as they say) to take the aire.

As the Foxe goeth to take a prey, may himselfe be taken of the dogges; so some men take a course of pleasure, as a man is in hold, though he be tyed with a golden chaine. These men erre,

1. That finde time to goe out of the City for aire, but finde no time in the City to goe to Church.

2. That being poore, and their families want.

3. That being abroad fall to gaming, or drunkenness, or excess.

4. That munde not, nor speake of God and his worke in their rest things.

5. That suffer not their wives & children to be reformed, but are all for themselves with their companions.

6. That are too lavish in expence, by vain glory, or lecherous appetites: sweet mouths, as we call them.

7. That take the aire for pleasure sake, not for health sake; men doe not wheate stalle but for use.

8. That working hard on the weeke daies, doe take the Sundais to be daies of sensuall pleasure, feasting, drinkings, and excess.

9. That over worke and over watch their servants to maintaine their pleasures and expences going abroad.

10. That so accustom themselves to take the aire, & take their pleasures, that their hearts are stolen away, and their

trades and callings be as bonds and cords, burthens, and as prisons: in stead of being refreshed: these men are spoyled.  
So much of the Aire.

*A Postscript concerning the Aire.*

1. I see there is no vacuicy in nature: every vessell is full of aire, or of other materials.

2. My head is in the aire, which is the first heaven; my eyes look up often to the element, the second heaven: O that my heart were more often with the Lord in the 3. heaven, that I might see my affections in things above Col. 3. 1. and have my conversation in heaven Phil. 3.

3. The aire is the meeting place of the Lord Christ, and the Saints: (as St. Paul saith) we shall meet the Lord in the aire: (1. Cor. 15. 51.) the last living Saints: if the aire doth so much refresh us now, what shall then the refreshing bee? then is the time of refreshing. Act. 3. 19. *The power of refrigeration.*

4. I cannot live a naturall life without the Aire, but the life in heaven needs it not: there needs no Temple for worship, Sunne for light, or aire for breath: such God will be sufficient without instruments, sweet life without sugar, wealth without money, health without food, and life without the aire.

How dark was the aire: 3. daies amongst the Egyptians? So dark, that the thicknes and fogg were felt sensibly. Exod. 10. 21.

What were the consequences thereof?

1. It is probable the Candles could not pierce it, for it was *repleta caliginis*.

2. They remained in their places, as in chains.

3. They were horribly affrighted.

4. Their terrors, it is probable,

1. Kept them from sleeping. 2. Caused fainting and swooning. 3. Brought famine and death to some. 4. They

1. Thef. 4. 17.

1. Thef.

about 3. oil  
cy bellas  
of 1. 2. 3. 4. 5. 6. 7. 8. 9. 10. 11. 12. 13. 14. 15. 16. 17. 18. 19. 20. 21. 22. 23. 24. 25. 26. 27. 28. 29. 30. 31. 32. 33. 34. 35. 36. 37. 38. 39. 40. 41. 42. 43. 44. 45. 46. 47. 48. 49. 50. 51. 52. 53. 54. 55. 56. 57. 58. 59. 60. 61. 62. 63. 64. 65. 66. 67. 68. 69. 70. 71. 72. 73. 74. 75. 76. 77. 78. 79. 80. 81. 82. 83. 84. 85. 86. 87. 88. 89. 90. 91. 92. 93. 94. 95. 96. 97. 98. 99. 100. 101. 102. 103. 104. 105. 106. 107. 108. 109. 110. 111. 112. 113. 114. 115. 116. 117. 118. 119. 120. 121. 122. 123. 124. 125. 126. 127. 128. 129. 130. 131. 132. 133. 134. 135. 136. 137. 138. 139. 140. 141. 142. 143. 144. 145. 146. 147. 148. 149. 150. 151. 152. 153. 154. 155. 156. 157. 158. 159. 160. 161. 162. 163. 164. 165. 166. 167. 168. 169. 170. 171. 172. 173. 174. 175. 176. 177. 178. 179. 180. 181. 182. 183. 184. 185. 186. 187. 188. 189. 190. 191. 192. 193. 194. 195. 196. 197. 198. 199. 200. 201. 202. 203. 204. 205. 206. 207. 208. 209. 210. 211. 212. 213. 214. 215. 216. 217. 218. 219. 220. 221. 222. 223. 224. 225. 226. 227. 228. 229. 230. 231. 232. 233. 234. 235. 236. 237. 238. 239. 240. 241. 242. 243. 244. 245. 246. 247. 248. 249. 250. 251. 252. 253. 254. 255. 256. 257. 258. 259. 260. 261. 262. 263. 264. 265. 266. 267. 268. 269. 270. 271. 272. 273. 274. 275. 276. 277. 278. 279. 280. 281. 282. 283. 284. 285. 286. 287. 288. 289. 290. 291. 292. 293. 294. 295. 296. 297. 298. 299. 300. 301. 302. 303. 304. 305. 306. 307. 308. 309. 310. 311. 312. 313. 314. 315. 316. 317. 318. 319. 320. 321. 322. 323. 324. 325. 326. 327. 328. 329. 330. 331. 332. 333. 334. 335. 336. 337. 338. 339. 340. 341. 342. 343. 344. 345. 346. 347. 348. 349. 350. 351. 352. 353. 354. 355. 356. 357. 358. 359. 360. 361. 362. 363. 364. 365. 366. 367. 368. 369. 370. 371. 372. 373. 374. 375. 376. 377. 378. 379. 380. 381. 382. 383. 384. 385. 386. 387. 388. 389. 390. 391. 392. 393. 394. 395. 396. 397. 398. 399. 400. 401. 402. 403. 404. 405. 406. 407. 408. 409. 410. 411. 412. 413. 414. 415. 416. 417. 418. 419. 420. 421. 422. 423. 424. 425. 426. 427. 428. 429. 430. 431. 432. 433. 434. 435. 436. 437. 438. 439. 440. 441. 442. 443. 444. 445. 446. 447. 448. 449. 450. 451. 452. 453. 454. 455. 456. 457. 458. 459. 460. 461. 462. 463. 464. 465. 466. 467. 468. 469. 470. 471. 472. 473. 474. 475. 476. 477. 478. 479. 480. 481. 482. 483. 484. 485. 486. 487. 488. 489. 490. 491. 492. 493. 494. 495. 496. 497. 498. 499. 500. 501. 502. 503. 504. 505. 506. 507. 508. 509. 510. 511. 512. 513. 514. 515. 516. 517. 518. 519. 520. 521. 522. 523. 524. 525. 526. 527. 528. 529. 530. 531. 532. 533. 534. 535. 536. 537. 538. 539. 540. 541. 542. 543. 544. 545. 546. 547. 548. 549. 550. 551. 552. 553. 554. 555. 556. 557. 558. 559. 560. 561. 562. 563. 564. 565. 566. 567. 568. 569. 570. 571. 572. 573. 574. 575. 576. 577. 578. 579. 580. 581. 582. 583. 584. 585. 586. 587. 588. 589. 590. 591. 592. 593. 594. 595. 596. 597. 598. 599. 600. 601. 602. 603. 604. 605. 606. 607. 608. 609. 610. 611. 612. 613. 614. 615. 616. 617. 618. 619. 620. 621. 622. 623. 624. 625. 626. 627. 628. 629. 630. 631. 632. 633. 634. 635. 636. 637. 638. 639. 640. 641. 642. 643. 644. 645. 646. 647. 648. 649. 650. 651. 652. 653. 654. 655. 656. 657. 658. 659. 660. 661. 662. 663. 664. 665. 666. 667. 668. 669. 670. 671. 672. 673. 674. 675. 676. 677. 678. 679. 680. 681. 682. 683. 684. 685. 686. 687. 688. 689. 690. 691. 692. 693. 694. 695. 696. 697. 698. 699. 700. 701. 702. 703. 704. 705. 706. 707. 708. 709. 710. 711. 712. 713. 714. 715. 716. 717. 718. 719. 720. 721. 722. 723. 724. 725. 726. 727. 728. 729. 730. 731. 732. 733. 734. 735. 736. 737. 738. 739. 740. 741. 742. 743. 744. 745. 746. 747. 748. 749. 750. 751. 752. 753. 754. 755. 756. 757. 758. 759. 760. 761. 762. 763. 764. 765. 766. 767. 768. 769. 770. 771. 772. 773. 774. 775. 776. 777. 778. 779. 780. 781. 782. 783. 784. 785. 786. 787. 788. 789. 790. 791. 792. 793. 794. 795. 796. 797. 798. 799. 800. 801. 802. 803. 804. 805. 806. 807. 808. 809. 810. 811. 812. 813. 814. 815. 816. 817. 818. 819. 820. 821. 822. 823. 824. 825. 826. 827. 828. 829. 830. 831. 832. 833. 834. 835. 836. 837. 838. 839. 840. 841. 842. 843. 844. 845. 846. 847. 848. 849. 850. 851. 852. 853. 854. 855. 856. 857. 858. 859. 860. 861. 862. 863. 864. 865. 866. 867. 868. 869. 870. 871. 872. 873. 874. 875. 876. 877. 878. 879. 880. 881. 882. 883. 884. 885. 886. 887. 888. 889. 890. 891. 892. 893. 894. 895. 896. 897. 898. 899. 900. 901. 902. 903. 904. 905. 906. 907. 908. 909. 910. 911. 912. 913. 914. 915. 916. 917. 918. 919. 920. 921. 922. 923. 924. 925. 926. 927. 928. 929. 930. 931. 932. 933. 934. 935. 936. 937. 938. 939. 940. 941. 942. 943. 944. 945. 946. 947. 948. 949. 950. 951. 952. 953. 954. 955. 956. 957. 958. 959. 960. 961. 962. 963. 964. 965. 966. 967. 968. 969. 970. 971. 972. 973. 974. 975. 976. 977. 978. 979. 980. 981. 982. 983. 984. 985. 986. 987. 988. 989. 990. 991. 992. 993. 994. 995. 996. 997. 998. 999. 1000.

Quest. 8.

Ans.

Quest. 9.

Ans.

Fal of obsc.

city.

Read Wisdom

17.

were more terrible to themselves than the darkness:  
3. This was a earnest of darkness to come.

and a sign to denote of

## Of the Clouds.

1. Of their cause and production.
2. Of their progresse and transmigration.
3. Of their successe and renovation.
4. Of their kinds and variety.
5. Of their usefulness and seruice.
6. Of their dissolving and dissolution.
7. Of the Region where in they live.
8. Resolue concerning the clouds.

Sett. 1.

The Clouds  
are called va-  
pours, Pla. 135  
Fasces ut  
ascendant va-  
pores ad exte-  
mitate terra.

**F**irst, of the cause and production of the clouds.  
The prime cause is God; the instrumentall cause is the Sunne; the Sunne hee raises out of the wa-  
ter vapour, and out of the earth exhalations: A vapour  
is a watery thing, an exhalation is an earthy thing; yet is  
not earth: vapours have a warmth and moysture, and ri-  
sing in the middle Region of the aere, (which is cold)  
become more thicke, and are clouds: exhalations being  
hot and dry, come not to clouds, but to meteors, and if  
they prove clammy, and cling together, and become fie-  
ry, they have diuers formes and apparitions in our sight:  
so then the clouds are produced of moyst vapour drawne  
up by the Sunne or Planets: which appeares, set a su-  
cker of water in the hot Sunne shine, it will in short time  
be drawne up; now that which was something, is not  
annihilated.

Considerations.

1. Two contraries may agree for a common good:  
the Sunne and water produce the Clouds; some men are

of



of contrary dispositions, and cannot agree; yet in advancing the Gospel, maintaining the truth, relieving the poore, let them joyne in this, and be like the Sunne and the water, which differ in nature, yet meet, and do good together.

2. I learne to deny my naturall disposition, to obey the higher powers: the nature of the water is to descend, but by a heavenly influence it ascends: I will deny my selfe in that may offend a weak brother, equall to me, and will not be refractory in an indifferent thing, to yeeld to my superiour which is above me.

3. I see what a sweet influence doth it cause the vapors to come from below, and mount up on high: a sweet disposition guides a voluntary service: let me shine on them below me with the beames of favour, and warme them with kindnesse, and winne their affections: then they will beginne to bethinke themselves of motion toward me, and I shall prevaile with them more than by a sterne carnage, threat, or stripes.

Secondly, of the progresse of the clouds.

Self. 2.

**T**hey have their progresse in the middle region of the aire: the aire hath 3 regions: the highest is very hot, being next to the element of fire, there are generated comets, blazing, starres: the lower region is by reason of the reflexion of the Sunne beames, of a temper somewhat warm: here are dewes, frosts, hoare frosts, mists, &c. The middle region there the col is kept in, and the reflective beames of the Sun reach not to it: there is the place, where the clouds have their residence, and walke their circuit.

\*By reason the Sun leaves us at night.

1. As soone as the clouds are produced, they have their progresse, all things are full of labour, I learne from them not to stand still: *Homines ad maleficiam educti, ut scintilla primum in altum evolvant.* Job 3. 7. Man is brought for to travaile, as the sparke of the hot coale flyeth up hastily, we are produced, we have a progresse, and shall come to a dissolution like to the Clouds: dust wee are, and

Considerations

co: dust wee shall retorne: when our progresse is finished.

2. The cloudes are carried on the wings of the wind to their places appointed, so am I carried by the providence of God to those places where I must doe service.

3. If the cloudes went to the upper region of the aire, we should never have raine, for the extreme heate would dry it up: and if they should be carried downe to the earth they would be troublesome to man: so if I should meddle in things above my calling, I should waste my selfe and my time unprofitably, if I doe things below my place (uncalled) it is to be counted not humility, but in my owne place and station. I am most prompt and usefull, most teemely and commendable.

Sec. 3.

Thirdly, *Of the succession and renovation of the Cloudes.*

**T**He things of short duration have a succession, else their kind could not continue: the Heavens, Sunne, Moone, and Starres have a continuance without succession, bur things of an inferiour being and habitation, are subject to a change and renewing, and are continued by generation and dissolution: the cloudes are renewed because they retorne not againe in cloudes, but come to a dissipation.

*Considerations:*

1. This may provoke me to spend my time well, and to be diligenc in well-doing: shortly I must to the grave, another succeed me, one generation passeth, another succeeds: my care should be to leave tokens of vertue and godlinesse as an inheritance to my successors.

2. When I see any worthy man decease in the Church or Common-wealth, to bewaile him, and goe in sorrow

and pray to God to double his spirit on his successor, that still there may be a supply of good men.

3. What thanks doe I owe to the Lord for renewing the cloudes by whom we have raine? but above that, he renews every morning, every meales meate his mercies, how should I renew my praises and come before him with a new song of thanksgiving?

Lam. 3.

Psal. 40.

4. Let me wait on the Lord, when my strength shall be renewed: let me call on the Lord, to renew my heart with such motions injective, that my words may be renewed effusive, and my workes dissolutive, that as a renewed man my purposes may grow to resolution from thence to actions, with a perpetuall succession.

Isa. 40.

*Fourthly, Of the kinds and variety of the Cloudes.*

Sabb. 4.

**T**Here are divers kinds of cloudes, some are cloudes without raine, some are full of drops, some are great, some are small, some are higher, some lower, some are darke, some are bright.

*Considerations.*

1. All are cloudes, all carried of winds, all are obvious; yet the difference is great: so is it with men in the visible Church, all have their initialls, all enter in by Baptisme, yet differ much in disposition and behaviour. Some will be aloft above others, yet not observed, the highest cloudes have the least or no moystures: the great Andropis bease least, the chaffe in a heape will most commonly be upmost.

2. As in these heapes of cloudes some are good, some are bad; so in the Church, some are solide and sincere, some are shew without substance, cloudes without raine, as St. Iude saith,

3. Some answer mens hopes, and yeeld them drops are for shadow and refreshing: so some by faithfulnessse and

and fruitfulness rejoyce men; and are refreshing to others.

Self. 5.

*Fifthly, Of the usefulness of the Cloudes.*

**T**Heir use is two-fold: for judgement or mercy, *Job* 36. 31. thereby hee judgeth the people, and giveth meate abundantly: In judgement these bottles were opened when the old world was drowned: in mercy at the prayer of *Eliab*.

The Cloudes are the water pots to water the world: the spouts of heaven to refresh the earth, and make it fruitful.

*Considerations.*

1. Let us aske of God the raine of mercy, to be given us from these windowes of heaven.
2. We have cause to feare him which can open these bottles in wrath to consume us.
3. To pray for our Governours, that they may both refresh us and protect us, as the cloudes doe: that visit us with moysture, and shadow us from the Sunnes heate: this shall be prosecuted in the meditation of the raine.

Self. 6.

*Sixthly, Of the dissipation of the Cloudes.*

**A**fter a production, progresse and employment, comes a scattering and dissolution; they ascend, they swell, they threaten, they refresh, they disappoint, they give shade, they punish, they cause plenty, at the last they dissolve.

*Considerations.*

1. I see in them the estate of great ones, they ascend, they have many spectators, they have their time, they act a part, they dissolve, and are forgotten.
2. This is the condition of all men of all sorts: all

Heb. 9. 27.

must

must die; because all have sinned, the high and low, the holy, the prophane, which teaches me

3. To expect that it is inevitable: there are 7. brethren one will slay me, they are the 7. dayes of the weeke, which is the day is hid from me, that I should prepare every day: by mortifying my sinnes which are deaths sting: by resting on my saviour, (more fully) he is deaths Conqueror: by dying in my afflictions daily, which is deaths conlee, then shall death be but my sleep, my dissolution my conjunction with my head and Saviour.

Seventhly, Of the Rain-bow in the Clouds.

Sect. 7.

1. He causeth why the Rain-bow was made.

2. The manner wherof it is made.

3. What use to make of the Rain-bow.

4. Resolves concerning the Rainbow.

First, the cause why the Rain-bow was made.

After the deluge God gives the Rain-bow; the cause was his goodnesse, his compassion: God gives the Rain-bow undesired, unsought for: there is his free goodnesse; he gives a bow, for singularity none is like it, for dignity it is his bow, the bow of God, hee gives it as a signe of his Covenant, which for latitude is not only betwene God and man, but (inter omnes animantes ex animi carne:) betwene all living Creatures of all Beasts, for longitude the Covenant is for ever.

1. His goodnesse teacheth me, to love him, to praise him, to flee to him, to reverence him, to repent and come to him, *Psalm 136. Hosea 2. 5. Rom. 2. 4.*

2. His compassion teaches me to feare him, *Psalm 103. 13.*

3. His Covenant teaches me to trust in him, and to resemble him in keeping my covenants.

Reflections.

Here four things may be considered;

1. *The Rain-bow's generation.*

2. *The Rainbow's figure.* 3. *The Rainbow's colour.* 4. *The Rainbow's use.*  
 First, his generation is from the watry Cloud, when the Sunne shines on it: the cloud being spongy and full of holes; the beams of the Sunne reflecting, cause the Bow to appear in his bowels; the red comes from the upper part of the cloud, the Greene from the lower part, the blewish from the middle of the cloud, as some observe.

Secondly, his figure, a semi-Circle or mercifull Bow, for the backe is upward, the two ends bowes towards us; it is made not to kill us, but to comfort us.

Thirdly, his situation; it is alwayes opposite to the Sunne, therefore not seen in the South, but if the Sunne be in the East, then the Bow is in the West, &c.

Fourthly, the apparition, the time of the day; never in the night, onely twice in y<sup>e</sup> year, as some gather from *Job 38*. If the Bow appeare in the morning, fair weather follows, if in the evening it is a signe of fair weather.

Finally, what use to make of the Rain-bow.

1. We seeing the Bow should praise God with feare, he will not drowne the world, therefore praise him; but he will consume the world with fire, therefore feare him; there is the blue colour which signifies water, the red which signifies fire, we may sing of mercy and judgement. *Psalm 124*.

2. To acknowledge his truth, God hath kept his covenant since the beginning; he keeps his covenant with all creatures, he will not faile his covenant with his elect children.

3. The Rain-bow hath being and beauty from the Sunne.



Sunne: so have Christians all their excellency from Christ.

4. We should at the sight of the Rain-bow admire Gods mercy, he for a moment was angry, but his mercy is continued, and shall continue for ever; the deluge was but a little time, the Rain-bow for longtime, yea till the end of time.

*Fourthly, resolves concerning the Rain-bow.*

Was the Rain-bow before the flood?

It is probable there was, because there was Sunne and Clouds, whence it is generated; but how it is a signe of the covenant.

How will God remember Noah when he seeth the Cloud?

It is spoken after the manner of men: when we looked up and remember, we may be sure God doth not forget.

Why did God chuse the Bow to be the signe of the Covenant?

1. Because the Bow signifies moderation, it is obvious in open view, 2. there is neither arrow nor sting, shewing peace and reconciliation, which is the effect of the Covenant; 4. the Bow is placed in the Clouds to assure us, we shall no more be drowned with water that commeth from the Clouds.

How is Christ and the Rain-bow alike?

1. The Bow is begotten of the brightnesse of the Sunne; so is Christ of the substance of his Father, light of light from all eternity.

2. The Cloud makes it somewhat obscure, so Christ was veiled under our flesh.

3. The generation of the Rain-bow is wonderful, so is the generation of Christ.

4. In the Rain-bow are three colours, so in Christ are 3. offices, King, Priest, Prophet.

5. The Rain-bow comforts us against the feare of

*Quest. 1.*

*Ans.*

*Quest. 2.*

*Ans.*

*Quest. 3.*

*Ans.*

*Quest. 4.*

*Ans.*

water, so Christ comforts us against the feare of Gods wrath.

6. As the Rain-bow compassed the Throne in Rev.

4. so Christ compasseth his Church by his divine providence.

7. As the Bow is in the Cloud to the end of the world, so Christ is manifested in the word and sacraments to the end.

Sect. 8.

Eighty, *Reflexes concerning the Clouds.*

Quest. 1.

What meditations be usefull when we looke on the Clouds?

Ans.

1. To praise God for his goodnesse in giving us raine by them.

2. To remember Christs ascension, he ascended in a Cloud.

3. His coming to judgement, which shall be in the Cloudes.

4. To have sinne which hinders our apprehension of Gods favour, as the Cloudes hinder the light of the Sunne.

Quest. 2.

Iude 12.

Ans.

How are seducers and hereticall teachers compared to Clouds without raine?

Because they have seemings, not substance.

1. They pretend immediate revelations, which proves phantasticall delusions.

2. They often pretend great reading and learning, but being tryed, prove very shallow and ignorant.

3. They seeme holy and pure, carry themselves with a smooth modestlike behaviour, but are conceited, and of Luciferian spirits, & provocations like the flint, (which the flint) makes them to sparkle.

4. They pretend great love, and give many good lodgings: but their intent is to gull them, and to draw them from the truth.

9. They

5. They pretend it is truth they doe deliver, and that others doe not or dare not speake truth, but it proves erroneous; and then they say they were mistaken, or they alter and mince their former sayings.

6. They pretend private conventicles, because they say truth is not taught publickly, when the cause is they cannot get applause with the learned: (they discover them) so they get the unlearned and unstable in private, whom they hoodwink: so all goes currant; their lies, and errors, and falsehoods; thus they are Clouds without rain, shewes without substance.

Why doe Divines compare the examples of the godly to the pillar of fire and cloud, betweene the *Israelites* and *Egyptians*.

Because they that followed the darke side were drowned, but they that followed the bright side were saved: so those looke to the errors of the Saints, to follow them are like to perish; but those which looke to their vertues to imitate them, these have good evidence of their salvation.

Why is the embleme of charity a naked boy in a cloud, with a smiling countenance, feeding a Bee without wings.

1. The nakednesse signifies, a lmes must be in simplicity: 2. The cloud signifies sincerity: 3. The smiling countenance doth signifie chearefulnesse: 4. The feeding of a Bee without wings signifies discretion, to relieve one that would worke like water bulby.

How did the Cloud in the wilderness (that guided the children of *Israel*) differ from all other Cloudes.

1. In the production, other clouds arise from naturall causes, as vapor or exhalations; or both; but this cloud extraordinary by a divine power, not the ordinary way.

2. In the forme and fashion there is difference; this cloud was like to a pillar, the lower end descended to-

Quest. 3.

Ans.

Quest. 4.

Ans.

Quest. 5.

Ans.

ward the Tabernacle, the upper end ascended up toward he aven: other clouds spread abroad and scatter,

3. In the motion, this cloud moved gently, and stood when the *Israelites* rested, and their cattell baited; and this cloud went forward and came backward; other clouds are carryed swiftly with windes, and once gone, they never returne againe.

4. In the Scienation, this cloud was more to direct them: other clouds are more aloft, and give no direction.

5. In the continuance; other clouds doe divide and scatter, and alter their figure and shape: but this cloud kept his figure and shape for forty yeares together.

What is the difference betweene mists and clouds?

Quest. 6.  
Answ.

The cloud hath his rising from the water or earth, or both, and ascending into the middle Region of the aire, the cold makes them more thicke and grosse, which were drawne up thinne and invisible: the mists are drawne up in like manner, but not so high, nor with equall strength: so the mist fills the aire with grosse vapours, and so descend, as the clouds ascend.

Quest. 7.  
Answ.

How high are the clouds from us?

Those exercised in Geometrical demonstration doe vary in their opinions: some say fifty miles, some nine miles, some three miles: but it is a question whether they account the distance from the vallies, or the mountains: we may conclude they are not farre, wee see them so plainly: the most likely are, they are some nine or tenne miles from us.

Quest. 8.  
Answ.

What is the naturall cause of the thunder in the cloud?

When a hot and dry exhalation meetes with a cold and moyst vapour in the middle region of the Aire, and being pender in a cloud, there they fight, so the heate breaks out, sometimes with more violence, sometimes with lesse, according to the quantity of the matter, or strength of the cloud, called the voyce of God. *Psalm 119.*

## Of the Raine.

1. Of the naturall cause of the raine.

2. God doth dispose of the raine.

3. Why raine is kept from us.

4. How to obtaine raine.

5. The benefite of raine.

6. Resolues concerning the Raine.

## First, of the naturall cause of raine.

**T**he naturall cause is, thus: the Sunne exhales moyst vapour up into the aire.

The Aire hath three Regions: the first is very hot neare the element of fire; the second is very cold, because the Sunne beames gliding and passing through it, they have not a reflexion so farre backe againe; the lower region more warme, by reason of the Sun; hath reflexion from the earth. Now in the middle region are degrees of coldnesse; the most extreame lends haile, the next snow, the next most temperate raine.

Let us from this naturall cause looke higher to that God, which orders nature: and gives power and vertue to the creature. It is hee that covers the heavens with clouds, (a) and causes them to drop downe fainelesse: (b) the earth is as Gods garden; the sea his Cesteme, the clouds his water-pots, exhalations raise them up, so with sweet showers he waters the earth.

Secondly,

Sett. 1.

An ascent.

(a) Pl. 147. 8.

(b) Pl. 65. 11.

Self. 2.

Secondly, God doth dispose of the raine, which appears by these five arguments.

Amos 4. 7.  
Deut. 28. 23.

1. **I**F he pleases, he can keepe backe the raine, *cobibui a vobis imbrem*, I have kept the showres from you, saith God: it is he that doth make the heaven as brasie, and the earth as iron. In *Elia* dayes God kept away the raine three years and sixe moneths. *Iames* 5. 17.

2. If God please, he sendeth the raine: *Deut.* 11. 18. *I will give you the raine of your land in due season.* *Zach.* 10. 1. Aske of the Lord, and he will give you rain. *Psal.* 147. 8. He prepareth raine for the earth.

3. He sends raine in his mercy and favour, when his sweet showres doe soften the earth, *Psal.* 65. 12. that food is brought forth for the beasts. *Psal.* 147. 8, 9.

4. He sends raine in Justice, as in *Noah's* time hee opened the windowes of heaven in his wrath. *Gen.* 7. 11. This way he both giveth meate abundantly, and also this way he judgeth the Nations. *Iob* 36. 29, 30, 31.

5. None other can give raine: not the heavens themselves of their owne accord, not the Idols of the heathen: it is Gods prerogative royall. *Ier.* 14. 22.

Self. 3.

Thirdly, why raine is kept from us.

1. **B**Acke-sliding hinders raine: the Prophet doth confesse it in time of great drought. *Ier.* 14. 7.

2. Flattering preachers, that cry peace, and sooth up the people in their sinnes, and tell them all shall be well. *Ier.* 14. 13.

3. The love of sinne. *Ier.* 14. 10. They loved to wander, therefore came a drought.

4. Not harkning to the word of God; when men have no list, no obedient eares to heare: this restraines the raine. *Deut.* 28. 15. with 23. verse.

5. The



5. The sinne may bein the Magistrates, when as justice is not executed. *1 Sam. 21. 1. 6. 10. verses.*

6. Notorious wickedesse, when men out-strip their fore-fathers; especially in unlawfull marriages, and Idolstry; this restraines the raine. *1 Kings 16. 30. 33. 34. 35.* compared with *1 Kings 17. 1.*

*Fourthly, the means to obtaine raine.*

Sec. 4.

1. Confession of finnes and humiliation: this course *Jeremiah* tooke. *Jer. 14. 7.*

2. Prayer; this way *Elias* prevailed. *James 5. 16* in *Zach. 10. 1.* Aske of the Lord raine.

*Arguments in prayer.*

1. He is a God hearing prayers. *Psalms 65. 2.*

2. He hath heard others heretofore. *Psalms 22. 6.*

3. He is a Saviour in trouble. *Jer. 14. 8.*

4. Begge for his owne sake. *Jer. 14. 7.*

5. He is a God in covenant. *Jer. 14. 21.*

6. Because it is for his owne glory. *Jer. 14. 21. 22.*

3. A third meane is, that justice be executed to cut off those which trouble *Israel*, and punishes when man is too remisse: judgement executed on earth, brings downe raine from heaven. *1 Sam. 21. 6.*

4. A fourth meane is to be diligent hearers, and lovers of Gods word, and to become obedient in sincerity; then God will give raine. *Deut. 11. 13. 14. Deut. 28. 1.* compared with the French verse. By the drought God intends our conversion and reformation. *Amos 4. 7. 8.* that being wrought, we are capable of raine and all blessings.

*Fifthly, the benefit of raine.*

Sec. 5.

1. The Raine softens the earth. *Psalms 65. 12.* then the husband-man sows his plough to worke.

2. The Raine makes the come and grasse and herbs,

H b

and

and plants to bud and grow, to blossom and beare fruit.

3. It refresheth the earth, as drinke doth man: thus it quickeneth the wilderness, where man doth not inhabit.

4. In Cities the Raine washes our cities, and cleanses and sweetens our streetes. The Dutch-men use rainewater to dresse their clothes to much good, and is so welcome, that it makes men sing for joy. *Psalm 65. 13.*

Self. 6.

Quest. 1.

Ans.

**W**Hat are the uses we may make when we see the raine to fall?

1. To acknowledge God that doth send it.
2. If we have prayed for the raine, then
3. We should observe the Lord is a God hearing prayer.

*Psalm 65. 3.*

4. To love the Lord for hearing us. *Psalm 116. 1.*
5. To tender humble praises to the Lord.
6. To take encouragement to pray at other times, for other things.

7. If the raine fall unseasonable and immoderate,

1. We should humble our selves before God.
2. Intreat the Lord to shut the windows of heaven.
3. Renew our repentance, and forsake our sinnes.
4. Covenant with God not to abate the fruit of the earth by excess and wantonness.

5. When we see the raine to fall on the earth, we should fruitfully remember the word is like the raine, which we hearing often, according to our obedience we should be blessed, and for disobedience accursed.

How may the raine and Gods word be compared?

1. The raine softens the earth. *Psalm 65. 10.* so the word of God doth soften the heart. *1. Kings 18. 41.*

*Isai. 55. 10, 11*

*Heb. 6. 7, 8.*

Quest. 2.

Ans.

2. The raine causeth gladness: *Psal. 65. 12, 13* so the word brings great joy. *Psal. 119. 105. Jer. 23. 18.*

3. Raine makes fruitful: *Psal. 147. 8.* so doth the word of God, falling on an honest heart. *Matth. 13. 23. Heb. 6. 7.*

4. Raine falling on a lump of earth, discovers which is earth, and which is pibble stones: so the word discovers and manifests what we are. *Heb. 4. 12.*

5. Raine washes and cleanses when it comes: so doth the word, it sanctifies and cleanses. *John 17. 17.*

6. Raine cooles us when it comes: so doth the word, our hot lusts by it are allwaged, our hot affections allayed, our hot tentations quenched. Thus the word and raine are fitly compared together.

How was the heathes and grasse, and trees flourishing without the raine?

1. God is not tyed to secondary meanes, he can give light without the Sunne, and cause grasse and the heurbs to flourish without the raine.

2. There was that which was convelant to the raine. *Gen. 2. 6. vapor ascenderat a terra*: a mist ascended from the earth: but some read there was not a mist to eill the earth, nor a mist had ascended from the earth, then the first and wter lyes.

3. The waters lately had covered the earth, and it might yet be without raine.

What be the fruits a Christian brings forth, on whose heart God hath rained graciously?

1. To God he bears the fruits of prayer, confidence, remembrance, love, feare, and subjection.

2. To men he brings forth the fruits of justice, and mercy, and peace.

3. To superiours he bears the fruits of reverence, obedience, and faithfulness.

4. To his family, his fruit is example, and instruction, and provition.

ed y e a n i i f  
and modu w

Quest. 6.  
Answ. Item 2.  
171

"had not

how would I  
model need  
of. and 2  
B. p. 100

Quest. 4.  
Answ.

5. Item 2.  
171

8. Item 2.

† If it may be  
without sin.

This is a high  
poynt.

Quest. 5.  
Answ.

\* That is with  
their labour:  
as Gen. 30. 30.

Quest. 6.  
Answ.

Quest. 7.  
Answ.

Quest. 8.

5. To the godly a desire of them, a delight in them, studying their good, pleading for them.

6. To the poore compassion; counsell reliefe.

7. To enemies meekness, forgiveness, prayer for them.

8. To neighbours, like affection, kindnes, sociableness.

9. To friends faithfullnes, gratitude, requitall of favours, regard to their posterity.

10. The fruits concerning our owne good is,

1. To be loath in fault and repentance.

2. To increase in heavenly mindednes.

3. To get more assurance, peace and joy:

In outward things.

1. To use them as things which have no

2. To be diligent in the particular calling.

3. Out of earthly objects not to be winding the minde to holy things.

Is there any countrey where it raine not at all?

The land of Egypt being under Zona Torrida, hath no raine; unlesse in the Northerne parts some small showers; yet the Lord affords them the river Nile, which waters their Land by the flowing thereof: *Egyptus sola inter regiones hyemem ignorat*: Egypt alone of the regions knowes no winter: there Israel sowed their seed, and to water it with their feet, (*Sicut hortum*) as a garden of herbes, *Deut. 11. 10.*

What is the hoarie frost?

It is the dew that falls in the night, so being frozen it is called *Candies* for whitenesse, *pruna* for coldnesse, a hoarie frost, *Psalm. 147. 16.* compared to ashes for likenesse.

What is the cause of the haille?

The vapour is carried to the highest place of the air, where the most extreme cold is; the drops frozen fall in little round stones.

Seeing there is no raine in Egypt, how could it have so much there? *Exod. 9. 23.*

It was supernaturall and miraculouse.

1. It was over all the land; whereas it never rained over all the land before.

2. It was deadly to them in the field.

3. It was mixt with fire, yet the fire did not melt the haile-stones, nor the haile-stones quench the fire; three elements were against the *Egyptians*, the fire in the Lightning, the thunder in the Aire, the water in the Haile.

What is the naturall cause of the Snow?

The vapour is exhaled in the lower part of the middle region of the aire, not so high as the place of hailes; and having some heate blended with it, that makes it spread, ~~to make it spread~~ and not high enough nor cold enough for haile: it is more hard and dry then water, and it falls downe without stay if it come before a frost, it preserves the blade from nipping off, and nourisheth the hearbes, and by heate it doth melt and descend to the rootes: the Snow water is of a binding nature, bad to drinke usually, for it will cause a botch under the chin, and benumbe the members and fatten the stone in the bladder.

What is the commodity of the frost?

1. It striketh and forceth the Naturall heate to descend to the rootes.

2. It kills the wormes which hurt the earth.

3. It brings us store of wild fowle.

What is the reason such great drops of raine do sometimes fall?

Then they are from the cloudes neere us, the vapour is hot and moist, and dissolved before the ascent bearte from us; so it falls in some countries in great plashes, with us in great drops. The cloud doe part that were gathered together, so are quickly dissolved, usually it is heate comes with these great drops.

How are waters and afflictions alike, the stormes and

*Ans.*

\*Since Nees flood.

*Quest. 9.*

*Ans.*

*Quest. 10.*

*Ans.*

*Quest. 11.*

*Ans.*

*Quest. 12.*

raine waters I mean.

1. Waters come not out of the dust, but from above, so afflictions come out of the dust, *Job 5. 6.*

2. Waters fall on all alike, *Matt. 23. 35.* so afflictions come like to all, *Eccles. 9. 2.*

3. Storms for the present are grievous; so are afflictions for the present, *Heb. 12. 11.*

4. The showers doe wash, not wound us, so afflictions doe cleanse us, not hurt us.

5. When the storme is past the sunne shine is welcome, so is prosperity after afflictions: so much of the Raine.



## Of the Earth.

1. Of the diverse names given to the earth.
2. Of the scituation and place of the earth.
3. Of the fashion and forme of it.
4. Of the nature and quality of it.
5. Of the substance and dependance of it.
6. Of the quantity and greatness of it.
7. Of the riches and fruitfulness of it.
8. Resolves concerning the earth.

### First, Of the names given to the Earth.

*Sol. 1.*

1. It is called (*Terra*) earth, *Gen. 1. 1.*

2. It is called (*Arida*.) dry land, *Gen. 1. 9.*

3. It is called (*Tellus*.) earth or ground.

4. It is called (*Humus*.) moist earth, the Greek *γῆ* vel *γῆν*, is used for earth, with *Terra*, *Tellus*, *Humus*.

5. When





union with Christ: I may have relation to him who is on high, though I be below. The Sunne in the Heavens communicates his light and heate to us below, the foote participates with the head by vertue of corporall union, though the foote being on earth, the head in the aire.

Self. 3.

Thirdly, *Of the fashion and forme of the Earth.*

It is for forme and fashion, not a triangle nor square, nor long, nor a semicircle, but round, called in *Psalm* 93.1. and *Psalm* 96.10. and *Psalm* 98.7.

*Orbis habitabilis.* An Orbe for roundnesse and in *Isai.* 40.22. it is called a Circle; men usually call it the Terrestrial Globe, as heaven is called the Celestial Globe, and as Astronomers doe attribute five Circles to their Celestial Globe; so Geographers make as many in this Terrestrial Globe, they have their five Zones, the hote Zone, and the two extreames for cold, and the two temperate Zones: so then the earth is a round Globe.

The Equinoctiall, The Arcticke, The Antarticke, The Tropicks,

Reflexion.

1. This calls for my delight: I can with delight look on the effigies of mans making: why should I not, I look on the Globe of Gods making? I look on mans little Globe with the eye of my body, I contemplate Gods great Globe with an act of my mind.

2. This Globe is Gods Theatre, whereon all the inhabitants are actors; here are acted daily sinfull, civil, pious acts; and the exit of every man is from this Globe is to a bottomlesse pit, or to the new Ierusalem, which is foure square, firme and sure: with what feare and care shall I act my part, that it may be said, well done.

Mat. 25. 23.

Foundry

Fourthly, of the nature and quality of the earth.

Señ. 4.

1. It is dry.

2. It is cold.

3. It is heavy.

**I**T is drye of it selfe, for though it be called, *Humus*, moist earth, yet it is not so of it selfe, but an adjunct of water; for of it selfe it is *Arida*, dry land. *Gen. 1. 9.*

Also the earth is cold of it selfe, as we may perceiue in Cellers, and where men digge deepe, and in shady places where the Sunne doth not come; also the body of a dead man is cold, which is of earthy matter.

Lastly it is heavy; a basket of earth on a mans shoulders is heavy; and we say of a man who is of a heavy disposition, that he is lumpy, that he is like a heavy lump of earth.

*Reflexions.*

I am dry by nature, being made of earth, without all spirituall moisture: whatsoeuer I haue, it is added to me, but it comes not from me: but all grace that softens and makes pliable, comes from him who powers out his Spirit on his seruants, and in the wilderness waters broke out, and streames into the deserts. *Isai. 35. 6.*

2. I am as earth, cold, without the heate of zeale and love, benumbed, and without life and vigor: it is Gods Spirit comes to kindle in my heart, the fire of true zeale, and the heate of charity.

3. I am heavy earth and lumpy, in all holy duties, wanting spiritualneesse, untill God revives mee, I cannot rejoyce in him, *Psal. 85. 6.* till he quickens me, I cannot call upon his name, *Psal. 80. 18.* I cannot give first to him, *Rom. 11. 35.* I am but a lump of sinfull earth, and can doe that is euill, but nothing that is good: it is God who workes all my workes for me. *Isaiah 26. 12.*

Driness should cause me to thirst for a present suitable large satisfaction. Coldnesse should make me shiver and labour for heat; and lumpishnesse should provoke me to pray to be quickened according to Gods loving kinnesse. *Psal. 119. 88.*

4. I much rejoyce in hope and remembrance of the day, when all heaviness and lumpishnesse shall fly away, and my body shall be raised, so as it shall become spirittuall. *1. Cor. 15. 44.* we shall then be *(as Angels)* like the Angels. *Mat. 22. 30.*

*Self. 5.*

*Fifthly, of the earths substance.*

**T**Hough it hangs in the aire, yet it is upheld by a divine power. *Job. 1. 5.* No creature is independent. God hath made the earth, and hangs it upon nothing. *Job 26. 7.* The earth at first had being by the power of God, and stil is supported by the same power to this day.

*Conclusions.*

1. There be many things man could yet never attain unto: as First, the perpetuall motion. Secondly, the philosophers stone. Thirdly, fire incombustible. Fourthly, make a heavy thing hang in the aire: so that wee may say of God there are no works like thy works. *1. Job. 86. 8.*

Men have tryed, and could not effect their desire, but if God but speake it is done. *1. Job. 3. 19.*

2. The earth is upheld by God, without supports and secondary helps: Oh that I could trust in God with all my heart; *Prov. 3. 5.* then though I often trouble mee, yet the Lord will support mee. *1. Psalm 127. 10.*

*Self. 6.*

*Sixthly, of the greatness of the earth.*

**T**He earth is great, simply considered, yet but small comparatively: as the Center is small, compared

with the circumference: of old they held the compass of the earth to be 50000 miles, as *Strabo* & others held it 36035. Some differed from them and guessed it 21500. But of late, those which have compassed the whole Ocean, doe say it is 19980 miles, the Diameter 7000 from us to the Center, 3500 miles.

*1. An elevation.*

1. The great globe of the earth is but a little point, being compared to the heavens, and my portion in it but a little, being compared with the whole: and if I had it all, it could not be a sufficiency to my mind, nor could my enjoyment belong. O that God would unglue my affections from this little, and enlarge them toward his owne greatness.

*2. A contemplation.*

2. I was once nine moneths contained in a little room, and I have forty years borne contained in this little world: I am much enlarged by coming from the womb to the world: there I had reason potentially, and a life of obscurity: here I see a bright Sunne and Moon, and Stars, a earth, and waters, and innumerable creatures for my admiration and delight: and service my life in the next world nature, yet further exalts: and thus my life, now exceeds my life in the womb: I come from a little womb to a great world, I go from a little world to a great heaven, which the great God of his great love and mercy will bestow on them, which shall greatly be satisfied with it.

*Seventhly, of the riches and fruitfulness of the earth.*

So. 7.

**T**He earths riches, are first *latent*, lying hid, secondly *appent*, being open.

The riches that lye hid, are among the rest these: the sand pit, the clay pit, the cole-mine, the slate for tiles,

(a) In Scythia,  
vel Persia.

(b) In India,  
vel Arabia.

(c) In Scythia.

(d) In Ethiopia.

(e) In India.

(f) Neare the

red sea,

There is the

Gold, Silver,

Brasse, Coper,

Peuter, Tin,

Lead, Quick-

silver, Brim-

stone, and

much hid

treasures.

the quar-stone, the free-stone, the marble, the Jet, that  
drawes to it the straw, the Adamant, that drawes the  
iron: there is the rich Diamond, the Greene Jasper, (a)  
the glittering Sapphire, the fiery Calcedony, the Sard-  
nixe, (b) like to the colour of a mans nail: above, be-  
more red beneath, the Greene Smaragdus, (c) comfort-  
ing the eyes, the red and soft Sardin, the gold shining  
Chrysolite, (d) the Skie-coloured Beril, (e) or it is a watry  
colour, and six square, the green, or sea-green Topaze, (f)  
shining in darknesse, the Greene, and gold-like Chryso-  
phrasus, there is the purple Hiacinth, the Amethyst of  
the same: or a violet cooler, with many other; but  
I am dealing in hid treasures, and must cease.

The riches of the earth, that are patent, open, and ma-  
nifest, are grasse, hearbes, flowers, come, and trees.

The grasse for the plenty and use, the hearbes for  
foode and physike, and medicine, the flowers for vari-  
ety, colour, and smell, the trees for shade, timber, and  
fruit, the come for to make bread, time may permit to  
handle in severall meditations. I said: vnto 30. to 50.

Applications.

1. I may raise my mind to the Lord, and say, the earth  
is full of thy riches, *Psalm 104. 14.* it is full, but how  
I cannot tell, but this I am sure God is the owner of  
for the earth is the Lords, and the fulness thereof. *Psalm*

24. 1. and Christ which is the heire of all things, *Coloss.*  
is now said to bee worthy to receive power and riches.  
*Rev. 5. 12.* God is a rich God, Christ a rich heire. all  
his, and we on earth, are but stewards. *1. Peter 4. 10.*

2. The earth is rich within, and fruitfull without.  
I would I were like it, to have inward graces, outward  
fruits: *The Kings daughter is all glorious within, and*  
*also without. Psalm 45. 14.*

3. If earth be so rich, what is heaven, the best of all  
here are Gold and Pearles, and pretious stones; what  
there are the walls, the gates, and the pavement of the

Hof. 2. 8.

Dispensator



streete, *Revel.* 21. 19. &c. the riches of heaven, we have no riches to resemble them, no conceits to apprehend them: Oh how great is the goodnesse hid and laid up *Psal.* 31. 20. I may admire it, and hope for it, and wait for it; and that may comprehend me, for I cannot comprehend it.

4. The riches of the earth are obtained by labour and industry, for the hid treasures men digge and search, *Prov.* 3. 4. and for the outward treasures men plough and plant, and graft, and prune, and water, and take pains: for the diligent hand makes rich, and in labor is abundance; then I must not thinke to be idle in the earth, nor to gaine spirituall riches without industry, and pains, and labour.

Eighthly, *Resolves concerning the earth.*

**H**ow can the huge heavy earth hang in the aire upon nothing, and yet stand firme?

The earth is upheld by the mighty power of God, and the nature of all earthy substance pokes towards the Center, so it all bending thither, it chings together firme and stable, as a man clenching his fist, his fingers are fast and steddie.

How did the dry-land appeare? *Gen.* 1.

1. God made the mountaines to stand up, whereas the earth was plaine before.

2. The waters gathered to one place at Gods command, so the dry land appeare.

Is the earth or the seas the highest?

1. The earth, for all rivers runne into the sea; because naturally they runne downward.

2. Were the sea higher, then would faine fire more swift to the Land, than from it.

3. Were the sea higher, then going fast on it with ships, the earth would be the plaine discerned.

Self. 8.

Quest. 1.

Ans.

Quest. 2.

Ans.

Quest. 3.

Ans.

4. Men are said to goe downe to the sea in ships.  
*Psal. 107.*  
*Objct.* In *Psal. 104. 6.* the waters stood above the mount-  
 taines.  
*Ans.* It was spoken of the creation, before God separated  
 the earth from the waters.
- Quest. 4.* Doth the earth turne round, and the heavens stand still,  
 as one of the Philosophers pleaded?  
*Ans.* No, for the Sun runneth his race, *Psal. 104. 19.* and the earth  
 hath foundations, therefore it standeth fixed, *Prov. 8.*  
*29. 24. Job. 9. 6. 3.*
- Quest. 5.* What may we thinke of *Archimides of Siracusa*, who  
 was of opinion, if there were another globe to place his  
 engine, he could move the earth?  
*Ans.* 1. An Inginiere hath some ingredients of madnesse,  
 saith *Strabo* in his observations.  
 2. The Text saith the contrary, *Psal. 104. 5.*  
*Quest. 6.* How did the Geographers divide the earth?  
*Ans.* Into foure parts: First, *Africa*, where the *Bahar*  
*and Ethiopians* doe inhabit. Secondly, *Asia*, which  
 is divided into two parts: *Asia* major, which is parted  
 from *Europe* by the Scythian river *Tanis*: *Asia* mi-  
 nor, where were the seven churches *S. Iohn* was unto.  
*Revel. 1. 11.* Thirdly, *Europe*, divided from *Africa*  
 with the *Mediterranean* sea, and from *Asia* with the  
 aforesaid river *Tanis*: England and Scotland are the  
 two greatest Iles which lye North ward. The fourth is  
*America*: first discovered in 1492. by one *Columbus*,  
 servant to the King of *Castile*, and 7  
 yeares after it was nominated *America* of *Americus*  
*Vesputius*. Here is new Spaine, new England, *Virginia*,  
*Burmodus*.
- Quest. 7.* How is it, that bloudy men enjoy so much of earth-  
 ly possessions?  
*Ans.* They are Children by creation, *Lev. 25. 44.*  
 2. They doe some outward services.

3. They are very industrious for these things, being children by creation they have an earthly portion, for outward services they have out outward rewards; their industry and labour is recompenced with terrestrial good things, as the maine they aimed at, and did pursue with their strength and might.

Have wicked men a right to earthly things?

That is given them they have a right unto. *Psal.* 115. 16. the earth is given to the souldes of men: To take from a wicked man any of his goods, under a pretence he hath no right to them, or to deny payment of debt for that cause, is phantasticall.

To say he is an usurper, leave that to be debated betweene God and him, as the case stands betweene us and him: let us give to all men their due, *Rom.* 13. we may not take a paynt from a *Turkey* host on the shore layd out: nor deny payment of a debt to him, pleading he is wicked, and hath no right.

*What place of the earth was Paradise?*

The place is guessed at, by the names of the Rivers which are mentioned to runne through it; but the deluge of waters in the dayes of *Noah*, deprived the men on earth of the beauty of it, and when the place is dispersed, yet little is concluded.

What lessons doth the Earth teach us?

1. To be patient: the Earth beares all.
2. To be fruitful: the earth abounds with fruites.
3. To be thankful: the Earth receives all.
4. To be content: the earth is reasonable.

Our patience brings us much inward peace.

Our fruitfulness, evidences we have life in us.

Our bounty and doing good, wins others.

Our constancy brings us from duty, to reward.

Why have the godly for the most part so small a portion of earthly things.

1. They enjoy God, which is the best satisfaction.

*Quest. 8.*  
*Ans.*

*Quest. 9.*  
*Ans.*

*Quest. 10.*  
*Ans.*

*Quest. 11.*

*Ans.*

*2. God*

2. God keepes them short, as Birds wings are clipped that they may not flye from him.

3. They bend their chiefe studies and endeavours for saving grace, and spirituall riches.

4. God gives portions heere to wicked men, *Psalm 17*, but he reserves for them an heavenly inheritance.

*Quest. 12.*

*Ans.*

What are the markes of an earthly man?

1. When he awakes, hee minding earth.

2. He is over-joyed if he winnes earth.

3. He is over-grieved if he looses earth.

4. He esteemes them the onely wise men that be wise for the earth, to get great estates.

5. Hee opposes the powerfull preaching of the word, and the heavenly minded Christian.

6. He is loath to heare of going from the earth.

7. His delightfull discourse is most for the earth.

8. He is never wearied in studying and in labouring for earthly things.

9. Hee is never satisfied, but still desires more.

10. He is unwilling to part with earth, though God and his Conscience, and the poore call for it.

*Quest. 13.*

*Ans.*

How should wee carry ourselves being inhabitants on the earth?

1. Labour to be Saints on earth. *Psalm 16. 3.*

2. To consider we are strangers on earth. *Psalm 119. 19*

First we should labour to be Saints on earth.

1. By yeelding to the Ministry of the word; which although others are not wrought on, yet the Saints are gathered glued together, and grow up into one body, by the Ministry of the word. *Ephes. 4. 11.*

2. By separating from all grosse finnes in the act, and from all smaller finnes in the allowance.

3. By dedicating our selves, and giving our selves to God. 1. Speedily, without delay. 2. Totally, without reservation. 3. Resolutely, against opposition. 4. Constancy, not revolting.

Secondly,

- gains was Secondly, as strangers on the earth.
1. We should freely acknowledge we be strangers.
  2. Use this world moderately. *1. Cor. 7. chap. 31.*
  3. Expect some wrongs, no preferments.
  4. We should much praise God, for our comforts here.
  5. Forget that behind, and endeavour towards that before. *Phil. 3.*
  6. To do good now, *Gall. 6.9.* be ready to depart. *1. Peter 1. 10. 13.*

For our encouragement in the way.

1. Our Pilgrimage is not long. 2. We have company. 3. We shall be provided for. 4. We have a guide. *Psal. 119. 105.* 5. We have attendants. *Psalme 91.* 6. A Heaven to receive us.



Of the Water.

1. Of the Etymology, and also the original of waters.
2. Of the kinds of Waters.
3. Of the usefulness of Water.
4. Resolves concerning Waters.

**F**irst of the Etymology of Water, and the original of them: The Latin *Aqua*; some do derive it from *aqua*, *quasi a qua vivimus*; vel *a qua omnia fiunt* by which we live, or of which all things were made: Others will have it, *quasi aqua*, because nothing more equal and smooth then water, when it is not troubled. *Adam* named many of the Creatures, but God he himself gave the name to the Waters: in the generall, *Gen. 1. 8.* And the gathering together of the Waters, he called Seas, he gave the name to the Rivers. For their ori-

Sett. 1.

Lodwick Row-  
lee D. of Phy-  
sicks

ginall, we read of them as soon as we read of any thing, the Spirit of God moving on them: the Barin to appear out of them; the waters are honourable for antiquity.

Sett. 2.

*Secondly, the kinds of Water.*

**T**He kinds of water are many, there is salt water, and fresh water; the Sea water, and the River water, Well water, Raine-water, Snow-water; the Water in Bathes, there is Water of divers wonderfull operations, some Water is sayd to kindle a torch; some to make the Sheepes wool blacke that drinke it. The Spav doe intoxicate the brains; some Waters are reported to be so cold, that they turne Leather-gloves, and balisambloes. I have seene Cheefe, and Wood, and a Toadstoole turne to stone, I judge it can be by such like water. In *Bath* are Springs that helpe memory; some waters make Women barren; one River is reported to be bitter and salt thrice a day. In *Arabia* is a fountaine which casteth up all heavy things put into it. In *Phrygia* are two Fountains, one makes men laugh, the other makes men cry; there is a river in *Bythinia*, which tomentes perjured persons being put into it; amongst us some water will make Soape, and some will not; some water will make beards drinke then other. At *Bath*, the water springs always hot. In *France* is a river with the which a Scarle is dyed, excelling other colours; the variety of Waters, requires a Volume. I only take an abridgement, and a taste of touch.

Sett. 3.

*Thirdly, of the usefulness of the water.*

**E**lements, it hath a priority above the other Elements, it pierces the aire and ascends to the Sunnes radiation, it devours the earth if it be not strong.



strongly kept in by banks; it quenches the fire; it hath great ability and therefore may be usefull: it carries our ships, makes fertile our grounds, refresheth and nourisheth man and beast, fowles and fishes: the trees live by the water, the earth upholds them; a rose bush upheld in water without earth, brings both leaves and roses as some affirme: some creatures live by water, but none without it, most live without fire but none without water: men, beasts, trees, and corn, cannot continue without water. It washes, and cleanses, and cooles, and refreshes: in peace, in warre, in sickness, in health, in the house, in the field, alwayes water is usefull. In conclusion: no water, no humane life, no Common-weale, no world.

Fourthly, Resolves concerning water.

What are those waters above the firmament? *Gen. 1. 5.*

They be the waters in the cloudes, above that firmament, where the fowles flye: called heaven, *Psalm 148. 4.* how heaven is diversly taken in Scriptures, reads before page 176. as every part of the water is called water, so every part of the firmament is called by the name of the whole.

What may we observe concerning the sea?

1. Gods bounty in filling it with fishes.
2. His power in keeping it within his boundes.
3. His providence, for commodities are in great ships, conveyed in great quantity and more speed, from one people to another, then could be by Camels or Horses, also the floods are as Innes for sea-faring men to refresh them.

How should they be qualified that goe to sea?

1. To prepare for danger; for at sea be rocks, quicksands, pirates, tempests.
2. To prepare for death, for there is but an inch or two alwayes betweene it and them.
3. To resolve to glorifie God when they doe see his great works.

Quest. 1.

Ans.

Quest. 2.

Ans.

Quest. 3.

Ans.

Quest. 4.

Answ.

What is the cause of the saltnesse of the sea?

Some thinke it is caused by the Sunne, that draweth from it all thinn and sweet vapours, to make raine, leaving the rest as the settling or bottome: others say it takes a saltnesse from the earth where it runnes; God hath made it salt, the meanes is hard to find.

Quest. 5.

Answ.

What is the cause of the waters ebbe and flowing?

One opinion is, there be exhalations under the water that moves it two and fro: others say the Moone causes the tides and ebbs: we sooner find it is so, then how it is so: Reason is like the Sunne, it discovers things under it, but darkens the things above it.

Quest. 6.

Answ.

From whence have the Springs and Rivers their originall?

Some thinke from the aire converted into water, they reason, in nature is no emptinesse, and in caves and hollow places of the earth is aire, which by cold is resolved into water: they give an example of Marble pillars which sweat, before it mines; but this is not an argument convictive: the water that is on marble stones is not aire transmutated; but rather exhalations of thin vapours which stick there, as the hoare frost sticks on mens beards and horses haies by a conuenance invisible: A more solide, infallible answer is that of *Solomon*; *Eccles.* 1. 7. all the rivers runne into the Sea, yet the Sea is not full; unto the place from which the rivers come they returne and goe: so then the sea, not the aire, is the originall of the Springs: *Solomon* is to be preferred before *Aristotle*.

Quest. 7.

Answ.

Why are some Springs medicinable?

Gods goodnesse is such, he gives verue to the creatures for mans good: the second aire causes the waters come through diuers mines of the earth, and lickes of them, and participate of them, and so become physick.

Quest. 8.

Answ.

What is the cause of the hotnesse of bathes?

Some suppose there are burning minerals like Mount

*Some*: others thinke there are mines of brimstone they passe through others, the tumbling of waters beating one against the other makes them hot; we must be content to leave it to *physians*. God has knowen a way to let us be thankfull for the effects; when we find not the cause.

Whether are the most excellent, the fishes in the waters; or beasts on earth?

In the generall the beasts; for they have more perfect senses; converse more with men; are more docible, and serviceable.

Were fishes made of water onely?

It is probable the fishes were made of the four Elements; but the water was the most predominant; and the place of their habitation, generation and conservation.

Were the Birds created of the water?

It is thought not of the thickest of the water, but the watery vapour; air and water is predominant in birds; fishes in the water; birds in the air have a resemblance.

1. The elements they live in are clear and perspicuous.

2. The birds fly swiftly; so doth the fishes swim swiftly.

3. The birds have wings and feathers, the fishes have fins and scales. The bird guides his flying with his taile, so doth the fish his swimming.

4. There be some fishes make a prey of others and devour them; so too with the birds.

5. The birds that prey on others, doe not multiply so fast as those preyed upon; so not with fishes.

How are people compared to waters?

In five particulars read page 12.

How is the word compared to waters?

In six particulars read page 13.

How is the spirit compared to waters?

Quest. 9.

Ans.

Quest. 10.

Ans.

Quest. 11.

Ans.

Quest. 12.

Ans.

Quest. 13.

Ans.

Quest. 14.

Answ.

1. As water cleanseth from filthinesse, so doth the Spirit of God. *Ezek. 36. 25. 1. Cor. 6. 11.* we are washed by the Spirit: and made as new: and the old sinners are 2. Water refresheth, *Jed. 48. 15.* I will much in oile doth the Spirit revive and quicken our soules.

3. Water cooleth us: so doth the Spirit in the time of temptation.

4. Water makes fruitfull: so doth the Spirit enable us to bring forth fruit to God.

5. Those that have plenty of water: we judge them happy; so should we them that have Gods Spirit.

6. No water, no temporall life: so without the Holy Ghost no spirittual life.

Quest. 14.

How is he said never to thirst, that drinks of the water Christ gives? *Jed. 4. 14.*

Answ.

1. He shall never thirst out of an emptinesse.

2. He shall not thirst corruptly, to satisfy his lusts.

Quest. 15.

Answ.

Why is the sea called the Red sea? *Exod. 14.*

Some thinke because the mountaine and clifffes and sea beakes are red: others say the originall word *Suph*, signifies a Reede; abundance of Reed grow there: so is to be understood the Reddy sea.

Quest. 16.

Answ.

What water is best, and most wholesome?

The fresh water, that is most thinne, pure, and free from mixture, and which tastes of nothing but it selfe.

Quest. 17.

Answ.

How is Baptisme resembled to the *Israelites* passing through the Red sea?

1. The *Israelites* were as it were buried in the sea, yet arose at the shore: so in Baptisme we are as buried in sinne, and rise to a new life.

2. The *Egyptians* being drowned, could no more hurt the *Israelites*: so our sinnes in Baptisme being pardoned, cannot prevaile any more.

3. The Baptized *Israelites* all of them entred not into *Canaan*: nor doe all baptized Christians enter into heaven.

4. In the overthrow of *Pharaoh*, they were delivered from bondage: so by Baptisme we are delivered from the service of sinne and Satan, and vow warre against them.

5. The Israelites after they passed through the sea did feede on heavenly *Manna*: so Christians after Baptisme doe partake of heavenly mysteries.

6. As all the Israelites were baptized, *1 Cor. 10. 2* so all Christians have but one baptisme, *Ephesians* the fourth. So much of the waters.

## Of Fire.

1. Of the divers names of fire.

2. Of fire properly so called.

3. Of the qualities of fire.

4. Of the improper fire: first metaphoricall.

5. Divers resolutions concerning fire.

First, of divers names given to fire.

Self. 1.

Sometimes fire is attributed to God. *Hab. 12. 29*. Our God is a consuming fire: so Christ in purging the elect, is like a purging fire, *Mal. 3. 2*. and the holy Ghost is like fire, *Matth. 3. 11*. and the word is as fire to perplex the carnall, *Luke 12. 49*. and fire to try and examine mens doctrines, *1 Cor. 3. 13*. so all these are fire, *Psal. 66. 12*. And fire is that which is made with combustible things, as wood, *Job. 28. 2, 7*. and coales, *Isa. 54. 16*. But all fire may be ranked to two heads: proper, or improper fire: fire naturall, and fire metaphoricall.

Secondly,

Sect. 2.

Secondly, of naturall or proper fire.

1. Fire is hid and secret.
2. Fire appears alwaies with another thing.
3. Fire is alwaies in motion and working.
4. The fire is ascending upwards.

The effects of fire are in the third Section.

First it gives light. Secondly it gives heat. Thirdly it consumeth. Fourthly, it changes. Fifthly, it purifies.

Againe, fire  
Is not lessened by giving heat: it is encreased by adding  
fuell; it pierces by degrees; it is never satisfied.

First fire is hid and secret.

We see the earth and water distinctly: we feele the  
aire, but the earth lyes hid: it appears not of it selfe, we  
must take paines to get it, and care to looke to it when  
we have it.

Considerations.

1. How is naturall corruption like to fire: it lies hid: Lit-  
tle thought *Homer* that there had bene that wickedness  
in his heart, which after manifested it selfe. *2. King. 8. 13.*
2. As the Steele discovers the fire which lay hid in the  
flint, so doe occasions bring forth the corruptions which  
like fire lay hid.

For example,

1. A mans preferment discovers what was in his heart  
as we see in *Saul* and in *Herod. 2. Chron. 26.*
2. Affliction discovers a mans heart. *Psalm 8. 21. Rev.*
3. A mans penits discovers him. *Prov. 27. 21.*
4. Heretics discovers a mans corruptions that lay hid:  
he yeeldes when the lovers of truth shew themselves ap-  
proved ones. *1. Cor. 11. 19. Quod experientia docuit  
esse fidei, et periculis severa.*
5. So in grace hid and secret in the heart, as faith,  
love, and meeknesse, and patience: yes occasions



manifests the same; as *Joseph* chastity appeared by his mistress's temptation; and *David* loyalty, when he cut off the lappe of his masters garment; and would not kill him: we come to know the good and evil that is in ourselves and others by experience, and occasions will declare what grace, and what sinne is in us.

Secondly, *Fire appears with hands burning.*

The sparke staves not; unless ye nourish it with tinder or touch wood; then Brimstone, or wood, or coale, or paper, or match, or straw, or tuffe, or some combustible thing must shew it, preserve, and continue it.

*Consideration.* The fire of God's love.

1. How doth grace manifest it selfe with that it workes withall, like to the fire it comes from God, and is kindled in the heart; and then Grace is the fire and thoughts is as the fuell: Grace is the fire; and words is the fuell, Grace appears with duties of piety, workes of righteousness and Mercy.

2. That which appears with the fire, doth nourish it, and continue it: so Faith begets prayer, and prayer nourishes Faith: Joy begets strength, and strength preserves Joy: diligence it breeds assurance, and assurance nourishes diligence; faith begets works, and works confirm Faith, patience comes from hope, and hope prolongs patience, as fire breeds ashes, and ashes preserves fire.

3. So sin appears as fire in the fuell: Ignorance appears in pride, and pride will not be informed, but be ignorant still.

*Thirdly.* The fire of God's love.

Fire is alwayes in motion, ever working like the clock wound up, and pulles which alwayes beats: the fire ever goes forward, working on the fuell to turne it into his owne nature.

*Consideration.* On the subject where

So is Grace, ever operative, turning the subject where it is to his owne nature: it ever provokes a man to read

or pray, or fast, or weale, or exhort, or comfort others, or to crucifie them as owles. A man that hath Grace, is nevertheless, he is abusive Creature in his generall calling, or his pericular, or both, hee will endeavour to spread truth, and oppose error, and mortifie sinne in himselfe, and stop sinne, and bewaile it in others, he is alwayes in action, much in devotion.

2. Sinne in the unregenerate, is as fire ever in motion: In the iured they imagine mischief; being risen they ache it, they are resolved to do evill, and act sin with a great delight. *Pharisee* was a plotter against Gods people, and *Saul* breathed out threats, and procures letters and takes a journey; men will break their sleepe, and be at cost, and unwearied, and unsatisfied in the service of sin.

*In the fourth place.*

Fire ascends upwards, it being his natural motion, and disposition. Four ascends.

1. Speedily, as soone as it is kindled.
2. Simply, because naturall motion is strong.
3. Constantly, naturall motions are constant.
4. Easily, without compulsion.

5. If the flame be beaten down, or kept down, it breaks up againe as soone as that is removed that held it down, and strives all the time tis opposed and kept down.

*Considerations.*

1. What fire resemblance is between fire and true grace: Fire, the naturall motion is upward; so Grace makes the Soule ascend upward, to seeke the things above; *Col. 3. 1* and to make our Minds heavenly. *Phil. 3. 20.*

2. Fire hath a strong motion upward; so grace carries the soule to God with strength, *Psal. 42. 1* the soule thirsts for God: and thirst is the strongest passion. *1st. 17. 16.* St. Pauls spirit was stirred for God, *1st. 17. 16.* he could not forbear: so grace stirs the heart upward to mind things above; it makes men spirits servants, *Rom. 12. 11* fervens in spiritu; in Chast.

was strong in the Spirit, *Luke* 1. 80. hence Christians have deepe sighes, strong cries within them, earnest groanes and longing, strong and fervent prayers. *Psal.* 51. *Jam.* 5. 16.

3. Fire hath a constant motion upward: so grace is alwayes aspiring to the things above; when a man breakes off his flame he awakes with God. *Psal.* 139. 18. grace makes a man trust in God all the day, *Psal.* 25. 5. to call upon God continually. *Psal.* 86. 9. to set God alwayes before us. *Psal.* 16. 8. grace is thinking, devising, contriving, desiring, questioning, seeking, and exercising it selfe about things above, things holy, heavenly, gracious and spirituall.

4. Fire ascends easily without compulsion: so grace hath a propensity and facility to heavenly things: grace makes a man joyfull to come to the house of God, *Psal.* 134. 1 and willing to come to the assemblies. *Psal.* 118. 3. a man comes with gladness. *Philippians* 3. 12. comes with readinesse. *Mat.* 10. 33. his praises come from his joy. *Psalme* 63. 5. his almes for a cheerefull minde. *1. Cor.* 8. 3. he is easie to be interested. *James* 5. 17. he is as ripe fruit soone shaken: as ripe corne soone threshed.

5. If the flame be kept downe, it ascends againe as soone as that kept it downe is removed. So grace may be suppressed, but take that away which keeps it downe, it doth flame up againe presently. Some quelled grace in *David*, but his sinne being pardoned, how did his grace flame upward: what sweet prayers did hee make to God: what holy *Psalms* did he indite: *Tymothy*, and temptation, and reproches may seeme to extinguish the graces of Gods children, but they burne inwardly. *Psal.* 39. 3. and there is a recourse to God. *Jer.* 36. 9. 12. and when they doe get victory, enlargement, and liberty, then it is apparant the fire was kept in, but by violence, and they flame more than they did before: as the Smiths fire by his casting water on it, burnes the more fervent.

Sect. 3.

Thirdly, *Of the qualities and effects of fire.*1. Fire gives light so saith the Prophet, *Isa. 50. 11.*2. Fire gives heat, so saith St. *Marke, chap. 14. ver. 54.*3. Fire consumes, *Amos 2. 1. Consummation is of fire.*4. Fire scethinges, *Psal. 68. 2.*5. Fire purifies, *Mel. 3. 2.*

6. Fire encreases by adding fuel.

7. Fire is never satisfied, *Pron. 30. 16.*

8. It is not lessened by communicating heat.

Fire gives light, so doth Gods word instruction is the light, shines from the Law, *Psalm. 119. 130.* by preaching men receive light, *1 Th. 2. 13.**Considerations.*

1. Light doth distinguish, so doth the word, by it we know what is good and what is evil.

2. Light is comfortable, so is the word, *Jer. 15. 10.*

3. Light makes us walke safely, so doth the word, guide us in the waies of peace and safety.

2. Fire gives heat, so doth Gods spirit, he heates us with zeale and warms our affections.

*Considerations.*1. Heat makes us joyfull, a man that is warmed by the fire saith *Aba, Isai. 44. 16.* so the comfort of Gods spirit makes a man much refreshed, *Psal. 94. 19.*

2. Heat makes a man active, his bendmeesse being removed, so Gods people are active being cheared with the comforts of Gods holy spirit, the joy of the Lord is their strength.

Nehem. 8. 10.

3. The fire giving heat, men presse to it, and desire to be nigh it, so Gods spirit working heat and comfort in our soules, we should ever desire and much pray for it.

Luke 11. 13.

3

Fire consumes all combustible matter it meetes with, as wood, straw, coale, &amp;c.

Considerations

1. The curse of God consumes, *Zach. 5. 3. 4.* as the fire consumes two wayes, either secretly by degrees, or violently and swiftly: so the curse is secret, as a moth and rottenness, *Hos. 5. 12.* or more violent and terrible as a Lyon, or Lyons whelp, *Jer. 5. 14.*

2. Fire consumes not only the house where it first kindles, but the next house to it, and if it be not quenched it reaches to many houses: so the curse of God reaches to a sinner, to his next heires, yea if repentance doe not come betweene, it reaches to the third and fourth generation.

Fire changes, it turns the colour of that you put into it, it melts the waxe comes nere it, it hardens the clay, it drives the moisture out of the paper of cloth that is held before it.

As fire changes, so doeth Gods spirit, *1. Cor. 3. 18.*

Considerations

1. In their condition, they were captives, *2. Tim. 2. 14.* now they have liberty, *2. Cor. 3. 17.* They were children of wrath, *Eph. 2. 3.* they be changed to be children of God, *1. John 3. 10.*

2. They be changed in disposition; *Isa. 64. 6, 7, 8.* they were enemies, *Rom. 5. 10.* now are friends, *Joh. 15. 14.* they have a divine nature, *2. Pet. 1. 4.* and a new heart, and a new spirit *Eze. 36. 26.*

3. They be changed in conversation; the old companions they cry away from me, *Psal. 119. 115.* they be changed in their species which were once rotten, *Eph. 4. 22.* but now gracious, *Col. 4. 6.* they are changed in their actions, they eschew evil and doe good, they practice righteousness and doe exercise mercy, they doe performe duties of piety from an inward principle, from a new life infused into them, there is an universall change where Gods spirit comes, savingly and effectually.

5. Fire purifies, and purges, and seperates, the drosse from the mettall.

*Considerations.*

1. As fire purges and purifies, so doe afflictions; God hath his furnace in *Sion*, there is fiery trials to prove and to try the people of God, *Psalm 66. 10. 1. Pet. 4. 12.*

2. As the fire is made according to the will of the goldsmith, so our afflictions are according to the will of God.

3. As the time of the mettalls being in the fire is according to the wisdom of the goldsmith, so the time of our afflictions are according to the wisdom of God.

4. When the mettall is melted and the drosse taken away, then it comes forth as pure, so when our hearts are humbled, and our corruptions purged, then we come forth as gold.

Job 23. 10.

6. Fire increases by adding of fuell.

Addition breeds multiplication; the more fuell the greater is the fire.

*Considerations.*

1. So is it with covetousnesse and riches, as wealth comes in, covetousnesse encreases, having hundreds the desires run after thousands, the desires are not quenched with money no more than fire is with fuell.

2. Addition of graces are as the fuell: assurance of salvation as the fire; the more graces, the more assurance, by the joyning grace to grace we make our calling and election sure.

1. Pet. 1.

3. Wicked men adde to the people of God affliction and misery, this they do willingly, but by this means they adde fuell to their felicity and glory, this they do unwillingly.

7. Fire is never satisfied: yea may adde till you be weary, fire still desires more.

1. So is it with all earthly things, they doe never satisfie the restless desire of man: the Bee flies from one flower

Bower



flow to another, as unsatisfied : *Salomon* proved by experience, no full satisfaction in earthly things; like the fire we still desire more.

8. Fire is not lessened by communicating heat, nor have we the less by communicating of our gifts to others: wealth communicated to others lessneth our store; but in heavenly graces it is otherwise: in heating others we are not the colder; in quickning others we are not the more dull: the Cock claps his wings, and awakes himselfe, he crows, and awakes others: The fire burnes if that no body be neare it, if you warme you, there is no diminishing: it burnes, and heates, and doth good with advantage to us, and no dis-advantage to it selfe. So much of proper fire: next

*Of improper fire; metaphoricall fire.*

*Sell. 4.*

**B**y improper fire we may understand the metaphoricall fire, that is like fire; or the extraordinary fire we read of, which doth differ from our naturall Fire.

This is of two sorts:

1. *Supernall fire.*

2. *Inferrall fire.*

1. Supernall fire coming from above, and of these are two causes.

1. From Gods anger.

2. From Gods favour.

1. From Gods anger: so Fire came downe from heaven on *Sodome* and *Gomorrab*, *Gen. 19. 24.* Also on them that offered Incense in the conspiracy of *Korah*, *Numb. 16. 35.* On the Captaine and his fifty, *2. Kings. 1. 10.*

2. From Gods favour: so Fire came downe on the sacrifice of *Saulem*, *2. Chron. 7. 1.* and on the sacrifice of *Eliab*, *2. King. 18. 38.* Thus God shewed his love and favour to these his servants by fire from heaven.

2. Inferrall fire is that which the damned doe feele in hell, see forth in Scripture.

1. For

1. For the greatnesse, there is fire and much wood: the Prophet speakes to our capacity. *Isaiah 30. 33.*

2. By the terriblenesse, it is a lake of fire as *St. Iohn* saith. *Revel. 21. 15.*

3. The eternity of it is everlasting. *Matth. 25. 41.*

This fire ceaseth on the soules of men, it layes hold on spirits and hath

4. Shame, for they shall bee looked upon as spectacles of wrath to their infamy. *Isaiah 66. 24.*

5. This fire differs from fire on earth, and hath with it darknesse and paine: our fire gives light and warmth.

6. This fire hath with it indignation, and an exceeding vexation: for there is gnashing of teeth.

7. Divines thinke there is horrible blasphemie, because of their torments.

8. The company of the devils most fearefull and terrible.

*And in this Fire*

1. Is no resistance, for now they suffer, *Iude 7.* and are bound hand and foote. *Matth. 23. 13.*

2. Is not the least mitigation. *Luke 16. 24, 25.*

3. There is a gnawing worme in the fire. *Mar. 9. 44.*

4. A sensiblenesse of the torment. *Luke 16. 24.*

5. A knowledge that others be in joy. *Luke 16. 23.*

6. The torment is on the whole man, all the faculties of the soule, and all the parts of the body.

*The degrees of torments.*

1. According to the measure of wickednesse committed. *Matth. 23. 14.*

2. According to the meanes of grace they despised. *Matth. 11. 24.*

*Self. 5.*

Fifthly, of divers resolves concerning fire, both naturall and divine: and of Meteors.

*First of them that are naturall.*

*Quest. 1.  
Answ.*

**H**ow many waies may fire be put out? First by spreading it abroad. Secondly, by withdrawing

drawing of the fuel: Thirdly by throwing water on it.  
So our lust may be quenched; by separating of them,  
by taking away that which doth nourish them, by tears  
of repentance.

Why doth fire burn hottest in frosty weather?

The extremity of the cold aitts proove it to be more  
vehement.

Why doth Wine, and some strong waters burne and  
take fire?

Because of the strongnesse, and clammynesse, and  
fatnesse that is in it, it is combustible.

Why doe men burne the ends of pales which they do  
put in the ground?

That the moysture being expelled, the putrefacting  
part may remaine the longer in the ground without rot-  
ting.

What is the cause of the continuall fire that is on  
mount Atna?

The minerals of Brimstone, or some other combu-  
stible Oare; which quantity being great, the fire con-  
tinues: thus the learned doe thinke.

Quenching the hot Iron in the Smiths forge, why  
doth it hiss and make a noyse?

First, suddaine alterations breeds distempers in the ve-  
ry iron: Secondly, violent extremitie doe fight and  
make anyse.

How may we prove the foure elements in a fire stick?

1. There is fire in the one end of the stick.
2. There is water woofe out at the other end.
3. There is fire fumes out with the water.
4. The stick burnes to ashes, there is earth.

Why doe children love to play with the Fire?

1. Because of the friendshipp of the colour.
2. Because they want experience of the operation of it.

Why doe english people make bonafires the fifth of  
every November?

M m

1. That

Quest. 2.

Ans.

Quest. 3.

Ans.

Quest. 4.

Ans.

Quest. 5.

Ans.

Quest. 6.

Ans.

Quest. 7.

Ans.

Quest. 8.

Ans.

Quest. 9.

*Answ.*

1. That the Fire may be a lively remembrance of our deliverance from Popish Fire.

2. That our children might take the meaning, and be instructed in Gods mercies to us.

3. To dampen the enemy when they see us rejoicing, whom they wish we would see weeping and mourning.

4. We expresse outwardly what we have inwardly, the fire of zeale and thankfulness.

5. The burning of the wood, shewes how traitors shall burn in hell.

6. We would teach them, as we make fires, not to burn themselves, they did us but to give them light and warmth.

*Secondly, other resolves concerning the fire of anger.*  
How is anger like to fire?

1. A little may grow to a great flame.

2. Fire and anger be hurtful out of their proper place.

3. Fire is dangerous where it is, and anger is dangerous where is provocations.

4. Wise do not order fire, so a wife man order his anger.

5. Fire raised in affires, stirring discovers it, so concealed anger, occasions doe manifest it.

6. There is likewise the quenching of fire and anger.

1. Fire is quenched by withdrawing fuel: so anger is appeased by removing that which doth nourish it.

2. Fire is quenched by water, and anger is quenched by teares of humiliation.

3. Houses on fire are holpen by pulling downe, so anger is cured by pulling downe pride and high conceits.

How doth wickedness burn like fire?

1. One coale kindles another, so one wicked man doth infect another.

2. Fire consumes, so doth wickedness consume all good in the soule, the strength of the body, the goods, the good name.

3. Some sport with fire, some sport with flame.

4. When fire gets mastery wee are undone.

*Quest. 2.*  
*Answ.*

*Quest. 2.*  
*Answ.*

when sinne gets dominion we perish.

5. When a man sees fire in his house, too late, he cries desperately: so is it with sinne in the deads bed.

6. Fire hath undone them that were very rich: so wickednesse did undo the very Angels.

7. If we espy fire very dangerous, if we can timely quench it: we doe rejoyce: so if we espy our sinnes, and timely repent: it abundantly comforts us.

8. If a man be cryed unto: his house is on fire: if hee he sitre not, he is like to perish: so if the Preacher crye out of the sinne in mans soule, if hee repent not, hee perishes.

9. If fire be almost put out: if it have matter: it will revive againe: so wickednesse curbed by law, education, shame, example: if not thoroughly mortified, it will revive againe.

10. If fire be blowne, it is more furious: so if sin bee provoked, furthered and animated, it is more furious; provoked lusts are strong burners.

How is jealousy like unto fire?

1. As fire is ever working, so jealousy is never at rest.

2. Fire works on the least advantage, so doth jealousy.

3. Fire blowne, and added unto, is outrageous, so is jealousy, if it be stirred, and new matter added to it.

4. Many times the neighbours are called to helpe quench fire: so often times the neighbours and the friends are called to appease the jealous party.

5. Fire will except of no gifts, nor be intreated not to burne: so the jealous man will endure no rancome, though the gifts be augmented.

6. Fire lies sometimes invisible in the ashes: so jealousy lies secret hid in the heart.

7. Fire burnes those that touch it: so the jealous person is angry with those converse with them.

8. A sure way to quench fire, is to cast on water, and take away the fuel: so to quench jealousy, the best way

Quest. 3.  
Answ.

is to weepe for them, and to give them no just occasion.

9. If a man come with a handfull of flaxe or straw to heate the fire, hee encrease it: so to come to the jealous party with passion, rough words, or threats, doth more enrage them.

10. Put two fires together, they doe burne the hotter: so put two jealous persons together, let them talke together, they strengthen each other.

11. Fire sometimes burnes where it should not: so the jealous person sometimes suspects where he should not.

12. Fire welcomes that will encrease it: so doth the jealous party welcome the tales and reports that encrease jealousie.

*Quest. 4.*

What lessons may we learne from the fire which fell on Sodom?

*Answ.*

1. That God is just as well as mercifull.
2. Strange sinnes bring strange punishments.
3. The equity: they burned in iust first, and then were burned with fire.
4. Voluptuous living hath a smarting conclusion.
5. Vniversality of sinnes; brings universall destruction.
6. Those which cannot abide to be reprov'd, must abide to be punished.

*Answ.*

*Quest. 5.*

7. We should take examples, lest we make examples.
- How is Gods word like to fire?
1. The fire gives light: so doth Gods word, *Psal. 119.*
2. The fire gives heat; so doth the word.
3. The fire in his place rejoyces; so doth the word rightly applied, *Ier. 15. Job. 23.*
4. The fire consumes the combustible stuffe; so the word consumes our sinnes and lusts.
5. The fire changes some things; and drawes some things to it; so doth the word change us, and win us, and turne us to his owne likenesse.

How



How are the judgements like fire ?

Quest. 6.

1. Fire is terrible, when it is cryed fire fire : so Gods judgements are terrible in the threats.

Ans.

2. Fire it impartiall : so are Gods Judgements.

3. Fire consumes : so doe Gods judgements.

4. Fire torments men : so doe Gods judgements.

5. The spoyle that fire makes, is reported a farre off from the place : so Gods judgements are heard of, and famous for report and record.

6. When fire is cryed, and kindled, men doe remove their Goods, and cast water on their neighbours houses, or flye away : so in the threatening and beginning of judgements, it is wisdom to pray, and to give almes, to lay up treasure in heaven : to weep for the finnes and miseries of others, to flee from the fins of the time, unto the name of God, to the throne of grace.

7. When wee see the flame a farre, wee beginne to beseech our selves, so the judgements on neighbour nations should now awaken us.

8. The minings under ground are least perceived, and yet most terrible, sudden, and inevitable : so inward spirituall judgements are least perceived, and most dangerous.

9. As those that kindled the fire are worthy of our hatred, and those that quenched it are worthy of our love : so the wicked that procure Gods judgements are worthy of most hatred, and the godly that preserve us from them, or by their prayers remove them, deserve most love.

## Of Meteors.

1. *Of the names of Meteors.*
2. *Of the matter whereof they are produced.*
3. *Of the time when they doe appear.*
4. *Of the various formes and shapes of them.*
5. *Of the place where they are.*

*Self. 1.*

*First, of the names of Meteors.*

A Meteor is taken more largely, or more strictly. Largely, all vapours, exhalations, clouds, winds, tempests, haile, snow, are Meteors: *Meteor* is first, things ingendred. Secondly in the air. Thirdly, imperfect things ingendred imperfectly in the air: strictly, it is either from vapours arising from the water, or exhalations from the earth, or both; so growing hard and clammy, are called Meteors in the air.

*Self. 2.*

*Secondly, of the matter of them.*

**F**irst negatively, of what they are not. Secondly, affirmatively, of what they be.

*Negatively.*

They are not of fire, nor of aire, and so are of imperfect mixture: for the perfect bodies are either simple, compounded of the foure elements. The Meteors are not of fire, for the fire consumes them, and doth not produce them: the fire, (I meane the elementary fire) is so thinne, it cannot be altered and made thinner: if the fire

WCE

were thicker, it would become hot aye: neither could Meteors made of fire: for if fire were made thinner it would turne to fire: the exhalation then is not from aye nor fire.

*Affirmation.* Meteors have their production from the Waters and Earth: from the waters do arise moist vapors, from the Earth arise exhalations more hot and dry, and are more thin, and pierce the Aye, ascending up more free then Vapors to the place where they are fired and consumed, and tis probable that Meteors are rather exhalations then Vapors. As there be some forges at Sea: it may be they arise from vapors, or from some Isles of the Sea: or exhalations may be drawn from Fleets of ships, and great Navies, this is but conjectures, wee must leave many causes in nature, to the God of Nature, who onely knowes them.

*Thirdly, the time when Meteors appeare.*

Sec. 3.

**N**ot in the heats of Summer, for then the Sunne is strong on the earth in his heat, and consumes the matter whereof the Meteors are formed. Nor in the deepe of Winter, for then the Sunne is so farre distant, that tis not so operative to raise the exhalations up into the Aye. But the Spring and Autumne is the ordinary time. As for the Star that did lead to Christ in the deepe of winter, it may be the Countrey is temperate, or it was an extraordinary Meteor or Starre for speciall use. God can shew the reines on natures necke, yet keepe the halde in his mouth; hee can worke by secondary meanes, and without them.

*Fourthly, of the various formes and shapes.*

Sec. 4.

**T**he formes of Meteors are according to the quantity or quality: if the quantity be very great, it is not carried.

carried up to the upper Region of the Ayre, when the grossenes and heavinesse is the quality of it; but if the quantity be great, and the qualty be thin and light, it goes to the upper Region, and there is fired. And to proove that great quantity is exhaled up in the Meteor, it appears in some Comets or blazing Stars, which continue many dayes after they be fired, before they be consumed, which argues there was a great quantity that lasted so long.

Sol. 5.

*Fifthly, of the place of Meteors.*

**T**he place is to be considered two wayes. First, the place of their production. Secondly, whither they ascend.

1. The place of their production is not farre North, for that is too cold: nor yet in the South, for there the Sun beames are too hot; but that part of the earth which is like the Spring and Autumne, all the yeare there are most Meteors: Vnder the Equinoctial line are none, nor in the two extreames, but in the temperate Climat there they arise.

2. The place whither they ascend, tis to the upper Region, for the middle Region wanting the reflexion of the Sunne beames, is extreame cold. In the lower Region is Frosts and Mists, in the middle Region, Clouds and raine, in the upper Region Comets and blazing stars.

*Conclusions applicatory.*

An Hypocrite is like unto a Meteor. First, a Meteor is rayled from the Earth, yet is not earth: So an Hypocrite is rayled in the Church, yet is not of the Church: *They went out from vs, saith St. Iohn, but are not of vs;* he is not of the true Church of Christs mysticall body.

2. A Meteor hath an ascent, yet is not heavenly: so an Hypocrite may be advanced, yet not of an heavenly disposition.

3. An Hypocrite may make more shew than a true Christian : as a meteor may blaze more for a time, than a fixed starre.

4. A Meteor is after his advancement burned ; so is an Hypocrite his end is to be burned.

5. A Meteor rises not under the Equinoctiall line, nor in the hot south, nor in the cold north : nor doth an Hypocrite grow where is the feeling of Gods presence, nor where is the heat of true zeale and fervent devotion, nor yet in the cold, among Pagans, Heathens, and Infidels.

6. There be divers formes of Meteors, some round, some streaming, like Piramides : so some Hypocrites goe round like the Mill-horse, still the same, and are as the spider still in their circular motion : some are streaming, like *Ieha* and *Demar* : so long as the clammy matter of worldly hopes last and then goe out : some are great below and narrow above, large toward the world, and little toward heaven, like to Piramides.

7. Some Meteors are thinne, and are soone fired and consumed, some more full of matter, and endure longer, some are fearefull to behold : so some Hypocrites are soone discovered ; some are longer in their professions : others are terrible in their deaths. So much of Meteors.

N n

Of

## Of the Windes.

1. Of the generation of the windes.
2. Of the diversity of Windes.
3. Of the usefullnesse of them.
4. Of the strength of the windes.
5. Resolves concerning the windes.

Sect. 1.

First, of the generation of the windes.

SOME Naturalists have ghesied at three causes: First, That the Sonne drawes up minne vapours and exhalations; they falling downe by violence turne to windes. Secondly, some thinke the aire being pent up in vaults and caves of the earth, having a vent doe breake out, and so spread in windes, blowing on the earth. Thirdly, some hold certaine vapours meeting together from betwene the mountaines, comming from the crannies of the earth, are the windes: some to all this thinke, there is a soft moving of the aire, yet it is not winde, but a coole vapour.

But he that made them tels us a better doctrine, *Ioh. 3.* thou knowest not from whence it commeth: we must deny our curiosity, and submit to the verity: No man knowes from whence the windes doe come, this is a lawfull ignorance.

IO

II

Secondly,



## Secondly, of the diversity of windes.

Sect. 2.

**T**He East winde is hot and dry, of the fiery nature.

The West winde cold and moyst of the watery nature.

The South winde hot and moyst.

The North winde cold and drye.

The windes betwene these are qualified, of the severall tempers whereof they doe participate.

## Thirdly, of the usefulness of the Windes.

Sect. 3.

1. They carry the Clouds, and bring us Raine.
2. They cleare the Ayre, for our health of body.
3. They cause our ships to fetch Commodities.
4. They make our Mills to grinde our Corne.
5. They coole the Ayre in the Summers heate.
6. Without the Winds nothing would grow or prosper. *Renel. 7. 1. 3.*

## Fourthly, of the strength of the Wind.

Sect. 4.

1. The Winds do raise the mighty waves of the Sea. *Jonah 1. 4. Psal. 107. 25. 26.*
2. The winds have blowne downe houses. *Iob 1. 19.*
3. The Winds rend the Mountaines, and breakes the Rocks. *1. Kings 19. 11.* And experience proves the winds have carried away ricks of Corne and Hay; rooted up and torne great trees, The fierce winds mooves the great ships. *James 3. 4.*

## Fifthly, resolves concerning the Wind.

Sect. 5.

Which is the most notable and famous Wind?  
The East-wind: of which the Scripture speaks, how

Quest. 1.

Answ.

it hath beene Gods instrument divers times for famous uses.

1. An East-wind divided or dried the Red-sea. *Exod. 14. ver. 21.*
  2. An East-wind brought the Grasshoppers on *Egypt. Exodus. 10. 13.*
  3. An East-wind perplexed *Isaiah. 37. 36.*
  4. An East-wind brake the ships. *Psalms. 48. 7.*
- The East-wind is, *orientem, ventum*; a searing Wind; and is layd to blast. *Gen. 41. 6.* to scatter. *Iere. 18. 17.* The East-wind is hurtfull to the fruites, trees, and leaves. *Mr. Calvin on Isaiah the 27. 8.*

Quest. 2.  
Answ.

How is the Spirit of God and the Wind alike?

1. The Wind is powerfull and strong, so is the spirit of God.
2. The Wind sweetly cooles and refreshes our bodies in the heate of Summer; so the spirit doth sweetly refresh and comfort our soules in the heat of tentations & afflictions.
3. When men fast, then there encreases wind in their stomackes; and when men fast the spirit of God encreases in their soules.
4. Without the wind nothing can grow and prosper; so without the spirit nothing can prosper concerning our salvation.
5. The wind is on the Sea and Land, with a kinde of *ubiquitas*; so the spirit is every where, being truly omnipresent.
6. The wind is invisible; and cannot be seene: for the spirit of God invisible.
7. By the effects we conclude, the wind hath blowne, and wee do feele it sensibly to blow. So by effects wee know the spirit of God hath been working, and we feele his holy motions and consolations.
8. We cannot command the Wind to come, nor hold it alwayes with us at our pleasure, nor can we obayne the

the motions of the Spirit when we wil, nor retaine them at our pleasure.

*The disparity betweene the Winde and the Spirit.*

1. The Wind is a creature, the Spirit is a Creator.
2. The wind is an unreasonable creature; the Spirit is the Doner of reason to the creature.
3. The wind is alwayes limited in his proper sphere: the Spirit is unlimited, and fills Heaven and earth.
4. The wind blowes equally on all, both good and bad; but the spirit of God blowes on the Elect, and makes a difference.
5. The winds blow and often doe harme, where the spirit comes, he alwayes doth good.
6. Sathan hath beene permitted to raise the wind. *Iob. 1.* but was never permitted to give the good spirit.
7. VVind in the body makes men sicke. But the spirit in the soule makes men well.
8. The most favourable winds can bring but to a temporall haven, the blasts of Gods spirit brings to a blessed Heaven.
9. When the Windes blow strong, it hinders men in their journey; but when the Spirit moves strong, we make the more speede, and with the more comfort and lesse trouble.

Why did the Poets call *Eolus* the King of the windes?

*Quest. 3.*

Because the windes did arise about the *Eliou* Islands, whereof he was the King: they saw the place where the windes arose, but looked not up to him that raised them.

*Ans.*

Why did the *Italians* make a God of the Winde, and dedecare a Temple to it?

*Quest. 4.*

Because when *Sigismund* had prepared a mighty Navy to invade *Italy*, a strong North winde tare

*Ans.*

and sunke his ships, and dispersed his army, then the *Italians* made of the winde a God, being ignorant that there is a Creator of the windes, *Amos* the fourth the last verse. The Winde is but a creature.

Quest. 5.

How differs the Whirle-winde from other windes?

Ans.

In three particulars.  
1. Other windes are single for kinde; but the Whirle-winde is plurall, two windes are involved together.

Secondly, other windes spread abroad: the Whirle-winde hath a circular-like motion, it holds together and runnes round.

Thirdly, other windes doe continue longer in motion: the Whirle-winde parts assunder, and is sooner dissolved.

Quest. 6.

What thoughts are we to have, when wee doe thinke on the winde or feele it?

Ans.

Such as these, or the like.

1. To thinke of Gods goodnes, which now opens his treasures, and sends forth the winds to us.

2. I should have thoughts of obedience; for the windes obey Christ.

3. I must beleve more than I see: I cannot see God, nor Angels, nor my owne soule, nor the Winde, yet beleve all this to be.

4. I may thinke of my mortallity; for my life is as the winde that passeth away. *Psalm* the one hundred and thirde.

5. I should desire the Spirit of God; which as the winde blowes where it listeth, to blow on my soule, that I may be truly regenerated, and so flourishing in grace, that I may bee as a garden. *Iohn* 3. *Can.* 4. 16.

Quest. 7.

How are wicked men like the winde?

Ans.

1. In their rage and malice: the blast of the mighty

is as a storme. *Isaiah Chapt. the twenty fifth, verse the fourth.*

2. In their mutability, the windes are variable and inconstant; so are wicked men in their words, *Psalm 5. 9.* in their deedes, therefore compared to a broken tooth, or sliding foote; and wee are fore-warned not to put confidence in them. *Mich. 7.*

3. The windes are in all parts wheresoever we goe, and the wicked walke on every side, and are in all places. *Psalm. 12. 8.*

How are the wicked like a storme in their malice and persecutions?

Quest. 8.

1. A storme comes of windes and water, two contrary elements: so wicked men are sometimes differing among themselves, yet joine both against the godly: *Manasses against Ephraim, Ephraim against Manasses, both against Iudab. Isaiah Chapter the ninth, verse twenty one.*

Ans.

2. A storme comes often times in secret when men are asleepe: so wicked men come on the godly at unawares. *Psalm. 11. 2.*

3. The storme comes to spoyle and undoe men: so the wicked will spoyle and undoe the godly; as saith the Prophet, they will undoe a man and his heritage.

4. The storme doth wet, but not wound us: so the persecutions of the wicked doe wet our cheekes with teares, but hurt not our soules.

5. The storme is not in all places, nor lasts alwaies; nor is the rage of the wicked on all persons nor all times, *Revel. 2. 10. Satan shall put some of you in prison, some, not all, and yee shall have tribulation tenne dayes, not alwaies, the time is limited.*

Why are the godly resembled to a garden, and the Spirit to the North and South winde? *Cant. 4. 16.*

Quest. 9.

1. As in a pleasant garden, that with sweete gales of winde

Ans.

winde hath prospered, there men doe take pleasure to walke: so Christ takes delight to be among his gracious people.

2. In such a garden is variety of hearbs, and flowers, fruits, and spices: so in the people of God are variety of gifts and graces.

3. Such gardens are fenced and walled: so Gods people are protected and defended.

4. Such gardens are weeded and watered: so Gods people are purged and instructed.

5. In such gardens is beautifull order: so it is with Gods people in their severall places, they performing severall duties, medling each Christian with their owne businesse, are in a beautifull order.

6. As such a Garden seemes dead in winter, yet there is life at the rootes: so Gods people doe seeme dead in afflictions, yet there is grace in their hearts.

7. The garden is the most beloved plot of ground, though the owner have much land: so the people of God are beloved above others, though all the earth be the Lords.

8. A blinde man, and one that cannot smell, hath small felicity in such a garden: so those Sathan hath blinded, and those that have no spirituall savour, doe finde small comfort or felicity in the company of the godly, though they bee excellent in graces, and the gales of the holy Spirit, as the North and South winde hath blowne upon them.



## Of Man.

This having gone thorow with some digressions and many imperfections: the Heavens, the Sunne, the light before the Sunne, the Moone, the Stars, the Aire, the Clouds, the Raine-bow, the Raine, the Earth, the Water, the Fire, the Windes. I here make an end of these Meditations, and conclude the few leaves ensuing with Meditations of Man: in whom is the Compendium of all the rest: he hath matter and substance with the Heavens, reason with the Angels, light with the Sun, a parcell out of the earth, fence with beasts, growth with trees, (I had almost forgot) sin with Devils.

### The Exordium.

Altho' thoughts can reach unto, may be considered in two heads: The Creator, and the creatures; The Creator is knowne to us in his Essence and his Attributes; the creatures are two wayes considered, invisible and visible: the invisible two wayes, either the habitation or the inhabitants: the habitation expresse two wayes, made though without hands, and glorious: the glory expresse two wayes in the perfection and perpetuity: the perfection two wayes, freedom from all evil, the presence of all good.

The Inhabitantes considered two fold, the Angels, and Saints; the Angels considered two wayes, in their Nature and office: their Nature considered two wayes, in the purity and celestiall; their purity is considered derivatively and comparatively; their office is two fold, to praise God to doe service to the Elect; their praises are these two wayes considered, as tis sincere, and perpetuall: their service to the Elect is unfeare, and certaine.

Again the Angels are considered in their number, their number is knowne to God, unknowne to Man: the Saints are considered in their Soules there,

in their bodies here in the grave, only two excepted, *Hanoch* and *Elias*, whose bodies are in Heaven before, as types of *Christ*, as evidences of the Resurrection. The visible creatures are two fold, the Heavens, and the Earth: the Heavens are two wayes considered in their sphares and orbes, or in other phrases the Heavens and their ornaments: the Heavens are considered as outspread and firme: the orbes are two fold, the Sunne and the Planets: the Sunne is considered in his light and brightness: in his light is two things as tis the fountaine, and as tis communicated: the Moone is considered in her mutation and blemishes: the Stars are set forth in multitude and glory. The Earth is considered singly or conjunctively; conjunctively by a *Synecdoche*, as tis land and water, making one globe. The waters are considered in the Sea, in the Rivers: the Sea is considered in his bounds, in his motion: the motion is considered in the flowing, and ebbing: the bounds are considered in the stabilitie and perpetuities. The Earth is singly considered in the substance and dependance: the dependance on Gods power, in the Aire: the substance in the massinesse, and riches: the riches latente or patente: the patente in vegetatives or the sensitives: the sensitives have life and feeling: the vegetatives are part in the earth, part above the earth: the creatures doe one serve another, and all serve Man: Man consists of a Soule, and a bodie: the Soule is distinct and immortall, the body hath senses and members: the Soule hath substance and faculties: the substance is spirituall and invisible: the bodie hath generation, and corruption. So much of the *Exordium*, beginning at God, ending with Man. The Meditations follow:

1. What the Soule is.
2. How it was created.
3. Of the Conjunction with the body.
4. Of

# Of the Soule.

4. Of the immortalitye of the Soule.

5. The difference of immortall, and eternall.

6. Of the life, and death of the Soule.

*A Conclusion concerning Gods Image in the Soule,  
explained by Resolves.*

1. Concerning Images what they be.
2. What the Image of God is.
3. How *Adam* was made after Gods Image.
4. Whether this Image still remains.
5. In whom this Image is repaired.
6. Reflexions applicatorie from the former heads.

*First what the Soule is.*

1. Section.

**I**T is a spirituall Distinct invisible substance, spirituall opposed to that is corporall: It is Distinct, and hath a being and existence being separated and departed from the bodie. It had an entrance into this world, *Ecclesiastes* 12. 7. It being a Spirit, therefore is invisible. This quick; nimble; apprehensive, very active stirring, working: It hath being and faculties, some superiour, as the understanding and mind; some inferiour, as the desires and affections. The former rule, the later obey; the former contrive, the latter doe execute. The understanding is as the King, the will, the Lord Maior; the memorie, the Recorder; reason and discourse, lastly Sherriff, determination, as the Aldermen: Conscience, as the Serient; Judgement, as the Divine; the Affections, as the Commons: In this Circle of the Soule of Man.

*Secondly, how the Soule was created.*  
There was the Creating of *Adams* Soule, and our Soules: How *Adam* came by his Soule we know;

2. Section.

how we come, by our Soules; for the soules are  
 knowen by their light, and by inspiration: Gen. 2. 7.  
 Inspiration and light both signify the Soules, and  
 distinction from the State of other creatures, which  
 is chiefly in the blood: we come by our Soules; for  
 think, by participation, to end, and to doth light an-  
 other: by generation, a man begets man complete:  
 some think our Soules come by infusion by a particu-  
 lar inspiration: others the child first quickens in the  
 wombe: but this is certaine, no man knowes the way  
 of the Spirit, Eccly. 11. 5. what all is imagined, little  
 is concluded concerning this question.

3. Section.

*Thirdly, of the Conjunction of the Soule with the  
 body.*

God made three sorts of Creatures in the begin-  
 ning, Spirit without bodies, as Angels; Bodies with-  
 out immortall Spirits, as beasts, fowles, and fishes; Bo-  
 dies and immortall Spirits, having a joining together,  
 as man. There is a Divine Conjunction of the Deitie to  
 Creatures: a Humane, a matrimoniall Conjunction  
 between man and wife; a civil Conjunction be-  
 tweene Christ and the Church; a personal Con-  
 junction between the Soule, and Body: etc.

1. In a Conjunction of contraries, as flesh and Spirit.
2. Such a Conjunction is may be separable by death.
3. After the day of Judgment, this shall be eternall.
4. In this Conjunction there is a fellow feeling, or  
 sympathizing: The passions alter the looks and  
 visage, the sensible paines affect the Soule.
5. The more Noble is to rule, the inferiour to obey;  
 Reason (not appetitive sense) should govern.



4. The name *πνεῦμα* which is in Latine *Spiritus*, proves the Immortalitie of the Soule; for Soule and Spirit are promiscuously taken one for the other: *Iohn 13. 21. Turbatus est Spiritus*, *Iohn 12. 27. Nunc anima mea turbata est*: In the first Text, he was troubled in Spirit; in the last Text, hee was troubled in Soule: a spirit is immortall, so is the soule.

5. The soule is not derived out of any matter, which is the roote of corruption; so Angels, and the soules of men are not made of composition of the Elements; so are immortall, and not subject to dissolution.

6. The last and least Argument is the Testimonie of Heathen men: *Solon* saith the soule is an incorruptible substance, apt to receive Joie or paine here and els where: *Plato* saith: *Though the body die, the Soule dieth not*. *Socrates* saith, *The Soule that followeth Vertue, shall see God*. *Anaxarchus* put to death with Iron hammers, saith: *Knock hard the flesh, and bones; but Anaxarchus thou canst not hurt*.

5. Section.

*Fifthly, the Difference of Immortall, and Eternall.*

Immortall is opposed to death, Eternall is opposed to time: Immortall hath respect to being without limitation of time, Eternall respects to time, persons, nor things: there would be eternity, were there no persons, things, nor time. Immortall is more noble than Eternall; for the Angels, and soules of men are nearer *G O D* bearing his Image: Eternitie is a vaste Ocean without measure or limitation.

The Immortalls doe dwell in Eternitie at last, as the Inhabitants in the house.

6. Section.

*Sixthly, of the life, and death of the Soule.*

First of the life of the soule here consider, 1. What life is. 2. The severall kindes of life. Life is a power



to move, and to acte; In the Creatour tis an essentiall, perfect, single, Divine, being there is the fountain: man had his life at the first by spiration: *Gen. 2. 7.* called breath of lives, for the severall faculties tis in, or the severall operations or degrees.

There are three degrees of life, in the wombe, in the world, in heaven; the life in the wombe is secret, the life in the world is active, the life in heaven is contemplative, a life of vision.

The life in the wombe is secret, in the conveyance, and in the continuance: In the conveyance, *Eccles. 1. 1. 5.* *Thou knowest not the way of the Spirit.* In the continuance, being nourisht by the Navill, and preserved by a Divine Providence rather to be admired than disputed.

2. The kindes of life are three, a life of Nature, a life of Grace, a life of Glory: The life of Nature is in such things as the strength of Nature can acte, all attaine not to the like operations, nor the same man is all times alike: one man excels another and the same man in time he doth excell his former actions: some have attained to a great knowledge of the heavenly spheres and orbes: some to the knowledge of the terrestriall globe, finding out the minerals that lay hid, and the Nature of the Creatures that doe live, and growe on the earth: man hath divided the world into foure parts, for distinction of Countreies and people; some attaine to Arithmetique, some are Musically, man hath found out writing, printing, Martiall discipline, Navigation, policie in Government, curious Arts, Philologic, Rethorique, Logique, much varietie for the being, and well being of humane life.

The life of Grace is a spirituall life; which only the regenerate doe attaine unto:

1. Consider how it is communicated.

2. How

2. How it is manifested;

3. How it is preserved.

First, how it is communicated: *Christ is the originall of light and life, John 1. 9. He is the way, the truth, and the life. John 14. 6. He is the Resurrection, and the life. John 11. 25. He is a quickening Spirit. 1 Cor. 15. 45. Giving life to his members.* This life is called spirituall life:

1. Because the Spirit of God workes it.

2. Because the carnall man knowes it not, tis the spirituall man hath spirituall life.

3. Tis employed in spirituall things, spirituall motions, spirituall words, and actions.

Secondly, how tis manifested:

1. By prayers, desires, longings after God; where is breath, there is life.

2. By sence of sin, to feele Idle thoughts, indisposedenesse to duties, &c. there is life; for where is sence, and feeling, there is life.

3. Affections against sin, and for God argues life; for where is heate, is life.

4. To doe good workes, workes of mercie, workes of pietie, workes of mortification; argues life, for where is motion, and action, there is life.

Thirdly, how spirituall life is preserved.

1. By a good diet, we must strive for appetite, and for food: labour, and salt things, and sharp things brings appetite; we must exercise our selves in the Law, and applie the curses and the threatenings home to the soule; this will make us to hunger for Christ, for mercie and grace: then labour for nourishment; the word preacht and reade, the Sacraments, and prayer, and conference, and meditation are spirituall nourishments to preserve spirituall life.

2. Life is preserved by exercise, we should put forth our habilities in duties, as in Gods sight, and for Gods

Gods Glorie, here stirring is for soules health.

3. Life is preserved by Physique.

1. There is preventing Physique, to remember Gods Presence, Gods Law, the great account, the mercies we enjoy, the example of *Christ*; these meanes keeps us from sinfull diseases.

2. There purging Physique, true sorrow frees Confession, humiliation, prayer, turning to God.

3. There is restoring Physique to embrace the tender of mercie, the promise of grace, to lay hold on the blood of *Christ*; to ponder what is Gods sweete Nature, what God hath beene to others, what he hath beene to us formerly, what he is to us at this present, what a sweete Mediatour we have at the right hand of God: this may restore us.

In the third place, as there is a life of Nature, and a life of Grace; so there is for the soule a life of Glorie.

1. There is an eternall life of Glorie.

2. The felicitie of that life.

That there is an eternall life, tis plaine, *Mark 10.*

30. In the world to come eternall life: *Iohn 3. 16.*

*Whoever beleeves, shall have everlasting life.* Eternall life is foure and twenty times to be read in the New Testament, besides the other names of heavenly Glory, heavenly inheritance, &c.

The Arguments to prove an eternall life.

1. Otherwayes the Scriptures would be false, which doe so manifestly reveale it unto us.

2. Els we loose an Article of our Creed.

3. The verie heathens have guessed at it.

4. Els the Saints of all people were most miserable.

*1 Cor. 15. 19.*

*The Felicitie of that life.*

1. Tis a life of Glorie, in a Kingdome of Glorie, with the God of Glorie.

2. Tis a life of pleasure: *Psalm 16. 11. There is sweetnesse*

*(sweetest with our Glads; then they that mourned, here shall laugh whose that sained, shall feast; and them imprisonment, shall enlarge.)*

3. Tis a life of triumph; there be palmes in their hands, in token of victorie; then the poore child of God, that is now militant, shall triumph.

4. Tis a life of liberte; there no thersd can come to rob, no enemie to assault; no Diuell to tempte; there shall be no arrest, no suite, nor accusation against us.

5. A life of love, Love is the Law of the Kingdome; every one is glad of anothers felicitie; so the joy is mixt, and enlarged; they so abounding in love one to another, and all to the Lord.

6. Tis a spirituall life glorified; there is no thirst, nor weariness, or lumpishnesse.

7. Tis a life of knowledge, Ignorance is expelled, we know here in part; but then we shall know in perfection.

8. Tis a life of praises, then prayers cease, but praising ever cease; we shall doe it for ever with spirituallnesse, and liveliness; and againe we sound forth the praises of God, and againe, and againe, with infinite sweetness.

9. Tis a life of Communion with Christ, and the Angels, and all the Elect: we shalbe all of one mind, none shall separate from this assemblie; nor one profane may be admitted.

10. Tis a life of Satisfaction, we shall say, Lord I have enough, Lord I am full, I am satisfied, richly rewarded; here we ever want something, but that life knowes want of nothing.

### Of the death of the Soule.

1. What Death is.

2. How the Soule can be said to die.

3. The

## Of the soule.

31

3. The cause of death.

4. The signes of death.

First, what death is, *Plinie* calles it ruine, *Homer* the last line of things. Some call death a dissolution or departing: sometimes the afflictions, *2 Cor. 1. 10. Who delivered us from so great a death*: sometimes tis a dangerous thing, *1 Kings 4. 40. Death is as the pit*.

Death is the separating the Soule from the body, *Heb. 9. 27. our living out of Gods favour and without the Word of God, is the shadow of death*. The separation of the Soule from the body, is bodily death: the separation of grace from the Soule, is spiritual death: the separation of the Soule, and body from God and Glorie, is eternall death.

Secondly, how the Soule can be said to dye: It dyeth not in respect of existence, and being, but relatively in respect of Gods Grace and favour, as the body being dead, there is eares, and eyes, and handes, and feete; but without life, so it is a corpse, till life be put into it, being voide of motion: so the Soule hath understanding, memorie, will, and affections; yet is dead by Nature, having no spirital motion, hence the said, *Men are dead in trespasses and sin*, *Ephel. 2. 1. But be dead but in their dead*, *March. 12. 41. This body whether was dead*, *Luke 25. 31. She that travaileth in pleasure, is dead while she liveth*, *1 Tim. 5. 6*.

Thirdly, the cause of death is fine, there was an immortall, lively estate in mans innocencie: Death was threatened as a punishment, and well accomplished when man had sinned, *Adam* stood as fell for himselfe, and his Posteritie; as *Levi* said *Father in Abraham*, *Heb. 11. 9. So we sinned in Adam*, being in his loines, so death went over all men in as much as all men have sinned, *Romans 5. 12. H. 21. 1 No. 1*.

Fourthly, the signes and marks of death.

1. Whereas a dead body, when in time, is rotten

## Of the Image of God.

ness, so tis with the dead soule, *Psalm 53. 3.* All are corrupted, that is loathsome and stinking: *1. Cor. 15. 50.*

3. Where death is, there is insensibleness: So the Soules dead in sinne are past feeling, *Ephes. 4. 19.* They are so senseless, they feelee nothing, though the foundations of the earth be remooved, *Psalm 82. 5.* They in greatest danger be, as the drunkard asleepe on the top of the malt, *Pro. 23. 34.*

3. Where men are dead, they feede not; present to them the daintiest dish; they taste not of it: so men that are dead in sinne, feede not on *Christ* the heavenly *Manna*, nor on the word, the foode of their Soules, if wisdom make her feast, and prepare her dainties, the living are her guesles, the dead in sinne heare not her invitations, nor come to her house; nor eate with her at her table.

## Of Gods Image on the Soule: refreshing.

First, what an Image is.

1. What the Image of God is.

2. How Adam was made after Gods Image.

3. Whether this Image still doth remaine.

4. In whom tis repaired.

First, what an Image is: It is not onely a resemblance, for the Sunne resembles God in light and brightness, but yet the Sunne is not an Image of God, an Image is a likenesse, forme, shape and similitude: *Gen. 1. 26.* Let us make man in our Image: *Exodus 20. 4.* Thou shalt not make any graven Image; nor the likeness.

The Image is substantiall, so Adam becometh Seede in his likeness, *Gen. 5. 3.* So *Christ* is the substantiall Image of his Father, *Coloss. 1. 15.* *Heb. 1. 3.* Or an Image is artificiall, *Math. 23. 20.* Whose Image is this, with *Christ*. By Art Images are molten, graven, carved,

paintes



# Of the Image of God.

13

painted; or an Image is spiritually taken: *Ephesians 4. 24. This Image is Holiness and Righteousness.*

*Secondly, what the Image of God is, is conveyed into the soul, by the influence of the Holy Spirit.*

No corporall likeness is Gods Image, for he is a Spirit of infinite perfection, the Image of God is Knowledge, Goodness, Sovereignty, Righteousness, Immortality, Blessedness, &c.

*Thirdly, how Adam was made after Gods Image.*

1. He was made Good, *Gen. 1. 31. Simply good; without mixture of evil.*

2. He was made in Knowledge, *Gen. 2. 9. 10. 11. 12. 13. 14. 15. 16. 17. 18. 19. 20. 21. 22. 23. 24. 25. 26. 27. 28. 29. 30. 31. 32. 33. 34. 35. 36. 37. 38. 39. 40. 41. 42. 43. 44. 45. 46. 47. 48. 49. 50. 51. 52. 53. 54. 55. 56. 57. 58. 59. 60. 61. 62. 63. 64. 65. 66. 67. 68. 69. 70. 71. 72. 73. 74. 75. 76. 77. 78. 79. 80. 81. 82. 83. 84. 85. 86. 87. 88. 89. 90. 91. 92. 93. 94. 95. 96. 97. 98. 99. 100.*

3. He was created Holy, *Ephes. 4. 24. Free from all sinne, set apart for God.*

So fourthly, He was made Righteous, *Ephes. 4. 24. being conformable to the will of his Creator, not to conceive a right of things in himself, but to will righteousness, to remember righteousness, to love righteousness, to speak righteousness, and to do it.*

5. He was made Glorious, having these admirable endowments shining in his soule, and his body, without infirmities or deformities; strong, nimble, active, healthie.

6. He was Immortal, heate, and cold, moisture and drought, were (as I take it) perfectly compounded: fire and water, aire and earth so curiously mixed, and so tempered by the Lord of the Artifices, that man was not in this estate capable of sickness, sorrow, paine, or death.

7. He was Lord over Gods works, and bare the Image of God in superiority, *Psalm 8. This was man*

## Of the Image of God

every way happy, resembling the blessed God: the favour of his Lord shined upon him; the Creatures submitted to him, the Aire did not distemper him, the Lyon fawned on him like the dog: he had no lusts, nor passions within him, he was ioyfull and wise, and rich filled with contentment and satisfaction, the most lively resembled, and was the very Image of his Creatour.

*Fourthly, whether this Image of God doth still  
remain in us.*

Man being in honour, he stood not in that condition: but, in like the beastes that perish: instead of goodnesse. *Now we are evill*, Matth. 7. 11. Instead of knowledge, we are ignorant, 1 Cor. 2. 14. Wee were created holy in *Adam*, but now are uncleane: *Iob 14. 4*. Instead of righteousness, we have found out many inventions contrarie to righteousness, *Eccl. 7. 21*. Instead of glorie, we have shame: which makes us cover the nakedness of our bodies with garments, and the nakedness of our soules with excuses, diminutions, distinctions, imputations to others: Instead of immortalitye, we have death attends on us, and is sure of us, although we be lords over the Creatures, sometimes they rebell: *King 2. 30. 34*. Instead of being happy, now we are accursed in our Natures with sinfull dispositions. *Rom. 7. 23*. And accursed in our labours: the Earth sometimes denyes fruits to releve us, and brings forth tyners and thornes to grieve us, *Job 31. 14*. *Gen. 3. 17*.

*Fifthly, In whom is the Image of God*

Only in the Regenerate, they solemne Covenants, that they are renewed in the spirit of their minds,

*Eph.*

# Of the Image of God.

15

*Ephes. 4. 23. God shines in their hearts. 2 Cor. 4. 6. And turns them from darkness to light. 2 Cor. 5. 18. In the Gospell they to behold Gods glorie, for they are changed into Gods Image, 2 Cor. 3. 18. They put off the old man, which is corrupt, and put on the new man, which maketh them like their first Creation, in holiness, and righteousness. Ephes. 4. 24. These new Creatures are after the Image of God by resemblance, and are in this his Image.*

1. He is a God of knowledge: *1 Sam. 2. 2. And these are an understanding people, being fed with knowledge, Jer. 3. 15. the Image of God is repaired in knowledge, Colos. 3. 10.*

2. God is an holy God, *Leviticus 11. 44. The Regenerate are a holy people: 1 Pet. 2. 9.*

3. God is a mercifull God, *Exodus 34. 6. And these are mercifull like him, Colos. 3. 12.*

4. God is righteous, *Psalme 91. 15. And these are a righteous people, Psalme 11. 6.*

5. God keeps his Covenants, *Daniel 9. 4. And these people keepe their Covenants, Psal. 11. 4.*

6. God cannot abide iniquitie, *Habakkuk 1. 13. And these people hate evil, Psalme 97. 10.*

*Adam had Gods Image in his body, and soule; the Image of God was in his Nature; and if he had not sinned, we had received Gods Image by a succession: but now tis by reparation, here imperfectly in grace; hereafter wee shall have it transcendently in blisse and glorie.*

## Reflections applicatorie from the former Heads.

1. Thou, O Lord, hast given me a soule, O graunt mee thy saving grace, else I were better have no soule at all. By thy grace preserve my soule, which thou hast given mee; thy way I admire, but cannot comprehend.

2. Thou

2. Thou hast ioyned my body and soule together, wherein I see thy power, and wisdom, that canst make such contraries to unite together: O ioyne Christ and my soule together, that nothing may make a separation; not life, nor death.

3. Thou onely hast Immortalitie from thy selfe, my Immortalitie is dependant on thee, the Blessed and Immortall God; give me Faith, and Sanctification here, and I shall not faile of Immortall blisse hereafter; let my thoughts of my mortalitie be mixed with hopes of Immortalitie, and dwelling here in this world, inhabited by mortals, let my conversation be in heaven, where mortalitie ceaseth; and when I come to lay downe at my death, the rags of mortalitie, let me not be like them, which despaire of Immortalitie, and so dy, raging, or senses, let mee live the life of the righteous, that my last end may be like his, that though I dy, as a mortall, yet I may have a witness within me, and give evidence without mee, that I have striven for, and waited for an estate Immortall.

4. As there is the death of the body, by the departing of the soule; so there is the death of the soule, by the departing of God from it: O Lord, my life, depart not thou from mee, then I dy. I dy eternally; pardon mee, and abide with mee, O cleanse mee, and abide with mee; set up thy government in my heart, raigne in my soule as a King on his Throne, I am thine, doe with mee, what thou wilt, onely abide with mee, and doe not depart from mee.

5. I live a life of Nature, whereby I excell the unreasonable Creatures; Lord, when shall I live a life of grace? say to my senses, dy; say to my prayers, live: when shall I attaine mortification, a heavenly frame of heart, and be filled with the fruites of righteousness? O-I that I might attaine to the abundance of grace, that my whole life might be godly, and religious.

## Reflexions concerning the soule. 17

religious, holy, heavenly and spirituall; that it might be my meate, and drinke, to doe thy blessed Will: O! that I could subdue my selfe; denie mine owne corrupt will; forgive iniuries, be spirituall in duties, love them most, that be most godly; be weaned from the world; and hope for *Christ* appearing, as he that lives a life of grace.

6. There is a life of Glorie, that followes a life of Grace: I may admire it, but not conceive it: I better know what tis not, then what it is. Honour, Glorie, Joy, Pleasures are there; for the measure is unconceivable, eternall life, good comfort is there: a Crowne, a Kingdome, an Inheritance is there: O! that the Contemplation of that long life, might swallow up my eager thoughts, for this short life; O! that the Joyes of that life, might in my mind sweeten the sorrowes of this life: O! that the rest of that life, might sweeten my mind in respect of the cares, labours, and trouble of this life: O! that with *Christ*, I could looke up to the Joy set before mee, and with *Moses* looke to the recompence of reward: Lord raise Meditations of heaven in my heart: give me a heavenly use of the thoughts of heaven: let me oftner thinke of heaven, oftner speake of heaven: be more resolved for the wayes of heaven: let me so have heaven in my soule here, that I may have my soule in heaven hereafter: that I may at last have that fruition, that I have now in expectation.

7. Thy Image, O Lord, was stamped on man, at the first, as a Divine Character; but alas! wee have lost thy Image, and are most ugly, filthy, abominable objects: I have nothing to present before thee, but sinne, and shame; yet I find in thy Word, there is a remnant shall be restored againe, thine Image repaired, and their soules and bodies saved, if I live and dy in mine owne Image; so I shall arise at the last, then O

mountains full on mee, O hills cover mee: I am ashamed of my filchinesse, now. I shall be worse ashamed then, if I be not in this life renewed: O repaire my soule, that I may have thy Image, not onely in superiority, beest thy Creatures under mee; but by regeneration, and renewing of the Holy Ghost.

*So much of the Soule, next of the Body.*

*Of the Body of Man.*

1. Whereof the Body was made.

2. Of the Basenesse of the Body.

3. Of the mortalitie of the Body.

4. Of the Immortalitie of the Body.

1. Section.

*First, whereof the Body was made.*

Not of the Angelicall Nature, nor of the heavenly Bodies, the Sunne, Moone, or Starres; but of the dust of the Earth; *Genesis 2. 7.*

This puts me in mind of foure things:

1. Of my basenesse, I am but dust, and earth.

2. Of my frailtie, and weaknesse, I am brittle earth.

3. Of my worldlinesse, I bend towards earth in my minde, to please my earthly body.

4. Of my lumpishnesse, heaviness, and dullnesse, I am but a clod of earth.

1. The basenesse of my body is expressed by these termes: Houses of clay; *Iob 4. 19.* Vile bodies; *Philippians 3. 21.*

2. The frailtie and weaknesse of our bodies, hath these termes: Man is a worme; *Iob 13. 6.* Man is as grasse; and as the flower of the field; *Psalm 103. 15.*

3. The worldlinesse of earthly man is set downe in these phrases: yee covet; *Iames 4. 1.* and tis said to



## Of the Body of man.

039

be wicked covetousnesse, *Esa. 57. 17.* The covetous man is an Idolater, *Ephes. 5. 5.*

4. The lumpishnesse of man is exprest in these words, or the like: Goe to the pismire thou sluggard: *Pro. 6. 6.* Awake thou that sleepest, *Ephes. 5. 14.* Arise, call upon thy God, *Iona. 1. 6.*

My basenesse should kill my pride, my frailtie should kill my selfe-dependance, my earthinesse makes mee unlike the Angels, my lumpishnesse should make me desire to be quickned.

### Secondly, Of the Excellencie of mans body.

a. Section.

1. The Excellencie appears by the Creation of it: the Blessed Trinitie consulted, and fashioned it: *Genesis 1. 26.*

2. All other bodies serve mans body, as being more excellent than they all: the Celestiall bodies give man bodily light, the fowles, and fishes, and beastes feed his body; the masse body of the earth is for his habitation, and delight, and nourishment.

3. Christ tooke humane flesh, and ioyned it to the Godhead, and now our bodies are dignified exceedingly.

4. Mans body hath excellent qualities: of strength, beautie, humblenesse, and activitie, so that we may say, we are *Artificiosa confecti*: *Psalm 139. 15.*

### Conclusions applicatorie.

1. I am to be carefull of this curious worke-manship of G o d, not to spoile it by wrastling, fighting, running, over-heating it, by drunkenness, intemperancie; or any way, or course to bring ruine upon it.

2. I am to serve G o d with my body, by bowing before him, speaking to him, and for him: by wor-  
king,

king, walking, doing, suffering, as the Apostle saith: Glorifie God with your bodies. 1. Cor. 6. I must not defile my neighbours body; nor oppress the weak; nor in passion, wound, or maine, kill that bodie, that is Gods noble, curious worke.

4. I am to prefer the bodies of my servants, being humane, (before the bodies of horses, dogs, hawks, parrots, monkeys, apes) to love them, and care for them, above the rest.

## 3. Section.

## Thirdly, Of the mortalitie of mans body.

Mortalitie, and death seises on mans body.

1. Because of sinne and transgression. Rom. 6. 11.

2. Because tis of mixt matter, and composition.

3. Because of Gods will, and ordination.

First, Because of sinne, Rom. 5. 12. Death came into the world by sinne: sinne ushers in death, and then turns from an usher to a sting: and though some that receive grace, doe pull out deaths sting by Repentance, yet death hath matter to worke upon, we being

2. Compounded of the foure Elements, and being made of composition, we are subject to a dissolution: fire, aire, water, and earth are our composition: heate, cold, moisture, and drought doe strive to hasten our Conclusion: if one prove predominant above the rest; then we conclude, and dissolve to dust.

3. Because of Gods will, and ordination; *Statutum est*: Tis appointed, and ordained; that men must dy, Heb. 9. 27.

## Conclusions applicatorie.

1. This should stirre up my hatred against sinne, which brings death: and to manifest my hatred.

1. By

- By studying the destruction of it.
2. By withdrawing the means that nourish it.
3. By growing to the feeling, and perception of it.
4. By frequenting holy duties, to subdue it.
5. By longing for the time to be quite free of it.
1. To remember my mortality: thereby
  1. I shall applie my heart to wisdom.
  2. Be the more moderate in all outward things.
  3. Be stirred, and quickned to duties; for there is no knowledge, wit, nor inclination in the grave.
3. I am to prepare for death, and dissolution:
  1. By being found in Repentance, then death will be an advantage. Daily, I am to enlarge, as I am able, my Conviction, Confession, shame, sorrow, and forsaking of my sinnes; so will the sting of death be pulled forth.
  2. I am to dy daily in affection: I must be a man resolved for death; then, when sickness, and death comes, I may say, Whom seeke ye? I am the man, take mee, I submit myselfe to you.
  3. When death comes, (as *Adams last line*) being my last line, I am to endeavour to dy in Faith, with patience, hopefully; with giving instruction to others, if I have time, and leisure, and speech; and to dy with devotion, commending my soule to the Lord.
4. Death is an Ordinance of God; and all his Ordinances are for our good, and much to be regarded. The benefit of this Ordinance, is,
  1. We by it attaine to perfect mortification, that we have beene digging at all the time of our new life, and loosened the earth about the rootes of sinne: death comes as a mighty blustering wind; and downe fall our sinnes, never to rise any more.
  2. By this Ordinance, we come to rest from all our drudgerie, turmoile, and labour.

## Of the Body of man.

3. By this Ordinance, we have a passage to Paradise, the third Heaven, *Abraham's* boosome, to the companie of innumerable Angels, to our Inheritance, our Masters Joy.

4. By this Ordinance, we be freed from oppression, dangers, feares, faintings, indisposedness, and evill companie.

5. By this Ordinance, we be freed from the mortalitye of the body.

## 4. Section.

6. *Immortalitye of the Immortalitye of the body.*

It was Immortall in the Creation.

It shall be Immortall at the Resurrection.

Some have Immortalitye by transiſion, as *Heresh and Elias*.

First, Mans body was immortall by Creation: before sinne, there was no death; for death came into the world by sinne: *Rom. 5. 12.* Man was not made mortall, and sinne came, not as an accident, to make death a punishment; as though *Adam* had dyed, if he had not sinned: but now hee dyes, as a punishment of sinne. But he was made immortall, and had he not sinned, he had not dyed; for Angels had immortalitye by Nature; *Adam* was immortall in his condition, being in his body, without deformitie; and his humours without contrarietie: death, and all the fore-runners of death; sickness, sorrowes, paines proceed from the transgression, which altered our immortall estate.

Conclusion. application.

1. Sinne alwayes makes mans exchanges woefull, we have changed immortalitye for mortalitye, beauty for deformitie, felicitie for misery.

2. This should humble us to consider, wee were once

phoe immortall, great men decayed, doe look  
back on former dignities with sighes.

3. We should lay the blame on our selves, when  
we see our ruines: Go to, mortals happy, blessed,  
and immortall in our Creation.

4. We may take a view of our immortall condition  
on by Comparisons: If *Adam* was so beautiful  
what was *Eve*? If *Adam* was so wise of heart, if  
some men are so wise, and skilfull, having but some  
remainder of the excellencie *Adam* lost, what had he  
then himselfe in his ioyfull, innocent immortall con-  
dition?

Secondly, the body shall be immortall as it is  
in the Resurrection.

It shall be raised spirituall, and immortall: 1. Cor.  
15. 44. Mortallie, and death, and sinne shall be abo-  
lished.

There is the dominion of sinne, the being of sinne,  
the consequent of sinne.

The dominion is taken away in our Regeneration:  
the being ceases at our sanctification, the consequent,  
which is death, and mortallie, is taken away at the  
Resurrection.

Conclusions.

1. I that like of comelinesse, and activitie, may  
looke backward, what I was in this world, and forward  
what I shall be at the Resurrection: and so excuse  
my griefe, and hope.

2. In all my lumpishness, and drowsiness, natu-  
rally, I may comfort my selfe in this, at the Resur-  
rection, I shall serve God with that conformitie of  
body to my soule, that there shall be no leys, nor im-  
pediment:

pediat us; then my body shall be immortall, with my soule.

Then there shall be no actuall euill, for Grace shall be consummated; nor potentiall euill being confirmed in goodnesse, and holinesse; no actuall corruption of body, then there shall be no defect, nor deformitie: no potentiall corruption when all passions cease, all sufferings are abolisht; the passions of the senses shall be with Joy, and perfection, as Musique perfects our hearing.

3. With the prospect of Faith, by the light of the word, I see a glimpse of the bodies immortallitie; as *solon* had naturall beaurtie, and here is a reflex in this life; but then the soule shall appear in the body, as the wine in the pure glasse, the soule shall be ioyned to God, the body to the soule, and both glorious.

*Now we come to the particulars, and first of the Head.*

The Head of man is:

1. Obvious, and is seene above the rest of the body.
2. Dishonourable above the rest of the members.
3. Tis united to the body.
4. It conueighes influence to the body.
5. It is sensible, all the senses be in the Head.

1. Section.

First, the Head is obvious, most seene.

It being placed on the bodie, high things we seene perceive; as a hill, or mountaine, or tree: so presently wee looke on the face, and elswe froming, or smiling deformitie, or beaurtie.

*Conclusion.*

There be three Heads: Mysticall, Politicall, Naturall.



turall. Mystically *Christ* is the Head of his Church, which he hath redeemed: Politically, the Prince, and Governours be Heads; So are Masters of Families, the Heads of their Families: Naturally, the Head of the body, is the Head; and Chief. As my mysticall Head is obvious, not onely to the Angels, and Saints in heav'n by vision; but to the Saints on earth by Faith. *Job. 2. 1. 2. 10. see Iesai. 61. 1. 2.* So is my naturall Head to all Spectatours. As I am the Head of a Family, I am obvious to God, who sees my sayings, and forgives mee: to my Conscience, who tests, and checks me: to men, who see, and straiten me.

2. My Governours, as Heads of the Politicall and Civill  
God give them Grace to be good examples, that the  
people may looke on them, and learne vertue, and  
godlinesse, wifedome, and moderation.

13. LONDON is an Head-Citie, as the Head of  
Aram was Damascus: Eph. 7. 2. And a Light obui-  
ous to the Land: O that they might see here Pietie,  
and Godlinesse, Temperance, and Justice: and lesse  
pride, riot, and wantonnesse.

There be four Unions in the body  
The first is the Union of the Head and the  
The second is the Union of the Head and the  
The third is the Union of the Head and the  
The fourth is the Union of the Head and the

**T**HIS Naturall Head is honourable, for is the Political: 1. Pet. 2. 17. Kings, must be honoured, 1. Tim. 6. 15. Masters must be honoured; but Christ, who is the mysticall Head of his Church, he is to be honoured above all.

I wish looks will not touch my Head, but  
 Wisdom will make my face shine: **Stef. S. And**  
 model.

most earngo to them; and devotion to God, is the chief way, to make my head comely and honourable.

1. As a Governour, and Head of a Familie; my honour is to give example of Piety, moderation, diligence, mortification, patience, and clemency.

2. I must my thoughts to Christ, who is most excellent in dignity, and honour: he that is Head of the Church, is the most excellent.

3. The Politicall Head is subordinate: he is absolute, and independent.

4. Men rule those that live: a present being: Christ is Head of those departed, and of them yet unborn.

5. Men are Heads by Government: Christ is Head by Influence.

6. Men govern often uniauly; but Christ always rightly: only he is most honourable.

### 3. Section.

*Thirdly, the Head is united to the Body.*

The Anatomists say, in the Head and necke be 125. muscles: there is a nerve, and strong, and inseparable union betwene the head, and the body.

There bee foure Unions, considerable:

1. A Naturall, betwene the head, and the body.

2. Matrimoniall, betwene man, and wife.

3. Divine, betwene the two Natures of Christ.

4. My Head, betwene Christ, and his members.

#### Conclusions:

1. My feete, and toes, though farthest off, are united to my Head, being members.

2. If I be a hundred miles distant, yet I am united to my wife, in the Matrimoniall bond.

3. Christ

*Of the Herd.*

27

3. *Christe* God's head, and *Marihood* make one *Christ*,  
as soule, and bodie make one person.

4. I am Myſtically united to *Chriſt*, though he be in Heaven, and I on earth.

Fourthly, the Head and the Body. In the New Testament, the Head is Christ, and the Body is the Church.

#### 4. Section.

3. The Natural Head is double of the wrong  
to the members, the Tongue will speak, the  
will weep, the Heart will weep, the

### Conclusions:

1. Not to envie them in Dignitie: they have honour, but accompanied with care, and great accompts.

2. To love my Government, and to labour to preserve their lives, credits, and comforts from them I have direction, and protection, as the volume my prayers, love and service.

3. I will shunne irregularitie : tis Icfuiticall, and Brownifticall : I muft learne to fubfift, where men crosse not God : In things indifferent, their part is to direct, mine to obey.

4. Christ is the Head, of His Body, of His Church, of His Kingdom, of His Kingdom of Glory. All good desires, inclinations, all Grace, and good works, and all that is derivative from this Head, who is called for ever.

1 Cor. 15.  
John 1.

*Fifty, the Head of the Family*

## 5. Section

All the fenses are in the head, though not all entirely

in the head, for the touch is all over the body.  
*Conclusion.* *Why persecutest thou mee? Acts 9.*

1. Christ our Head is sensible in their troubles. Of old he was troubled with them. *Isaiah 53.* And in the New Testament, the Lord to Saul: *Why persecutest thou mee? Acts 9.*

2. Godly Governours are sensible of the estate of their people as David. *2 Sam. 24. 17.* *Whereas have these things done? Let my hand be against him, and my faithful hand.*

3. The Naturall Head is sensible of the wrong done to the members, the Tongue will speake, the Eye will weepe, the Ear hearken for a remedie.

*So much of the Head.*

*Of the Eyes.* *Isaiah 66. 18.* *For I have heard a voice from heaven, saying, I will send and will gather together people from all nations, and they shall come, and they shall see my glory.*

1. The cause of Seeing.

2. The benefit of the Sight.

3. The miserie of Blindness.

4. The gracious employment of the Eyes.

1. Section.

*First.* *Of the cause of Seeing.*

THE Naturall cause is from the spirits coming from the Optick Nerves, into the Apple of the Eye, wherein there is a Crystalline humour, which receives, as by a mirror, the kinds of colours, and the figures, numbers, and motions of bodies. The Nerves of the Eye are seated betwene the place of the Originall: there is a meeting like the forke of a tree, and the spirits meet together, so the Object is one: otherwaies all things would seeme double to us: *Anatomists* say, there are six inner parts of the Eye.

1 The

1. The Fat which is placed above the Eie, for to defend it from cold, to keepe it from the hardnesse of the bone, and to fill up the distance of muscles, to further the quick motion.

2. The Glandule is seated in the upper part of the Outer Corner, lodged in the Fat, and full of moisture, to help the Nimble motion.

3. The Nerves, being in Number six; whereof foure be straight, and two Oblique, or winding.

4. The Tunicles are six in number: The first, *Adnata membrana*: the utmost pannicle which cleaves to the Eie, and makes it firme: The second is *Cornea*; tis firme, and bright: The third is *Vvea*; which some count the fourth thinn Membrane, wee see our selves in the Apple of ones Eie, from the hole of *Vvea*: The fourth is *Membrana Papillaris*, the membranous Circle compassing the Ball, or Apple of the Eie: The fifth, a *Cristalline humour*: The sixth, like a spider's web.

5. The Humours: There is first the watric humour: secondly, a crystallick humour: the third, is like moulden glass; exceeding the other two in quantitie.

6. The Vessels of the Eie: either externall from the veins, that nourish the Eie, or internall from *Chorion*, and *Cerebellum*: there be two Nerves appointed for the Eie; one for sight, called *Opticus*, the other, for motion, called *Motarius*.

And now I come to heare what the Word of God saith: The Lord hath made the Eie to see: *Heformed the Eie*, Psalme 94. 9. And for what end, but to give light to the bodie? he made all things for his owne Glorie, and all things shall turne to his Glorie, he made the Earth to hang in the Aire, and it doth hang in the Aire, he made the Bankes to keepe in the Sea, and they doe so: he made the Sunne, to be the light of the World, and the Eies, to be the light of the bodie.

Math. 6. 22.

maad, si fers avoca hooq a d h i w u f e i t . I  
 thobind chrmort i i *Conclusions.* bico most i i b i n b o b e  
 telum to equallib chs qu i l n o r b u a , anod ed i to

1. As the Lord gives Eies, so he gives light, without which, our Eies would be unprofitable: for in the darke, wee see nothing. God hath not made my body, as a faire building without windowes. Light is a pleasant thing; and *as you fall so behold the Sunne.* Blessed be God for the light; and againe, Blessed be God for my Eies, whereby I doe partake of the benefit of the light.

2. If the Lord give Eies, and Sight: let mee take heed, I abuse not that Blessing; and deprive my selfe of it, by late working to get money; or, by late gaming, I may weaken my Sight; by drinking excessively, I may bring rednesse, and Reumes; and by fighting, and quarrelling, I may loose an Eye, as some have done to their griefe.

3. If God gives Eies and Sight: then he must needs see himselfe: they be fooles, and have not yet learned to be wise, which say, The Lord sees not: None be so brutish to denie this, unless fordid Atheists, that have no Religion: or upstart Antinomians amongst us, which are a disgrace to our Church, and a blot to our Religion.

Psalme 94. 6.  
 7. 8.

2. Section.

*Secondly, Of the Benefit of the Eies.*

**T**HE Benefits may be ranked to two Heads, Safetie, and Comfort. First, Safetie: by our Eyes wee see dangers at Sea, as farre off, by a prospective glasse, Pirates are discovered; and enemies, that way, are in some places, and times discovered at Land. By the Eye we see a thorne, and smite our selves, if wee can: wee see what is hurtfull in our meates, our houses, our Cattell: and some of the wiser sort of women, doe

see



see by their husbands looks, they be come to be angry, and so give them good words, or else silent, or avoid their presence for a time.

2. The Comforts by the Eyes are Profit, or Delight.

First, the Profit is great: all Arts, and Sciences are learned by the Eyes, and used with the Eyes: When we see a man, that was blind, to attain to learning; we admire it, and count it extraordinary. The Plow-man, the Mechanick, the Shop-keeper, the Divine, the Lawyer, the Souldier, love all to see what they doe: and doe what they see in their callings, and learne much by the Eyes (if not all) by their bodily sight, and their Reasonall sight concurring together: Onely the man, that turns the grind-stone, may be blind, this is no Art, but a drudgerie rather: the horses at the water-houses, being blind, or blind-folded, can doe that worke, to make the wheelles goe round.

Secondly, for delight; we open those windows: and view Gods Workes, with Joy: or mens Actions with alacritie: or their activencesse, motions, gestures, manie conceits, with our smiling, laughing, applauding, rewarding them, which evidences our delight. A Wind-mill, at first making, was an admiration; and a delight to the Spectatours: so was a Clock, and a pocket-watch: London Bridge, and Pauls Church, manie have beheld with delight; and, when they be againe repaired, the Spectatours will have new delight: When the inclination within meets with a suitable object without, and we come to have a prospect in it, then comes delight in the enjoyment.

#### Conclusions.

1. Have I such safety by the Eyes to prevent bodily dangers? if I see a Cart in a narrow place, I stand up, least it hurt mee: if a man come running with

with a drawne sword, I flie away from him : if the fire kinde, in my house, on my stuffe ; I, seeing it, trie out : if the boate be halfe full of water ; I will not goe into it, fearing a leake in it. Why should I not use my Rationall Sight, which Religion rectifies, and doth not abolish ? the Rat sees the baite, but knowes not, it is a trappe : I should looke to the Consequences of sinfull pleasures, and see their danger before hand : the winne is red to the view, but bites as a Serpent in the end ; it bites away my Reason, my Credit, my peace, my time, my silver. The harlot is finely drest, so is her chamber, but she digs downe a man ; *Pro. 7. 26.* *She does a man, spoiles him, consumes him, infatuates him, and brings him to a morsell of bread ;* this light woman brings him to a heauie curse ; this faire woman brings him to a foule disease ; this smiling woman brings him to sorrow at last ; it may be, when tis too late.

2. If my Eyes be for the safetie of my bodie, much more are Gods Eyes for the safetie of my bodie, and soule. *Except the Lord watch the Chie, the Watch-men watch in vaine :* Except the Lord watch the bodie, the Eyes watch in vaine : Gods care is my safetie ; It is his Eye that is over his people, from one end of the yeare, to the other : *Deutero. 32. 12.* *The Lord preserves, and defends mee, and Compasses mee about with songes of deliverance,* *Psalm 32. 7.*

3. Have I such Benefit by my Eyes, as to learne to read, write, and worke, and to eame mine owne bread ? what shall I render to the Lord, for the benefit comes this way ? without learning I am like a mortall beast, without trade, or Art, I am in danger to be like a moyling beast. Beggars, that have neither learning, nor trade, nor Art ; live most wretchedly, without Magistracie, or Ministrie, or Lawes, or Sacraments, or Marriages : I meane the wofull sort, and they end in without honour.

4. Is there shining in by the windowes of mine Eyes, the light of pleasures, and delight?

1. Let me be wile to take heed of finfull delights, not to delight at mens deformities, or infirmities, or miseries, or iniquities.

2. To be moderate in Lawfull Delights, regarding the things, the measure, and time.

3. To enlarge Spirituall Delights, here no surfeit, or excess is to be feared.

4. Expect Eternall Delights, at G O D : right hand. Those in reversion are far more excellent, than the voluptuous mans present, shadowish, possession.

*Thirdly, the Miserie of Blindnesse.*

3. Section.

**T** I S said, he, that hath but one Eye, may be a King in the Land of Blindmen : but what can his Subjects doe in peace, or warre? fooles, and blind goe together : neither can distinguish aright. The Blindmans miserie, is,

1. He is in danger : if he be led by another like himselfe, *but he doo fall into the ditch.*

2. He is apt to be deceived, and abused.

3. He is in an estate very uncomfortable.

4. He is beholding to others, yea to his dog, that leades him.

*Conclusion.*

1. If the Blindman be in danger to fall into the ditch; whether is he like to fall, that is spiritually blind? as the Pharisees, *Matth. 23. 17.* Those, that be naturall men in blindnesse of mind, are under the power of Satan : *Acts 26. 18.* From this Blindnesse, the Lord deliver my Soule.

2. The Blind are apt to be deceived, and abused; fo-

tis with them spiritually blind : they doe take errour for truth ; passion for zeale ; covetousness for good husbandrie ; false Teachers beguile them ; weake Arguments prevaile with them ; they see no great difference betweene Papists, and Protestants : had they but owle-light, they might distinguish betweene an Ass, and a Lambe : But the Blind eate manie a Fle, And doe they see that eate their God ?

3. The Blind is in an uncomfortable estate ; those sit in darkness, are in the shadow of death : and death is uncomfortable. The Papist, that blowes out the light, hath but a bedlam-comfort ; and, getting loose the six *Marian* yeares, they made mad worke, and we in England had little Comfort, till they were chained up, and lights set up.

4. The Blind are beholding to others ; even to the Dog, that leades them : none so slavish as they ; yet some mystically blind, are intolerably proud, and thinke they be rich, and want nothing ; but are poore, and blind, and naked. They will be beholding to base Instruments, to accomplish their owne ends. To live in a golden slaverie, and a blind braverie, pleases them : they see not others deride their waies, and courses ; tis because they be basely blind, and blindly base ; and are beholding to Bribers, and Flatterers, and Temporisers, which be as the Blind-mans Dog, to lead them.

5. Here may I take occasion to bewaile mine owne inward Blindnes : How little a portion doe I know of God ? I can but little discern of holic Mysteries, because of darknesse.

4. Section.

*Fourthly, Of the gracious employment of the Eyes, which is*

**F**IRST ; In Devotion. 2. In Observation. 3. In Mourning. In Devotion to lift them up to Heaven,

ven. with prayer : to read the Word of God, or other holis Bookes, to further Devotion. In Prayer, I glorifie God, and doe expresse my inward Devotion by externall Acts. By Reading, I understand by Bookes, *Dan. 9. 2. Psalme 119. 104.* I am capable of a Blessing, *Psalme 1. 1. Revela. 1. 3.* and my heart may with Gods Blessing melt this way, *1 Kings 22. 11.*

Secondly, my Eyes should be gratiofully employed in Observation of God, in his workes, and in his Judgments. In his workes,

1. Because they demonstrate his eternall power, and God-head, *Rom. 1. 20. Psal. 19. 1.*

2. My Eyes should behold his workes with Delight, *Psalme 111. 2.*

3. God hath made his Workes to this end, that we should behold them : *Esal. 40. 26.*

Also, to behold his Judgments.

1. By them, God is knowne : *Psalme 9. 16.*

2. That I may learne to feare : *Psal. 119. 110.*

3. To beware of the like sinnes, as have brought Judgments on others : *1 Cor. 10. 16.*

I should also observe men in their actions: 1. Sinfull,

2. Civill. 3. Religious.

1. This is not Arbitrarie, but a Dutie : *Psal. 37.*

37. *Rom. 16. 17. Philippians 3. 17.*

2. By Observation, wee may the better judge whom to avoid, and whom to companie withall.

3. By Observation of their Lacedaemonian vices, we dislike vice, and seeing their Christian Vertues, we are incouraged to Imitate them; and answer the objection of Impossibility, to be godlie, and gracious : when wee see Vertue, and Godliness acted.

4. We know the better to admonish, exhort,

comfort, and encourage: and we discerne whom to resort unto for Counsell: and hereby to be stirred up to praise God, for the gifts, and Graces of others: *Galat. 1. 23. 2 Cor. 9. 12.*

*Mine Eyes should graciously be employed to looke on mens necessities: Spirituall, and Temporall.*

First, Spirituall: To Pray to the Lord of the Harvest, to send forth Labourers, *Matth. 9. 38.*

2. That wee may prize his Word, which wee doe enioy, it being a speciall favour: *Psalm 147. 20.*

3. To be stirred to the care of fruitfulness, least the Lord bring on us a spirituall famine: *Amos 8. 11.*

*At last mine Eyes should graciously looke on the bodily necessities of men.*

1. To stirre up the bowels of Compassion.
2. That I may comfort, and releeve them.
3. To make me thankfull for my prosperitie.
4. To prepare my selfe for the like afflictions.

*Lastly, mine Eyes should be graciously employed in Mourning.*

1. For our owne sinnes.
2. For the sinnes of others.
3. For the afflictions of Gods people.

*First, for our owne sinnes.*  
That is, my sinnes, and the sinnes of mine: those under my Charge.

1. Because sinne dishonours God, *Rom. 2. 23.*
2. Sinnes be painefull, and grievous, *Rom. 7. 24.*
3. Sinne separates from God, the Chief Good: *Esa.*

59. 2.

4. Sinne



4. Sinne makes us Captives, *Esay 61. 1. 2. 2 Tim.*
5. Sinnes are our debtes, *Matthew 6. 13.*
6. Sinnes are our grievous burthens, *Psalme 40. 12.*
- Our defilements, *2 Cor. 7. 1.* Our wounds, *Psalme*

*Secondly, I should mourne for other sinnes, abroad in the world.*

1. Because Gods Children have done it, *Psal. 119. 136. 2 Pet. 2. 7.*
2. The sinnes of others may bring Judgments.
3. This Mourning proves a man righteous, *Ps. 7.*
4. The Mourners have bene saved, when others have bene destroyed: *Ezek. 9.*

*Thirdly, I should Mourne for the afflictions of others.*

1. God requires it, to Mourne with them: *Rom. 12.*
2. We shew by it, we be feeling members.
3. They in affliction expect it, *Job 19. 21.*
4. The same measure shall be paid to us against we measure to others.

*So much of the Eyes.*

Of the Eares.

1. Of the Denomination of the Eares.
2. Of the placing of the Eares.
3. Of the admirable work-man-ship of God, in the Eares.
4. Of the Benefit of Hearing.
5. Divers Resolves about Hearing.

## 1. Section.

First, Of the Denomination of the Eares.

**T**HE Denomination is taken from their employment; they draw-in the sound: So *Auris*, without the aspiration; *Hauris*: or *auris*, *quasi audis*, *ex Audio*. They are Hearers called eares, for drawing-in the sound, or els; of *Aere*: for, *Sonus per Auram ad Auram deferitur*, The Sound by the thine Aire to the Eare is conveighed.

## 2. Section.

Secondly, Of the placing of the Eares.

**T**HAY are placed in the middle of the Head; so that we heare Sounds straight-forward, and also round about; and the Eares are placed one against the other, in comlineffe, and order. The Beasts have their Eares more forward on their heads. The Eares be placed in the Head, the most honourable part; and tis our honour to heare: neare the braine; to remember what we heare. And to disgrace them, that offend, the Eares bee cut off on the Pillorie, by the Magistrats Appointment; that though they have the sense of hearing, yet they are deprived of the outward Eares, which beautified their heads.

## 3. Section.

Thirdly, Of the admirable work-man-ship of God, in the Eares.

**E**Xternally, there is (*Lobus*) the lap of the Eare, and the (*Cutis*) the upper skinn: then the *Cartilage*, or *gristle*, then the *membrane*, the thin skinn, that ties the *Cutis*, and the *Cartilage* together. Some say, there bee three muscles in the Eare, and the hole is winding to receive the Sound: the more without danger; and the haire growing in the Eare, defend

it from that would hurt, and more easily fall into it.

Internally, the Eare hath, within a Membrane, which separates the internall Aine, from the outward Sound: This Membrane is thin, and drie, and strained like a Drum. And there be three of the least bones, and the most curious in all the bodie of man; and they have three names from their former, or likeness; the one, like a Hammer, the other, like an Anvill; the third, like a Stirrop. There be foure Cavities in the Eare; the first, the Passage for hearing; the second, the Tunnell, for to let in the Sound; the third, is the Labyrinth, having divers semi-circles; the fourth, is *Cochlea*, or the perwinckle; because of the wreathings to conueigh the Sound, which comming in, doth move the *Tympanum*: then the three bones are moved, and wee discern the diversitie of Sounds. This is the worke of GOD, more fit to bee admired, than discussed.

*Faithfully, the Benefit of Hearing.*

4. Section.

1. **W**E learne to speake by the Eare, for those which be borne deafe, doe live dumbe till their daies.

2. By hearing, men attaine to Arts, and Sciences, Ocular Instructions goe with visible Demonstrations.

3. Mans life is sweetned by Conversing with one another: our Eies would little comfort us without light; nor speech profit us without hearing: wee doe retort words, and propound questions, and speake merrily, because one heares another.

4. By this Sense, wee are delighted with the singing of Birds, and the sweetnesse of Musique, vocall, and instrumentall.

5. By hearing, we get Faith, *Rom. 10*: By Faith we lay hold on Christ; by Christ, we come to eternall life:

5. Section.

life: therefore the Benefit of hearing is most excellent.

*Fifthly, Resoloni, Concerning the Eares, and concerning Hearing.*

1. What is the cause of the Echo?

*Ans.* As in the Water-pool, the Circle comming to the Banke, rebounds, and returns back, so the voice, or sound, being bounded in vaultes, or hollow places, rebounds againe; which wee call an *Echo*, or, resounding.

2. What Instructions may wee gather from the three bones, that move on the *Tympanum*?

*Ans.* The one like an Anvill, may teach us, they are bad hearers, that be not altered; but like an Anvill: their Consciences bee Sermon-proofe: let the Preacher say what he can, they are of the Anvills Nature: The second bone, like a Hammer, puts us in mind of another sort of bad hearers, which learne much, to forme, and fashion others onely, and to worke on them for reformation; but are as hard as Hammers, to reflect on themselves: The third bone, like a Stirrop; puts us in mind of them, that will heare, and learne; to get advancement, and ease: a *stapesian* hearer.

*Again, a good Hearer.*

1. Is like an Anvill in invincible patience, and constancie, heresies, and persecutions may beate on him; but he is alwaies the same, *semper Idem*.

2. He is as an Hammer to beate downe error, and profanenesse, within his owne Reach, and power; and to knock at heaven Gate, by fervent Praier.

3. He is as a Stirrop, he aspires by hearing to advance his mind to heaven; and to settle the peace of his Conscience: he heares, and gives care for heavenly mindednesse, and peace; settlednesse, and assurance to be

to be kept from falling and to finish his Journey with Comfort.

3. What may we thinke of them, which doe follow no particular Calling, but doe altogether follow Sermons all the weeke?

*Ans.* 1. The Devils malice appeares in fact, hee prevailes with them, to make them scandalous Professours: so others shunne them, and Religion.

2. That which God ioynes, they doe separate, that is, a generall, and particular Calling.

3. They be in danger to be cloyed at first, or fall to be idle, or caried away with errors; being not ballanced with honest labour.

4. If all should be as *Maris*, where should the Common-wealth be? If all should be as *Martins*, where should Religion be? both doe well, being mixed together; Action with Devotion.

5. They have bodies, as well as soules; and should labour, as well as heare.

6. They make not Conscience of the second Table, to pay scot, and lot; to helpe to maintaine Magistrate, and Minister: Commandement 5. By labour, to preserve life: Commandement 6. Chastitie, Commandement 7. To eate their owne bread by labour, Commandement 8. These often are praters, busie-bodies, Censurers, against the 9. Commandement; and covet other mens money, meate, and Cloathes, not having laboured to have of their owne: thus partly by borrowing, and never paying againe, and partly, by begging, that should feede the labouring Bee, they doe live offensively, and in the height of their Pietie, they be in the depth of Iniquitie.

4. What Arguments are powerfull against the worldly, and malicious man; that on the other side, will not heare Sermons, but opposes them that are diligent Hearers?

*Ans.* There be foure maine Arguments to stop his mouth, and for ever to silence him.

*Woe* 1. *We have knowledge, the mind is not good;* Pro. 19. 2. *but by hearing, we get understanding;* Jer. 3. 15.

2. *Without Faith, we cannot please God;* Heb. 11. 6. *But Faith cometh by Hearing;* Rom. 10. 17.

3. *If any man have not the Spirit of CHRIST, the same is none of his;* Rom. 8. 9. *But we receive the Spirit by Hearing;* Galat. 3. 2. Acts 10. 44.

4. *Except we be converted, we cannot be saved;* Matth. 18. 3. Luke 13. 5. *But we are converted by the Preaching of the Word;* James 1. 23. 1 Pet. 1. 25.

5. *Quest.* How should a Christian heare aright?

*Ans.* 1. He must Repent, and prepare to heare: *Psalm* 26. 6.

2. He must heare with humilitie, *Deuter.* 33. 3.

3. He must heare with Judgment, *1 Cor.* 10. 15.

4. He must heare with Meeknesse, *James* 1. 21.

5. He must heare with Reverence, *Acts* 10. 33.

6. He must heare with Attention, *Ier.* 13. 15.

7. He must heare with Affection, *2 Kings* 22. 19.

8. He must heare, to treasure up the Word in his heart, *Psalm* 119. 11.

9. He must Question with the Preacher, after hee hath heard, if he understand not: *Matth.* 13. 36.

10. He must heare to Obey: *Luke* 11. 28. *Iohn* 13. 17.

11. He must labour to heare with Faith, *Heb.* 4. 2.

6. *Quest.* What hearing is most grievous to a good man?

*Ans.* 1. The hearing of Blasphemie against his God.

2. The hearing of treacherie against his King.

3. The Reproches against the godly.

4. The hearing of Ribandrie, and filthy talke.

5. The hearing vice, and wickednesse commended;

this



# Of the Mouth, and Tongue.

41

this is as galley, and wormewood to him.

## Of the Mouth

The Mouth is,

1. The Gate of the bodie, or Doore, or entrance.
2. Tis the Nourisher, to feede the bodie.
3. Tis the Distinguisher, or Sentence-giver.
4. Tis the Interpreter of the heart.

## Of the Tongue.

The Tongue is,

1. The Glorie of a man.
2. Hard to be kept in order.
3. Resolves concerning the Mouth, and Tongue.

First, the Mouth is a Gate, or Doore.

I. Section.

**T**IS called OS in Latine, because thereby we put in meate, as it were by a doore, and thereby wee put out spittle, and send-out breath, and words: The Scripture gives the Name of a Doore, Metaphorically, to the Mouth: Psalme 141. 3. *Keep thou the Doore of my lips.* Micah. 7. 3. *Keep the Doores of thy lips from her, that lieth in thy bosome.*

## Conclusion.

A Doore hath a locke, to make it fast: so should my Mouth be locked fast with the Feare of God: not to be opened to excessive eating, and drinking: these passe in by the Mouth: nor to be opened to foolish talking, and telling, cursing, swearing, or flandering, vaine boasting, or mocking: these goe out of my Mouth.

2. A Doore hath a knocker; which causes them within to open: so occasions are still ministred to us to open our Mouthes. Questions are as so manie knockes; wrongs, and Iniuries are hard knockes; and we soone open the Doore of our lips, and, it may be, let slip Complaininges; curses; evil wishes: and our Doores be not easily shut againe.

3. A Doore hath a bolt, which onely they within can open: this bolt is a wise Resolution. In some Cases, and Companie, silence is best, though they knocke, yet we should not open: let them loose their expectation; and our silence may be our safetie, and preservation.

4. A Doore sometimes is onely put to with a latch, there is neither Locke, nor bolt: so is the Mouth of a Temporiser. If a Theefe, or a Bawde, or a Civill man, or a Divine draw the latch, there is entrance: so some can discourse for errour, or truth; of worldlikenesse, or filthinesse: the first occasion prevails, be it whatsoever; there is an easie entrance, no Locke of the Feare of God.

5. As divers Doores being open, we have divers prospects: so tis with the Doore of mens Mouthes. Open a brother-house doore, you see Curtizans, Bawds, light persons: so some mens Mouthes once open, wee perceive nothing, but filthy talke, and scurrilitie. Open the Beare-garden-Doore, there is confusion, noise, fighting; barking: so some mens Mouthes are opened with Contention, Railing, Threatning, Censuring, mis-calling. Open a Shop-doore, you perceive wares, commodities: so some mens Mouthes once open, all the Discourse is for Bargaines, purchases, Interest, money, engrossing, getting, saving, suretyship, security &c. Open some Doores, you see pleasant walks, fountains, herbes, bowens, grassplots, trees, fruites: so some mens Mouthes once open, their talke is wittie, pleasant, profitable.

profitable, wise, harmlesse, honest, favourie. Open the Church-Doore, there is Divine Service, Exhortations, Praises, Psalmes: so open some mens Mouthes, their talke is Divine, holie, gratious; they praise God, and edifie men.

*Secondly, the Mouth is the Nourisher, to feed the bodie.*

2. Section.

**T**H E Babes sucke their Nourishment; men doe feed; the Mouth receives all, and conveighes it to the stomacke: so the foode is converted, and dispersed, and the bodie nourished, and preserved.

*Conclusions:*

1. I see the difference of our Nourishment, in the wombe, and in the world; In the wombe, the Child is nourished by the Navill; In the world, by the Mouth.

2. I see the difference of Nourishing the bodie, and nourishing the soule; the bodie is fed by the Mouth; but the soule, by the Eare: *Esa. 55. 3. Jer. 3. 16.*

3. As the Mouth is to the bodie, so is the Minister to the Congregation: hee speakes to God for them; hee receives nourishment, and conveighes it to them; we should not be a meane to wrong the Faithfull Preachers, that were Impious: nor separate from them; that were erroneous.

*Thirdly, The Mouth is the Distinguisher, or Sentence-giver.*

3. Section.

**T**H E Mouth tasteth: *Matth. 23. 34. 3.* It distinguisheth betweene bitter and sweete; between that is sowre, and that is unsavourie;

that is moist, and that is drie; that is stale, and that is new. The Mouthes Roofe is of sinewes, so hard, that everie meate cannot hurt it; so soft, that tis sensible: hollow, and round; for the moving of the meate, and the drawing-in the breath, the Mouth is so apprehensive, that if you put hot, or cold into it: or if you put a haire in your meate, tis felt; the smallest gravell; or fish-bone is discerned; the Mouth will quickly give sentence, what is pleasant, and what is offensive.

*Conclusions.*

1. Wee may see how wisely the Lord doth fit things together: Sounds with Hearing, Light with Sight, Savours with Smelling, Meate with Tasting.

2. *As the Mouth tasteth meate, so the Eare tastes words:* Job 34. 3. Wee relish that is spoken to be wise, or foolish; to be Carnall, or Spirituall; to be sober, or light; to be in love, or hatred: wee will gesse at flattering wordes, and approve wholesome talke.

3. There is an Inward Taste of the soule, and this is two-fold. The one, a slight Taste, a generall knowledge; as to taste of a Cup, and not to drinke: *Heb. 6. 4-5.* A second is an Experimentall Taste with feeding, and nourishment after it: *Psalmie 34. 9.*

4. Section.

*Fourthly, The Mouth is the Interpreter of the Heart.*

**A**N Interpreter gives the Exposition, declares the meaning, makes things plaine: so doth the Mouth declare, and shew, what is in the Heart: *Matt. 12. 34. Out of the abundance of the Heart, the Mouth speaketh.*

Con-

Conclusions.

1. I may gesse, who be wise in Heart, and who be foolish; who be Religious, who be prophane: their Interpreter will expound to mee.

2. They doe erre grossly, who usually doe sweare, and scosse, or speake filthily, and all their delightfull talke is worldly; yet say, They have good hearts to G O D, though they make no shew. Certainly, such stuffe, as is in the ware-house, comes into the Shop: such as the Fontaine is, such are the streames.

3. If I would avoid foolish words in my mouth, I must shun foolish contrivings in my heart: if I would have my Tongue, as the Penne of a readie Writer, then My Heart must indite a good matter, Psalme 45.

1. In this, the Mouth, and Tongue are considered Jointly, Next of the Tongue singly.

First, the Tongue is the Glorie of a man.

Secondly, tis hard to bridle the Tongue.

Thirdly, Resolves concerning the Mouth, and Tongue.

First, The Tongue is the Glorie of a man.

1. Section.

SO is the Tongue called Gen. 49: 6. Psalme 16: 8. and Psalme 30: 12. The Tongue, is mans Glorie.

Heb. Ch. both  
saith Will. et or  
Gen. page 444

1. Because by it, hee speakes, so excells all other Creatures, on the Earth.

2. With the Tongue man preaches, and converts Soules, and comforts others.

3. The Tongue speakes to God by Praler, confers with men: the Tongue can sing, dispute, perswade, allure, terrifie, encourage, &c.

Conclu-

*Conclusions.*

1. I see how wicked men pervert all things, and doe abuse them; especially their Tongues. Their Glorie is their shame, their Tongues are their dishonour; their silence makes them most honourable: when they speake, they bewray their follie, Impietie, and prophanenesse; their words tend to their shame.

2. If my Tongue be my Glorie; I am to use it honourably; which is done,

1. By praising, and blessing the Name of the Lord.

2. By Confessing his Truth (made knowne to me) with boldnesse, and Reverence, especially being called to Answer, for the same.

3. To speake to men Religiously in my common Conversation, to edifie them, and doe them good, to endeavour to convince the obstinate, to Counsell the Ignorant, to Comfort the dejected, to Informe the weake, and encourage the strong in well-doing; to avoid passion, and pride, and flatterie, and discontent, in my speeches: and to speake with wisdom, and Reverence, and love, and meekenesse, and humilitie. Then shall my Tongue be my Glorie indeed.

*2. Section.**Secondly, 'Tis hard to bridle the Tongue.*

1. **B**Ecause the Heart is so corrupt, and hard to be reformed.

2. 'Tis hard to leave an old custome, as to goe against the streame, or Tide.

3. Other things be more easily tamed, as birds, beastes, Creeping things: *James 3. 7. 8.*

4. Those that set themselves to tame the Tongue, have found it hard: *David* resolved to bridle his Tongue, *Psalm 39. 1.* yet his owne words grieved him daily: *Psalm 56. 5.*

5. 'Tis



5. Tis hard to make men yeeld, where they thinke they have Possession: men doe thinke their lips bee their owne, *Psalm 12. 4.*

6. Tis hard to make men lay downe their weapons: The Tongue men esteeme their weapons: *Ier. 9. 3. Ier. 18. 18. Psalm 57. 4. Psalm 64. 3.* Their Tongues be as Swords, and their words as Arrows; tis hard to disarme them.

*Thirdly, Resolves concerning the Mouth, and Tongue.*

3. Section.

1. Quest. **V**What is meant by the Mouth of the Lord *Esaï 1. 20?*

*Ans.* Tis the Certaintie of Speech in utterance, and performance: G O D hath said it, and it shall be accomplished.

2. Quest. *What is meant by the Rod of his Mouth* *Esaï 11. 4?*

*Ans.* The mightie, and powerfull Word of G O D, smiting some, to their Conversion; others, to their destruction.

3. Quest. *What is meant by the Mouth of the brooks* *Esaï 19. 7?*

*Ans.* The Rivers, whose Bankes are as the lips of the Mouth.

4. Quest. *What is it to stop the Mouth* *Iob 3. 16?*

*Ans.* To stop the Mouth through the astonishment at Gods Workes.

5. Quest. *What is meant by the Mouth of the Earth* *Gen. 4. 11?*

*Ans.* The Earth it selfe receiving *Abels* blood: the like phrase, *Numbers 16. 32. The Earth opened her Mouth, and swallowed Corah, and the rest of his Company.*

6. Quest. *What is it to be with ones Mouth* *Exodus 4. 12?*

*Ans.*

*Ans.* To Instruct, and Teach one what to speake.

7. *Quest.* What it means by the Mouth of the Dragon?

*Ans.* 1. Power, and Authority: *Revela.* 16. 13. Also Calumniation, and Reproches to bring Christians to be hated, and contemned: *Rev.* 12. 16.

*Resolves concerning the Tongue.*

1. *Qu.* How is the Tongue set on fire of Hell *James* 3. 6?

*Ans.* When Satan hath power over mens Tongues, to make them speake wickedly.

2. *Quest.* Why was the Rich glutton tormented in his Tongue? *Luke* 16?

*Ans.* 1. He is likely to have sinned by delicacies in eating, and drinking.

2. He, it may be, had beene a Blasphemer, or scoffer, and licentious, and prophane in speech.

3. Or he had neglected Praier, and praising God: so is passive, being on Earth (herein) not active.

*Coloss.* 4. 6.

3. *Qu.* What is it to be gracious alwaies in speech?

*Ans.* Tis to speake graciously, at all times, in all places, on all occasions, in all Companies; in all the tempers, and dispositions of heart; as in anger, in mirth, in feare, in sorrow, in hope; still to maintaine gracious speech, from a gracious mind, after a gracious manner, to a gracious end: to stirre up grace, to manifest grace, to edifie them which heare us.

4. *Qu.* How may we order the Tongue aright?

*Ans.* 1. To thinke before we speake, to be more slow to speake, and to premeditate, is a sure way to speake well.

2. To speake as those, that doe acknowledge Gods presence, as well as know it.

3. To speake pertinentely, and avoid the multitude

itude of words, learne Compendiousnes to abbreviate Matters, especially before our Governours, or our servants, or our enemies, or before strangers.

4. Moderate the passions within & els there will breake out excessive speeches.

5. Bee often in Praier: then being able to speake to God, wee shall be the better fitted to speake to men.

6. Bee often examining our speeches with the circumstances of Matter, Manner, and End wee aimed at.

5. *Qu. What is an Idle word?*

*Ans.* 1. A word, that tends not to the Glorie of God, nor mans good.

2. A word, that might better have bene spared, than spoken.

3. Or a word pertaining to neither our generall Calling, or particular.

6. *Qu. What are the Causes of Idle words?*

*Ans.* 1. The Heart is vaine, which is the Fountaine of Speech.

2. Custome is as a great Commander; so tis easie.

3. Pride of wit makes men very frothie in speech.

4. Some Ingredients of Atheisme, and want of feare.

5. Idleness, and want of labour, causes Idle words.

6. Want of Praier: those that pray best, speake not Idly.

7. Want of wisdom brings fulnes of Idle talke.

7. *Qu. What be the Contraries to Idle words?*

*Ans.* 1. Words of Thankfulness, *Ephes. 5. 4.*

2. Words of Wisdom, which respect circumstances.

3. Words of Holiness, and Grace: *Ephes.*  
4. 29.

4. Speeches about our particular Callings,  
5. Propounding our Doubts to be Resolved.

8. *Qu.* Who be the most wise men of Speech?

*Ans.* 1. Those that alwaies speake of God reverently.

2. Those that speake charitably of Enemies.

3. Those that be very discreet in praising others.

4. Those that can reprove wisely, and meekely.

5. Those that keepe close to the Truth in their Speeches.

6. Those that speake sparingly in passions.

7. Those which speake pertinently to the Matter in hand.

9. *Qu.* Before whom must we be silent?

*Ans.* 1. Before Magistrates in open Courts: *Acts*  
24. 10.

2. Before our Elders: *Iob* 32. 8.

3. Before Fooles, and Praters: *Pro.* 26.

4. Before Malicious Scorners: *Matth.* 7. 6.

10. *Qu.* What is the Cure of Idle words?

*Ans.* 1. Wee must Reforme the Fountaine, the Heart.

2. Gett'a strong perswasion of Gods presence.

3. By often examining our Speeches, and repent.

4. Take some time for serious Thoughts of Judgment.

5. When we be to goe into Companie, to pray before; either solemnly, or by some circulation.

11. *Qu.* What Comfort belongs to them, which doe in some measure bridle their Tongues?

*Ans.* 1.

*Ans.* 1. There is a mightie worke wrought in them.

2. Their Religion is sound, not vaine :

*James* 1. 18. 3. Their Prayers shall bee heard : 2 *Pet.* 3.

10. 12. 4. In Gods Account they bee wise :

*Pro.* 10. 19. 5. Before men they bee valiant & manie have

conquered Cities, but not their Tongues.

6. They have comfort in redeeming the Time; they doe save their Wordes; and Time together.

7. These shall have Comfort at the Day of Judgment, above Idle Talkers : *Matthew* 12.

36.

12. *Quest.* How may I Confer with others, and speake Religiously?

*Ans.* 1. You must get Wisdome to observe the Circumstances of Time, and Place, Persons, and Matters.

2. Converse with Love; that by meeting together, you may bee bettered, not embittered.

3. By Meeknesse, you must beare with one another.

4. Be Humble in Speeches, avoiding Boasting, Obstinacie, and Contradiction.

5. Observe where you profit most, and desire that Companie which hath not puzzled you, and distracted; but edified, comforted, resolved, and encouraged you.

13. *Quest.* Who are they bee most profitable in Conference?

*Answer.* 1. The tender Conscience Christian; If hee speake but little, Thee will receive much good by his Reverend, Carefull, Godlie Speeches.

1. *Arguor.* The Experienced Christian, he can best lay open the sleights of Satan, the deceiptfulnesse of time, the beauty of holinesse; hee can best discover the vanities of the World; hee talkes not like the giddle Sectarie; nor the profane worldling; hee will speake to purpose, and himselfe receive Instruction.

2. Those which make Conscience of their particular Callings, such be unlike the Blood-hounds, that be all Eare, and Mouth; nor bee they; as Ships, with large sailes, and no ballance. Hee that labours diligently; will speake most profitably.

3. Those that be wise, humble, and zealous, their wisdom makes them speake of good things, and of good things to choose the best; their humilitie will keepe them within their Bounds, and their zeale will heate others, and quicken to Duties.

14. *Q.* What be the Enemies to godly Conference?

*Ans.* 1. Ignorance, that makes men unable to esteeme, and value good things; nor can they communicate to others, being destitute themselves in the *Theorie*.

2. Churlishnesse; a *Nabal* cannot conferre sweetly.

3. Sullenesse, which makes men as Mutes, or Statues.

4. Affectation; then men be all Tongue; no Eare.

5. Censoriousnesse; to bee as a fire lighting on the fore. These bring little honey to the hive.

6. Feasting sumptuously above our purties, or places: the bellie is filled; the soule, by Conference, not fed.

7. Discouragement; when some looke on their weaknesse, not considering tis required according to that we have. Weake performances are better than Idlenesse.



*Q. What Course should we take, to be more profitable in our Speeches, and Conferences?*

*Ans.* 1. Speake of God with Reverence, of men with Charitie.

2. Avoid three boastings: What I am, What I have done, what I will doe.

3. Strive more to doe good, than to get commendations.

4. Use private Praise well, you will speake well.

5. Reife Heavnie Discourse from Earthlie things.

6. Begin first, if others neglect; Question, if they be Superiours; let little sticks binde great ones.

*So much of the Tongue.*

*Of the Neck.*

1. Of the Situation, and place of the Neck.

2. Of the Composition of it.

3. Of the Strength of the Neck.

4. Resolves concerning the Neck.

*First, Of the place of the Neck.*

*I. Section.*

**I**T is above the Bodie, yet under the Head.

It Joines the Bodie to the Head, as the *Medulla*.

The Bodie upholds it, and it upholds the Head.

The Neck is Honourable, and Obvious, above the Bodie; yet under the Head: which puts mee in mind,

1. Of their estate, that like the *Centurion*, are under Authority, yet doe command some. These men should labour for Reverence, and Humilitie; wisdom, and circumspection.

2. The Head by the Neck (as by a *Medulla*) hath a conveyance to the Bodie; for the good of the whole:

whole: so should those which are above us, under the Prince, be a *Medium*; for the good of King, and people.

3. The Neck so unites the Head, and Bodie, that it selfe is preserved; so it is with them which doe seeke Union, and Peace; themselves fare the better for it; the common peace is their owne happinesse.

2. Section.

*Secondly, of the Composition of the Neck,*

**I**T is composed of Bones, and Sinewes: there are the Pipes, and flesh, and skinne, &c. Which puts me in mind,

That although Compositions must end in a Dissolution; yet they may be verie usefull, as a well composed Armie, Divers Simples composed for Physicall use. And if wee could compose our zeale with discretion, our passion with Reason, our Earthlie employments with Spirituall mindednes; our Desires with endeavours, our finding-out others faults, with amending of our owne, our good Duties with good Affections, and good aimes; these as Bones, and Sinewes, would make us hold up our Heads comfortably.

3. Section.

*Thirdly, Of the Strength of the Neck,*

**I**S strong, wee see, for some can beare a great burthen on their Heads.

*Conclusions.*

1. As the Neck is strong, so tis pliable; So should I be strong to beare, yet pliable to Obey, and submit, lawfully.

2. The Neck is for beautie, yet strong for service; some like of the beautie, but will none of the burthen: they

they like *Roberts* Bracelets, but not her Pitcher; they like our Gentlewomens Jewels, not the Christians burthen. Labour is an ornament, and ends in rest.

## Fourthly, Resolves concerning the Neck.

4. Section.

AS it is taken Naturally, Metaphorically, and Spiritually: First, Naturally:

1. *Quest.* Why is the Neck called *Collum*, in Latine?

*Answer.* Either for the Roundness, or because tis the *Medium*, betwene the Head, and the Bodie. There bee two parts of the Neck, the one *Cervix*, which is the part behind, which is thought to carie the marrow to the ridge-bone: The other *Gula*, which is the place, where the *esare* passeth to the Stomack.

2. *Quest.* The Neck hath motion, from whence is it?

*Ans.* From the Head, or braine; and sends downe an influence to the Bodie by sinewes.

3. *Quest.* What may wee observe in the Necks of Beasts, and Fowles?

*Ans.* Those Beasts, that have short Neckes, bee strong, as Bulles, and Beares, &c. yet some are excepted, as Dromedaries, and Camels; but for the most part, the short-necked are strong, and tis observed Fowles, that have crooked Bills, have short Neckes: as Hawkes, Eagles.

4. *Quest.* What was the Yoke on Esau his Neck, spoken of in Gen. the 27. 40. and how was it broken?

*Ans.* The Yoke was Servitude, which his Posteritie endured: 2 Sam. 8. 14, and they brake the Yoke, 2 Kings 8. 20. 22.

h

5. *Quest.*

5. *Quest. What is meant by a Yoke of Iron Dent*

*Ans.* Hard Servitude; under Heathen Governours, as wee read, *Ier. 28. 13, 14.* from which they could no more free themselves, than they could from an Iron Yoke on their Necks.

6. *Quest. What is it to harden the Neck against reprooves, Pro. 29. 1?*

*Ans.* 'Tis to be stubborn, and not to yeeld, and submit; as stubborn Oxerturne away the Neck; and yeeld not to the Yoke: such be our wild Gallants, and Romanists, and proud Sectaries: these will endure no Reproof of the Learned, Godlie, Painfull Preachers.

7. *Quest. What is it to have an Iron snew in the Neck, Esai. 48. 4.*

*Ans.* That place of *Esai.* adds to the Iron signification; they were unteachable, and impenitent; they would not bend to Instruction, nor be ashamed of their Conditions: they wanted feare before sinne, and remorse after sinne. Most usually, when the snew is Iron, there is no Humilitie to learne; and when the brow is Iron, there is no shame to repent.

8. *Quest. What is meant by Chaines to the Neck, Pro. 1. 9. and Pro. 3. 3. and Verse 22?*

*Ans.* To receive Instruction, to exercise Mercie, and Truth, to make Conscience of Dutie to God and Man, makes us honourable, and comely; and fit to come before the great Ones: as if wee had chaines of Pearles about our Necks.

9. *Quest. How may it be Interpreted, The Neck is like a Tower, Cam. 4. 4. and 7. 4.*

*Ans.* That the Christian united to Christ, his Neck is strong, that is, hee will not bow to sinne, nor become in bondage to Satan; but rather make warre against Spirituall Enemies.

*Ans. 2. 4*

*Dod on Pro.*

*Cal. on Esai.*

*Ans. worth  
Anot.*

- Of the Armes, and Shoulders.*
1. Of Gods Work in this Armes, considered.
  2. Of the usefulness of the Armes.
  3. Resolves concerning the Armes, and Shoulders.

*First, Of Gods Work in the Armes, considered.*

*I. Section.*

**T**H E Y have their fastning to the Shoulders, which is strengthened with bones, called blades; (because they bee like a sword blade) in Latine *Scapula*, coming from the Neck, to each Arme. The bones of the Soulder bee hollow within, and bending outward: The Shoulder bones have knoss (called Eies) for defence: the Shoulders have special Relation to the Neck, the Armes, and the Breast: They doe support the Neck, give strength to the Armes, and defend the Breast: and on the Shoulders Men lay burthens, tis the most able part of the Bodie to carry any great weight, or heave thing.

And Now I come to Gods Work in the Armes: First, The bones be in number thirtie, in Arme, and Hand; the Arme alone hath onely two, one from the Shoulder to the Elbow, the other to the Hand.

*Conclusion and application.*

*Conclusion.*

1. If the bones be thirtie in the Arme, and Hand as *Anatomists* affirme; then *Lazar*, stretch forth as many bones, as hee received pieces of silver, giving
2. If the Arme onely hath two bones, the most strongest actions require two things: a good Watrait; and a good Aime, and then things are done to purpose.

Secondly, the bones of the Arme are big for strength, hollow for lightness, full of marrow for moisture, strengthened with sinewes, covered with flesh, and skinned, bending, nimble, fit for action.

## 2. Section.

*Morall Instructions from the Armes, In regard of their usefulness.*

1. **A**S the Armes have relation to the Head, the Heart, and Liver, It minds mee my actions should proceed from Memorie, Prudence, and Love. From Remembrance, of what I have been taught. From Wisdom, to doe things well, circumstantially. From Love, then I shall be profitable, and accepted.
2. The Veines about the Heart, pass through my Armes, and my pulses, and shew how it goes with mee: So my Actions come from my Intentions, and Resolutions, and Purposes, and are for Manifestation.
3. If Diseases befall the Bodie, the Arme is let blood, to save the whole: To teach us a readinesse to suffer for the good of others, and in publique calamities some smart though all sinne.
4. If one strike at my Head, mine Arme will receive the blow: To teach mee loyaltie to my King: To dy to preserve him.
5. The Sinewes, and Gristles doe strengthen the Arme: To teach the strong not to despise the weak. Who art thou despiser of small things? *Zach. 4.*
6. The bones of the Arme are joyned with moisture; so they grate not one another, nor consume one another: To teach those joyned in nearest bonds a meek yeelding, and unite; so they may performe Duties comfortably together.
7. As the Arme hath three Joints, one at the Shoulder, another at the Elbow, another at the Hand: So should



should mine Actions have a three-fold Respect. First, to the Glorie of God. Secondly, the good of my neighbour. Thirdly, the salvation of mine owne Soule: I must seriously respect Duties of Pietie, Righteousness, and Sobriety.

*Resolves concerning the Shoulders, and Armes.*

3. Section.

1. *Quest.* **H**OW is the Government on Christs Shoulders, *Esa. 9. 6?*

*Answer.* He hath all Authoritie within his Church, and also without it: Tis as hee will; not as wicked men will; that things are disposed of here below.

2. *Q.* What is meant by the Arme of the Lord, *Esa. 53. 1?*

*Ans.* The power of God, in converting of Soules.

3. *Q.* What is meant by Arme of Gosh, *Ier. 17?*

*Ans.* Weake, and feeble is mans helpe without God.

4. *Q.* What bee thy burthens wee must helpe to beare, *Gal. 6?*

*Ans.* The burthen of Infirmities, and Afflictions.

5. *Q.* Why have some Rivers the name of an Arme of the Sea?

*Ans.* Because they issue from the Ocean, as the Arme from the Bodie.

6. *Q.* What is it to have the sword on the right Arme, *Zach. 13?*

*Ans.* To be deprived of power, and strength: to be like an Idole, that can doe no good, nor helpe others.

7. *Q.* What is the condition of the wicked, whose Armes are broken, *Psalme 37. 17?*

*Ans.* 1. They are deformed, like those without Armes.

2. They are in misery, as those whose Armes

be broken, though they be in a dead sleepe, and for the present feele no paine.

3. They cannot adorne themselves, nor defend themselves.

4. They are unserviceable, unfit for Dutie.

5. They may grinne, or curse; but the godly will be too hard for them, when once God breaks their Armes.

6. They will never make good Souldiers, nor good Artists. To conclude, when once God takes them in hand, they shall be like Vessels, in whom is no pleasure.

*Summary of the Armes.*

*Of the Hands.*

1. A Consideration of the Nature of the Hands.

2. Conclusions from that Consideration.

3. Of the employment of the Hands.

4. Resolves concerning the Hands.

I. Section.

*First, A Consideration of the Nature of the Hands.*

**I** Consider it singly, as I am able; as it is betwene the Arme and the fingers: 'Tis said on the upper part bee nine bones; some knottie, some hollow, some straight. The Inside hath hollownesse for receipt, and haire grow not within, as they doe on the back of the Hand. If the Hand bee stretched abroad, then 'tis *Palma*, like a tree spreading out the Branches: If the Hand bee clinched, 'tis *Pugnum*; because men clinch the fist to fight. The Hand is very sensible, and so framed, that wee can turne it this way, or that, speedily, and move one part, not another. This is the Instrument of Instruments. The most wise God hath framed

# Of the Hand

103

framed the Hand, to doe many Noble Works.

Secondly, Consideration from the Cause.

Some bones be hollow, to be some Actions, se-

2. Section.

I. **A** Some bones be hollow, to be some Actions, se-  
me some Actions that must doe To doe  
things against my Naturall Inclination; against my  
Reason, against my profit, or ease, I shall find knots  
and lets, and stops, and much adoe.

Some bones be hollow, to be some Actions, se-  
ming more than solid, more faint than reall; more  
in shew, than substance: their hollownesse is filled not  
with marrow, but with hypocrisie, deceit, and flime: tis  
good if these were taken out of my Hands, for these  
will hinder my Actions, and make them imperfect.

Some bones be straight, to be some Actions;  
these be the most perfect, that avoid defect, and ex-  
cess, and bee even according to the line, straight  
things are straightest out, and the straight line have  
both ends. Let mine Actions have a good view, a good  
aim, and good affection.

The perfect Hand is stretched out, the perfect  
Hand is stretched out, how beautiful is the one, how ter-  
rible the other? let my hands bee stretched forth to  
pray, stretched out to the poor, voluntarily: clinch-  
ed to threaten, or strike, compulsorily.

Is the Hand for nothing, but a simple Instru-  
ment for Action? let me loathe a gentile, and beggerly  
lascivious; my Hands were made for employment, hee  
that is idle in his hand, my Hand is idle in his  
dolorous with Divel.

3. Section.

I. **V** We employ our Hands to give to the poor.

3. With

3. With our Hands we doe receive things.
4. With our Hands we doe moſt workes.
5. With our Hands we fight, and warre.
6. With our Hands we feed, and cloath us.
7. With our Hands we correct offenders.
8. With the Hands we play, and recreate us.
9. With the Hands we direct by pointing, beckening.

## 4. Section.

*Fourthly, Reflexes Concerning the Hands, Naturall, and Metaphoricall.*

1. *Quest.* **VV** *HT is the right Hand moſt active, usually ſo.*

*Ans.* Because the right Hand is more hot, and dry, ſo more fit for Action: and the left hand is to give place to the right. Some men bee left-handed, but women ſeldome: All four-footed beaſts are more active with the right leg (ſome obſerve) the Elephant onely excepted.

2. *Q.* *Whoſe Hands doe ſaile of activeneſſe?*

1. Old men, whoſe Naturall heate declines.
2. Thoſe that labour, and travaile, and ſpend their vigour.
3. Thoſe whoſe blood wants paſſage for nourishment.
4. Thoſe that liſt too much, their hands wax feeble.

*Q.* *How are Hands attributed to God?*

1. *Ans.* *Metaphorically, in ſhort word ſpeech.*  
Sometime his Hand is his Purpoſe, *Aſſing.* 28.  
Sometime his Vengeance, *Judges* 2. 15.  
Sometime his Providence, *distributing.* *Pſal.* 134. 28.  
Sometime his ſpeciall Favour, *Laſe* 1. 66.  
Sometime the Gift of Propheſie, *Ezech.* 1. 3.  
Sometime extraordinarie Aſſiſtance, *1 Kings* 18. 46.

There

# Of the Fingers, and Thumbe.

65

There is G O D S Hand of Blessing, his Hand of correction, his Hand of Revenge.

4. *Q.* How many wayes be the hands lifted up?

*Ans.* The Hand, or Hands be lifted up 4 or 5.

1. In Prayer, *Psal.* 63. 4. *I lift up my hands in thy Name.*

2. In taking an Oath, *Genesis* 14. 22.

3. By smiting, so *Kain* lift up his Hand.

5. *Q.* How is the Hand stretched forth?

*Ans.* 1. By Invitation; *Proverbs* 1. 24.

2. To Comfort; *Jeremi.* 16. 7.

3. To Relieve; *Prov.* 31. 21.

4. To Direct; *1 Kings* 13. 4.

5. To give licence to speake; *Acts* 24. 10.

6. To manifest a readinesse to Answer; *Le.* 26. 1.

6. *Q.* Why doe our Magistrates burne theeves in the Hand?

*Ans.* 1. To punish their burning desire to gaine, with a burning punishment.

2. Tis done openly, though they stole secretly.

3. That others may know them by the hand.

4. That if they Repent, they may be humble for ever, when they lift up that hand in Prayer.

5. To fore-warne them of the burning to come, when shame, and burning shall be for evermore.

So much of the Hands.

I have brought my Thoughts now to my Fingers ends, and I shall be more briefe.

1. Because I want the Art of the Mathematick.

2. The Body is a heavy subject to dwell on.

3. My paper begins to call for brevity.

The Fingers, with the Thumbe.

**F**ist, are for number 10. When I looke on them, I may mind the 10. Commandments,

i

which

which I should have in my Doings, rather than in my Speculations : I have but one Tongue, to speake of the Law, two Eyes, to read it, two Eares to heare it, tenne Fingers to be doings.

2. There is Order, and Combesse; and men give severall Names, because of severall uses : The Thumbe is *Pollex* for strength, and to measure the Inch withall : the fore-finger is the Director : the middle-finger is called *impellum*, the unclaw, of some the foales-finger : the next, the Ring-finger, the least, the Ear-picker.

3. The Fingers be leane, more fit for Action ; and be lesse, after we have dined, than before, to teach us to be lesse in our selves, when we have received plentie.

4. The Fingers are fenced with Nails, which be harder than Flesh, and softer than Bones ; united to the Flesh by Sinewes, Veines, and Arteries (as tis by some affirmed) The nails have vigour from the heart, for if the heat of the heart do decay, the Nails doe wax blacke.

\* Observed in  
Sickness.

So much of the Fingers.

Of the Back.

1. Of the Strength of the Back.

2. Of the Ridge-bone.

3. Resolves concerning the Back.

### 1. Section.

First, Of the Strength of the Back. It is the strongest part of man, made fit to beare, though the lightest burthens be carried on the Head, or in the Armes ; yet when a great weight is to be borne, then it is laid upon the back. *Dorsum* is the Back, for it lieth out, somewhat bunching ; and so *Dorsum* is a hill, or bed of a garden ; yet *Dorsum* is he that carrieth on his Shoulders the Back, is the Porter for the whole Body, where the Shoulders take his sup-pick.

Con-



## Conclusions.

1. 'Tis fittest the strongest should beare: the smaller burthens came to the *Judges*: the most weightie to *Moses*, *Exodus* 17. Able Christians should resolve pecc questions of the weak and Ignorant: and let the higher Matters be caried of the Divine. The Children, and Servants can dispatch the smaller Matters in the Familie, the most weightie are reserved for the Master: as the armes, and hands can carie the lighter burthens, but the most heavie are caried by the Back.

2. The Eie sees not, when the burthen is on the back, yet the back beares his burthen as well as if it were looked upon. The Bearer must carie though the Spectators be absent: A good Lesson for Eie-servants; the Masters Eies be the winds, which move their sails: Their Cure is,

1. To looke to the Eie of God, which is upon them.
  2. To the trust is committed to them.
  3. To the account they will make at the last Day.
  4. To the great Recompence of Reward.
3. Though all have Backs that have Bodies, yet some can, and some must beare more than others. There is a Providence disposes our burthens; if our Spirituall burthens be great, he will give us the more Assistance: if small, they be the more tolerable, and lesse than others doe beare.

## Secondly, Of the Ridge-bone.

**T**He Ridge-bone begins at the nape of the Neck, and stretches neare the kidneys: tis compounded of many Jointes: the other bones are fastned to the Ridge-bone: this bone is for defence, and receive marrow from the braine. The Ridge of the Beast is not rested on; but the Beast lies on the bellie; but our bone is so framed, we lie on our Ridge-bone, and rest our selves.

2. Section.

Anat. 32. 1

So resting, we awake, and looke-up to Heaven.

1. In the way of Thankfulness for our rest.
2. We looke-up for Blessings from above.
3. We looke-up to *Christ*, our Head, in Glorie.
4. We looke-up, that *G o d* may looke downe.

1. To melt our hearts; so he looked on *Peter*.

2. To direct us; *Marke* 10. 27.

3. To Cure us; *Marke* 1. 21.

5. We looke-up with Reverence, and subiection.

6. We looke-up with hope, at last to ascend up.

Thus as we doe not lodge like Beasts: so we should looke-up, and excell them.

3. Section.

*Thirdly, Resolves Concerning the Back,*

1. *Quest. What is it to goe backward, John 6. 66?*

*Ans.* Tis to depart from *Christ*, and the good way, to *Apostatise*: as his face they that goe backward, are sure never to obtaine the prize.

2. *Q. What is meant by bowing the back, Rom. 11. 10?*

*Ans.* To be void of strength: inwardly, to be void of *Grace*, good Inclinations, will, and endeavour: Outwardly, to be void of dignitie, and honour, and to be in base servitude.

*Willet.*

*Wilson.*

3. *Q. What is it to have our finnes cast behind Gods Back, Esai 38. 17?*

*Ans.* To be as not seene; to be pardoned; to be cast into the Sea: *Micha. 7. 19.*

4. *Q. What be Gods Back-parts, Exo. 33. 23?*

*Ans.* *Moses* saw according to his capacitie, not his desire: The Back-parts we see, we perceiue God by his word, and works: Here, Face to Face, in Heaven.

1 Cor. 13. 12.

*Of the Breast.*

*A Consideration of the Breast.*

*Resolves Concerning the Breast.*

*First, A Consideration of the Breast*

1. Section.

The Breast of a man, first, is bonie for strength. 2. Tis hollow

hollow to preserve the inward parts, and that the lungs especially, may close, and open. 3. The Breast is the Noble part, the Spirits are within it, and many other of the Chief parts: there is heate, and life, and strength. 4. The Breast of a man is broad, but of a bird the Breast is sharpe. The Beast hath dugges in the wombe; but onely Man-kind, and Elephants have dugges in the Breast. 5. If other parts be pained, the Breast hath a fellow-feeling; If the Throate be grieved, or the Stomacke, or Lungs; the Breast will be fore. 6. The Breast is sensible; a little pricking, within, more troubles us, than a wound on the Arme, without.

*Secondly, Resolves Concerning the Breast.*

2. Section.

1. Quest. What leame we from the Breast, and the Shoulder given to the Priest in the Peace-offerings, *Leviticus* 7. 29. to 32?

*Ans.* 1. The Priest must have the Breast of knowledge; the Shoulder of labour.

2. The people must bring the Breast to be cleansed from corruption; the Shoulder to be directed to worke, and take paines.

3. The lifting it up, and waving the Breast:

1. In acknowledgement, it was from God.

2. Our mindes, and endeavours should be upward.

3. In publike view, our workes must be manifest.

2. Q1. What learne we from the Breast-plate, *Exo.* 28. 30?

*Ans.* 1. It was the Breast-plate of Judgment; the High-Priest put on, when he consulted with God: *Num.* 27. 21.

2. He must weare it on his Hear, or Breast, with precious-stones therein graven, signifying the nearnesse

nearness of the Church to *Christ*, and alwayes in remembrance, and enrich with Graces; *Rich, precious Graces.*

3. The Breast-plate was lost in the Captivity; *Exra. 2. 63.* After that they must keepe to the Law of *Moses, Mala. 4. 4.* and enquire there.

3. *Q.* What is that Righteousness, which is a Breast-plate, *Ephes. 6. 14.*

*Ans.* It is the Righteousness of a good Conscience, being a powerfull worke of Gods Spirit, in the Regenerate, whereby they endeavour to approve themselves to God, and Man, by performing what Gods Law requires:

1. 'Tis a worke of Gods Spirit, which quickeneth, *Rom. 6. 11.*

2. A powerfull worke: We by Nature be dead, *Ephes. 2. 1.*

3. In the Regenerate: They be borne of the Spirit, *Iohn 3. 6.*

4. They endeavour, and strive: *Acts 24. 16. Heb. 13. 18.*

5. To approve themselves to God, and Man: *Matth. 22. 37. 39.*

6. According to the Law, that shewes us our Dutie.

This Breast-plate keepes us from sinne, in safetie.

4. *Q.* Why is Faith, and Love a Breast-plate, *1 Thes. 5. 8.*

*Ans.* 1. Faith brings home *Christ*, for our Defence.

2. Love evidences, we be Gods Children: *1 Iohn 3. 14.* That prevents despaire; and Love sets us on worke to keepe Gods Commandements: so we prevent sinne, and flie presumption, and securitie, and escape wounds, as by a Breast-plate.

5. *Q.* What is meant by the Blessing of the Breasts, *Iosephs*

*Iosephs Blessing, amongst the rest, Gen. 49. 23.*

*Ans.* It was a numerous Posteritie, tenne thousands of *Ephraim*, and thousands of *Manassah*: *Deut. 33. 17.* Many Children; well nourishd Children: the contrarie is a curse, *Hosea. 9. 14.* a barren wombe, and drie Breasts.

6. Q<sup>u</sup>. What is meant by the two Breasts, *Cant. 4. 5?*

*Ans.* Breasts set out the Churches Ornaments, *Eze. 16. 7.* Thou art come to excellent Ornaments, thy Breasts are fashioned. Also they signifie Nourishment, *Esa. 66. 11.* Those without the Ministerie, are said to be without Breasts, *Cant. 8. 8.* The Breasts of the Church, be as Towers, *Cant. 8. 10.* being obvious, and strong, and large.

### Of the Bellie.

1. The Anatomists Relation of the Bellie.

2. A more plaine Observation.

3. Resolves for Edification.

First, The Anatomists Relation of the

*Bellie*.

**T**IS separated from the Breast, by the midriffe, and bounded in the foure part above, by the Dagger-like Cartilage, below by the flure bone. There be three Regions: the first, *Epigastrica*, covering the entrals, from the bulke downward: the second, *Regio umbilicalis*, void of ribs, the part where the Navell is: the third, is *Regio Hypogastrica*, from the Navell downward.

There are observed in the Bellie, five things more:

1. *Cuticula*, a tender skinn called the Sciffe skinn.

2. *Cutis*,

*Ans. worth on Cant.*

Or Towers for strength of deliverie of the word Misdal, which is a Tower, and it is a Pulpit, 8 *Nehemiah 4*

1. Section.

2. *Cutis*, the skinnē covering the out-parts.
3. *Pinguedo*, the fat betwene the skinnē, and the membrane.
4. *Membrana carnosā*, somewhat fleshie to keepe in the fat.
5. The *Membrane* pertaining to everie Muscle.

## 2. Section.

Secondly, a more plaine Observation of the Bellie.

**T**HREE Names are given to the Bellie; First, *Venter* the Bellie, or panch. Secondly, *Alvus*, for the receptacle, or hollownesse. Thirdly, *Vterus*, the Wombe; this belongs to the Female. The Bellie may be considered as containing, or as the things contained; externally, or internally: the forme, and fashion round, the Navell in the midst. If a man, be laid on his back, his armes and legs spread abroad, set a paire of great compasses on his Navell; wee shall find him round by measure, as farre to his toes, as to his fingers. The Bellie is like a Buckler, the Navell is like a Bosse. In the midst of it, the Navell is composed of sinewes, and veins: the Child in the wombe sucketh Nourishment, and draweth breath by the Navell. In the birth, the Navell breaketh, and commeth forth with the Child, and the Midwife bindeth it about foure Inches, that drying-up comes to a roundnesse.

## 3. Section.

Thirdly, Resolves Concerning the Bellie.

1. *Quest.* **H**OW was it a curse to the Serpent to creepe on his Bellie, *Gen. 3. 14*?
- Answer.* Because his creeping before was pleasant, but now is painefull. 2. Before it was comely; but now with Ignominie, *Ross. on Gen. 3.*

2. *Quest.*



2. *Quest.* What leame wee from the unlawfulness of eating that which creepes on the Bellie, *Leviticus 11. 42?*

*Answer* 1. That distinctions of Gods making must be regarded: He is the great Law-giver.

2. The Spirituall use is to decline those, which favour of earthly things.

3. *Quest.* What leame wee from *Philos 12. 14.* where the wicked have their Bellies filled with hid Treasures?

*Ans.* 1. Gods Bountie to wicked men, He fills their Bellies.

2. I am not to Judge of Gods Favour by the Bellie: For all comes alike by all sorts, (of these earthly Treasures). *Ecclesi 2. 12.*

4. *Quest.* What leame we from *Nabuchadnezzars* Image, whose Bellie was Brasse, *Dan 2. 31.*

*Answer* 1. The Bellie and Thighes signified the third Monarchie obtained by the *Greeks*, who imitated the *Persians*, compared to a Bellie, because as the meate stearth not long in the Bellie, so *Alexander* got many Kingdomes, yet enjoyed them but a short time.

2. The *Greeks* were as a Bellie, given to Drunkenness, Gluttonie, and excess, *Alexander* gave one *Protarchus* a Talent for drinking some Measure of wine, which contained each of them a Gallon, and a Pinte: but died within three Dayes, and 41 men more by excessive drinking.

5. *Q.* What leame wee from *Philippians 3. 19.* where is said of some: *Their Bellie is to their God?*

*Ans.* 1. They mind their Bellie most, and care to fill it, and live like *Epicures* a sensuall life.

2. There is a flat opposition betwene Gods Children, and worldlings. The one look for a *Saviour*, the others god is *Damnation*; The one esteeme their bodies vile; the other make their Bellie their

# 74 Of the Thighes, Legs, and Feete.

God; the one minds earthly things; the other have their conversation in Heaven.

*Summing up the Thighes, Legs, and Feete.*

1. Of the uniting of these parts together.
2. Of the bones of these parts; and of the bodie.
3. Resolves Concerning these parts.
4. How a man is a *Medium* betweene an Angell, and a Beast, with a view of other *Mediums*.

## 1. Section.

*First, Of the Uniting of these parts together; that*

**T**H *is* lower parts of mans Bodie answer to the Armes: for, as the Arme hath Shoulder, Elbow, and Hand; so the lower parts have Thighes, Shankes, and Feete.

The Thigh hath but one bone, which is the longest and greatest in the Bodie; and the Thighes are united to the Legs, and Legs to the Feete, with such admirable wisdom, that if the uniting were stiffer, we could not move; and be so active: if more limber, we should be weaker, and feebler; and unfit for burthens, and strong Actions.

## 2. Section.

*Secondly, Of the Bones of these parts; and of the whole Bodie.*

**T**H *is* Thigh-bone is onely one; and the Shankes bones two; a greater, and a lesser. The foote is divided into three parts: the bones of the feete are seven in a foote: the first called *Ossa*; the second the *Metatars*; the third the bone like a Hoofe; the fourth is the largest Bone: the other three be the wedge-like bones.

Bones

## Of the Thighs, Legs, and Feete. 79

Bones grow without some Middle Substance, three wayes: First, by a line, as the Bones in the upper Jaw, and Nose doe grow: 2. As the Bones of the Scull are united: 3. When one Bone is fastned within another, as in the Gummies.

If Bones be united by a *Medium*, tis by a Cartilage, or gristle, or a ligament, or string, which is insensible, and is not hollow.

*Thirdly, Resolves Concerning the Thighs, Legs, and Feete, in their Order.*

3. Section.

*First, Concerning the Thighs.*

1. Quest. **VV** *HT* did Abraham cause his Servant to put his hand under his Thigh, when he gave him an Oath?

Ans. 1. Some thinke, for to signify the firmesse of an Oath, because the Thighes be the Pillars of the Bodie.

2. Others thinke it was to trie the subiection of his Servant, in Obeying his Command.

3. The most likely Cause was, in a Myserie to fore-shew the *Messiah* was to come from his Loines: in this Phrase, the *Israelites* came out of Jacobs Thigh, *Gen. 46, 26.*

This kind of Oath was not usual, for the hand was lifted-up, when they did Swear, *Gen. 42, 1.* There is something in the Myserie, for the word (*Heb.*) a Thigh in Hebrew is *an Oath* in Greek, as *Gen. 24.*

2. Q. *What may we learne from Jacobs halting on his Thigh, Gen. 32, 25?*

Ans. 1. Wee are not rashly to Judge those to be wicked, who have Infirmities or deformities. 2. *Moses* was defective in Speech, 3. *Melchisedech* was lame.

I adore thee, as thou expectest the *Messiah* to come of my loines, to be faithfull to mee.

Lea Bleare-eyed, Isaac Blind, and Jacob Halted.

1. In our Temptations, and Wraſtlings with God, we have our Infirmities; *Psalm 35. 15.* Reade the Marginall Note.

3. Hee prevailed, yet went away halting. Which may teach us to be humble, after wee have done our best, and ſped never ſo well.

4. The Jewes eat not the Sinew of the Beaſt, in the right Thigh, but of the Fowles they doe; be-  
cauſe there is no hollow in the Thigh.

3. Queſt. What is that Sword Chriſt girds on his Thigh, *Psalm 45. 4?*

Anſ. 'Tis the Sword of the Spirit, *Ephes. 6. 17.* The girding on the Thigh is to make it readie, *Exodus 32.*

4. Queſt. What do the Jewes report of the Woman whoſe Thigh did rott, after ſhe had drunke the bitter water, *Numbers 5. 27?*

Anſ. 1. They ſay, being guiltie, her face looked yellow.

2. Her Eyes did ſtick out.

3. Her Bellie did ſwell.

4. Her Thigh did rott, and in the ſame houre, the Adulterer did dy.

But if ſhe were Innocent;

1. Her Countenance would look Chearefull.

2. If ſhe had any diſeaſe, it left her.

3. She ſhould Conceive Seed.

4. She ſhould have eaſier travaile, than before.

5. If ſhe had Females before, now it ſhould be a Male.

Reſolves Concerning the Legs.

1. Queſt. **VV**hat is meant by making bare the Legs, *Eſay 47. 27.*

Anſ. Their ſilverie to ſee forth by the ſilver ſtones, and their ſhame by the looſing the Locks, and making bare

bare the Legs: to pass: not onely through the Streets, but through the Floods. Now their wickedness shall be discovered, and appeare in open view, to their great dishonour.

2. *Q. What learne we from Iohn 19. 36. Not a Bone of CHRIST was broken, when those crucified with him had their Legs broken, verse 22?*

*Ans. Christ was prefigured in the Paschall Lambe, Exodus 12. 46.*

1. The Lambe was without blemish; so was Christ.

2. The Lambe must be killed, so must Christ.

3. The Postes of their Doores must be sprinkled: So our Hearts must be sprinkled with the Blood of Christ: Heb. 10. 22. 1. Pet. 1. 2.

4. The Lambe was roasted with fire: Christ he felt the heat of GODS Wrath.

5. The Lambe was to be eaten whole: so Christ had not a bone broken, when the Legs of them Crucified with him were broken.

3. *Q. What were the Creatures with Legs above their Feete, lawfull to be eaten, Levit. 11. 21. 22?*

*Ans. They were severall sorts of Locusts:*

The first are more common, and their Name, the Learned say, is from their shortness: others say they are named from their multitude: Exod. 10. 4. 5.

The second sort have their Name from a Rock, because they breede in Rorie places.

The third is called *opudax*, because hee will fight with Serpents.

The fourth is called a Grasshopper, because of his Leaping: The Marginall Note saith these were kinds of Grasshoppers to us unknowne.

4. *Q. What were the Legs of Iron and Clay, Dan 2. 33?*

*Ans. The fourth Monarchie divided into two kingdoms, Syria, and Egypt.*

1. These two Kingdomes were as Iron, to the Church.

2. They issued from the Brasen-bellie, and Thighes; from *Alexanders* Monarchie.

3. These Kingdomes were one stronger than the other; the King of the North was strongest.

4. Their Matrimoniall Leagues would not hold together, as Iron, and Clay can make no firme, lasting Coniunction.

5. Q<sup>y</sup>. What is meant by *Cant. 5. 15.* His Legs are Pillars of Marble, set upon sockets of Gold?

*Ans.* Christs goings are commended:

1. For Comliness: Pillars of Marble be long, and straight, and beautifull.

2. For strength, and stabilitie; Marble is lasting.

3. For Glorie, the Sockets be Gold; the most precious of Metals.

*Christ* comes beautifull, as one to be desired; his goings are strong, none can let his coming, nor rase out his foot-steps: his foot-steps be golden steps, he brings Glorie with him, to that people, to that soule, where he comes.

#### *Resolves Concerning the Feete.*

1. Q<sup>y</sup>. **VV** Hat may we observe from *Moses* putting-off his shoes from his Feete *Exo. 3. 5.*

*Ans.* There be three Causes of putting-off the shoes:

1. By way of Humiliation, as *David* did, *1 Sam. 15. 30.*

2. By way of Resignation, *Deut. 25. 9. Ruth 4. 7.*

3. By way of Reverence, so *Moses* put-off his shoes.



## Of the Feet.

### Divers Opinions Concerning Moses' Shoes.

1. Some thinke, to Consecrate the place : but Gods presence made it holie before.

2. Another Opinion : The shoes were made of dead Beasts skinnies : Now he must put-off the feare of Death.

3. Or to put-off the shoes, to acknowledge he is not the Head of the Church ; he resignes his right by that Action : that is another Opinion.

4. Moses must put-off his carnall Affections, when hee approches Gods Presence : this is a true Opinion. The *Leues* from the Precept, *Leuiticus* 19.

30. *Thou shalt Reuerence my Sanctuaries* : Concluded, None must come there, with shoes on his Feet.

2. *Quest.* What is meant by *Saules* going in the cave, to cover his Feet ; *1 Sam.* 24. 3.

*Ans.* To doe his easement : wee call it to utter a poynt. The Holie Bible teaches a holie Expression of things unseemely to be spoken : *Adam* *Heauy* *Gen.* 4. 1. The Title of *Psalm* 5. 6. *A Psalm* of *David*, after he had gone in to *Bath-sheba*.

3. *Quest.* What meanes wee from *Rom.* 16. 20. The God of Peace will tread Satan under your Feet.

*Ans.* 1. To encourage them against false Teachers, he promises them victorie.

2. The God of Peace will destroy him, that breaks Peace.

3. Wee must not trust to our owne strength to subdue Satan : tis God can doe it.

4. Satan shall be subdued, and kept under.

5. God did this for the Christians in that time, who suffered under the Roman Persecutors.

6. As

6. As GOD raifeth up an Adversarie to the Negligent, 1 *Kings* 11. 14. So he threatens to crush the greatest Enemy of the Diligent.

7. When Satan is subdued, then Grace flourisheth presently. The Apostle wishes the Grace of Christ, as soone as hee had spoken of Satans being troden under our Feete.

8. If Satan the Chiefest, then all other Enemies that be Inferiour, must needs be subdued.

9. Though Satan hath a Throne for a time, *Revelation* 2. 13. Yet hee must come under Foote, in a short time; hee shall be trod under Foote shortly.

10. Those which have trod on Satan, and beene victorious, should encourage us: as *Iesus* did encourage from former Experience, *Iosua* 10. 24. 25.

4. *Quest.* What is meant by *Esa* 3. 16. The Daughters of *Sion* made a tinkling with their Feete?

*Ans.* 1. They had some Bells, or Plates, that sounded.

2. whatsoever it was, it made a noise as they went.

3. Such a noise, as they would be taken notice of.

5. *Quest.* How are the Affections like the Feete, and the Feete like the Affections?

*Ans.* 1. The Affections be a part of the Soule, and the Feete be a part of the Bodie.

2. The Affections be in Motion, so be the Feete.

3. The Affections be soone cold, so be the Feete.

4. The Affections must be guided, so must the Feete.

5. The

## *How Man is a Medium, &c.*

5. The Affections goe by two, and two :  
so the Feete are in number two.

*Quest.* How doe the Affections goe by two, and two?

*Answer.* There is Joy, and Griefe : Loving, and Hating : Desiring, and Fearing : Hoping, and Despairing, &c.

6. Feete, well shod with shoes, will treade on Stones, or Thomes, yet goe on Comfortably : And Affections, well shod with Patience, will goe on Crosses, and Troubles, with Constancie.

7. When the Feete be cold, tis uncomfortable : so when the Affections be cold, tis uncomfortable.

8. Stirring, or Fire, warmes the Feete : so Duties, and the Ordinances warme the Affections.

9. A paire of little shoes will serve a paire of little Feete : so those which Affect little, a little will content them.

10. As Children doe grow Elder, so their Feete grow bigger, and stronger : So Gods Children, as they grow Elder, their Affections should grow better, and stronger.

*Fourthly, How Man is a Medium  
betweene an Angell, and a Beast,  
and of other Mediums.*

4. *Solution.*

1. THE Angell is all Spirit, the Beast is all  
Flesh : Man is a Medium, Soule and Flesh.

2. The Angell hath cleere Understanding, the Beast hath no Understanding; Man is a *Medium*, in his Knowledge above Beasts, lesse than Angels.

3. The Angels Love is Divine, the Beasts Love is sensuall; Man is a *Medium*, and by Grace, he loves Divinely, by Nature, sensually.

4. The Angell doth service willingly, the Beast by compulsion; Man is a *Medium*, by Grace hee is willing; by Nature hee is dull, and backward; and must be forced by Lawes, threatnes, corrections, &c.

5. The Angell is full of Admiration, the Beast may be frighted, but cannot Admire; Man is a *Medium*, he may be frighted, and hath Reason, so is capable of Admiration.

6. The Angell never dies, the Beast dies; Man is a *Medium*, his Bodie dies, his Soule dies not.

### Of other Mediums.

1. **T**H E R E is Earth, there is Water : Slime is a *Medium*.

2. There is Aire, there is Water : Vapours are a *Medium*.

3. There is Aire, there is Fire : Exhalations are a *Medium*.

4. There is Slime, there are Stones : the Sea-fomce a *Medium*.

5. There is a Diamond, there is Water : Crystallic a *Medium*.

## *Of other Mediums.*

6. There is Water, and Metals: Quick  
the *Medium*.

7. There are Rootes, and Stones: the Co-  
rall the *Medium*.

8. There are Animals, and Plants: the Man-  
de the *Medium*.

9. There are Fowles, and Beasts: the Ostrich  
the *Medium*.

10. There are Birds, and Creeping-things:  
the Bat the *Medium*.

11. There is Raine, and Hail: the Snow  
the *Medium*.

---

## *FINIS.*

---